श्री

सिद्धचक्र मंडल विधान

वंदित्तु सव्वसिद्धे धुवमचलमणोवमं गदिं पत्ते ।

प्रकाशक
श्री दिगंबर जैन स्वाध्यायमंदिर ट्रस्ट
सोनगढ़ ३६४२५०

શ્રી દિગંબર જૈન સ્વાધ્યાયમંદિર ટ્રસ્ટ, સોનગઢ - ૩૬૪૨૫૦

भगवानश्रीकुन्दकुन्द-कहान जैन शास्त्रमाला पुष्प–१४७

नमः श्री सिद्धेभ्यः

कविवर संतलालजी रचित

श्री सिद्धचक्र मंडल विधान

–: प्रकाशक :–

श्री दिगम्बर जैन स्वाध्यायमंदिर ट्रस्ट

सोनगढ–३६४२५०

Shri Digambar Jain Swadhyay Mandir Trust, Songadh - 364250

प्रथमावृत्ति :	११००	ई.स. १९८०
द्वितीयावृत्ति :	३५००	ई.स. १९८९
तृतीयावृत्ति :	१५००	ई.स. २००९

श्री सिद्धचक्र विधानके
※ स्थायी प्रकाशन पुरस्कर्ता ※
श्री मधुरभाई महेता हस्ते प्रवीणाबेन

यह शास्त्रका लागत मूल्य रु. ४७.५०=०० है। मुमुक्षुओंकी आर्थिक सहायतासे इस आवृत्तिकी किंमत रु. ४०=०० होती है। तथा श्री कुंदकुंद-कहान पारमार्थिक ट्रस्ट हस्ते स्व. शांतिलाल रतिलाल शाहकी ओरसे ५०% आर्थिक सहयोग प्राप्त होनेसे यह शास्त्रका विक्रय-मूल्य रु. २०=०० रखा गया है।

मूल्य : रु. २०=००

: मुद्रक :
कहान मुद्रणालय
जैन विद्यार्थी गृह कम्पाउण्ड,
सोनगढ-३६४२५० ✆ : (02846) 244081

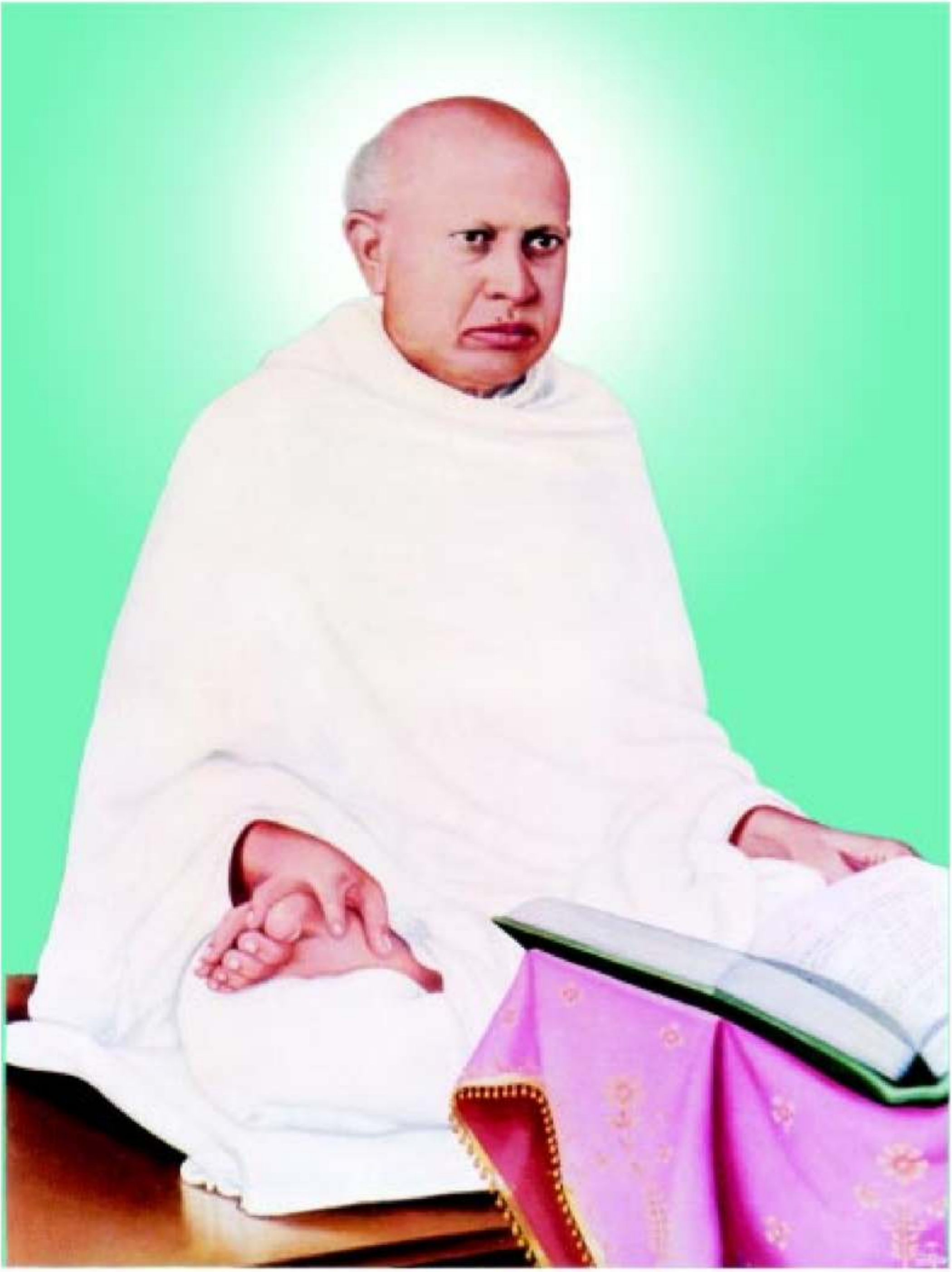

પરમ પૂજ્ય અધ્યાત્મમૂર્તિ સદ્‌ગુરુદેવ શ્રી કાનજીસ્વામી

प्रकाशकीय

अध्यात्मयुगस्रष्टा स्वात्मानुभवी सत्पुरुष पूज्य गुरुदेवश्री कानजीस्वामीने 'तीर्थंकरभगवन्तों द्वारा प्रकाशित दिगम्बर जैनधर्म ही सनातन सत्य है' ऐसा युक्ति-न्यायसे सर्वप्रकार स्पष्टरूपसे समझाया है; मार्गकी खूब छानबीन की है। द्रव्यकी स्वतन्त्रता, द्रव्य-गुण-पर्याय, उपादान-निमित्त, निश्चय-व्यवहार, आत्माका शुद्ध स्वरूप, सम्यग्दर्शन, स्वानुभूति, मोक्षमार्ग इत्यादि सब कुछ उनके परम प्रतापसे इस कालमें सत्यरूपसे बाहर आया है। इन अध्यात्मतत्त्वके रहस्योद्घाटनके साथ साथ उन्होंने वीतराग देव-शास्त्र-गुरुकी सही पहिचान देकर भी मुमुक्षु समाजके उपर अनन्त उपकार किया है। उन्हींके सत्प्रतापसे मुमुक्षु समाजमें जिनेन्द्रपूजा-भक्ति आदिकी साभिरुचि (सोल्लास) प्रवृत्ति नियमित चल रही है। स्वयं भी नियमितरूपसे जिनेन्द्रभक्तिमें उपस्थित रहते थे। उनके ही पुनीत प्रभावसे सौराष्ट्रप्रदेश दिगम्बर जिनमंदिरों एवं वीतराग जिनबिम्बोंसे भर गया।

पूज्य गुरुदेवश्री के मंगलमय व्यक्तित्व एवं उपकारोंसे जैन समाज अपरिचित नहीं हैं।

उनका जन्म आज से ९१ वर्ष पूर्व वि० सं० १९४७ में वैशाख सुदी दोज को सौराष्ट्र के उमराला गाँव में हुआ था। उन्होंने २४ वर्ष की उम्र में ही स्थानकवासी साधु पद की दीक्षा ले ली थी। वि० सं० १९७८ में उन्हें परम पूज्य आचार्य कुन्दकुन्द रचित सर्वोत्कृष्ट ग्रन्थराज समयसार मिला, जिसे पढ़ कर उनके भीतर सुषुप्त सत्य के संस्कार जागृत हो गये तथा उन्होंने उसका गहन अध्ययन किया। जिसके फलस्वरूप उनको निजज्ञायकदेवका आत्मसाक्षात्कार अर्थात् आत्मानुभवयुक्त सम्यग्दर्शन हुआ। सत्यके प्रति उनकी निष्ठा निरन्तर दृढ़ होती गई तथा वि० सं० १९९१ की चैत्र शुक्ला त्रयोदशी को उन्होंने स्वयं को दिगम्बर साधक श्रावक घोषित किया तथा प्रसिद्ध सिद्धक्षेत्र शत्रुञ्जय के समीपस्थ सोनगढ़ नामक छोटे से गाँव को अपनी साधना–भूमि बनाया।

तब से गत ४५ वर्षों तक उन्होंने प्रतिदिन प्रातः एवं दोपहर को प्रवचन तथा रात्रि को तत्त्वचर्चा के माध्यम से जैनधर्म का मर्म स्पष्ट करके हम जैसे पामर प्राणियों पर अनन्त उपकार किया है। उनके श्रीमुख से श्री समयसार, प्रवचनसार,

पञ्चास्तिकाय, नियमसार, अष्टपाहुड, परमात्मप्रकाश, योगसार, पद्मनन्दि पञ्चविंशतिका, मोक्षमार्ग–प्रकाशक, छहढाला आदि अनेक ग्रन्थों का मर्म सुनकर लाखों भव्य जीव निश्चय–व्यवहार मोक्षमार्ग का स्वरूप समझ कर आत्म- कल्याण के पथ पर लगे हैं। उनके सातिशय प्रभावना योग से न केवल सौराष्ट्र में, अपितु सारे भारत में तथा विदेशों में भी सैंकड़ों जिनबिम्बों की स्थापना हुई है तथा लाखों की संख्या में सत्–साहित्य प्रकाशित होकर घर–घर पर पहुँचा है।

स्वाध्याय के क्षेत्र में तो उनके प्रभावनायोगसे अभूतपूर्व क्रांति हुई है। सैंकड़ों स्थानों पर नियमित शास्त्र सभाएँ, तथा छोटे–छोटे बालकों के लिए पाठशालाएँ, जन साधारण में भी छ द्रव्य, नव पदार्थ, निश्चय–व्यवहार, निमित्त–उपादान, क्रमवद्धपर्याय, अनेकान्त, स्याद्वाद, भेदविज्ञान, सम्यग्दर्शन, अन्तर्बाह्य चारित्र आदि गूढ़ सैद्धान्तिक समज––यह सब पूज्य गुरुदेवश्री के प्रताप से हुई आध्यात्मिक क्रान्ति का ही सुपरिणाम है।

जब सोनगढ़ में उनके हृदय–विदारक वियोग से उत्पन्न पीड़ा को कम करने के लिये प्रशममूर्ति भगवती माता पूज्य बहिनश्री चंपाबहिनकी कृपाभीगी अनुमोदनासे श्री सिद्धचक्र विधान पूजा महोत्सव के आयोजन का निर्णय लिया गया, तब हमें इस विधान की अधिक प्रतियों की आवश्यकता महसूस हुई, ताकि विधान में सम्मिलित होने वाले हर भाई–बहन के हाथ में विधान की पुस्तक हो जिससे वह इसका मर्म समझते हुए विधान का यथार्थ लाभ ले सके। इसी उद्देश्य की पूर्ति हेतु ट्रस्ट की ओर से यह विधान प्रकाशित करने का निर्णय लिया गया है। पूज्य गुरुदेव श्री जिस शास्त्र पर प्रवचन करते थे, सभी श्रोताओं के हाथ में वह शास्त्र विद्यमान होता था, जिससे श्रोता एकाग्रतापूर्वक उनके प्रवचनों का लाभ लेते थे––जिनागम के मर्म के साथ–साथ जिनागम का स्वाध्याय करने की ऐसी अभूतपूर्व परम्परा भी हमें गुरुदेवश्री से प्राप्त हुई है। सारे देश में स्थापित सभी मुमुक्षुमण्डल सोनगढ़ द्वारा स्थापित स्वस्थ–परम्पराओं को अपनाते हैं। इस प्रसंग पर हम आशा करते हैं कि सभी मुमुक्षुमण्डल अपने यहाँ सिद्धचक्र विधान का आयोजन करें तथा उसमें सम्मिलित होने वाले प्रत्येक भाई–बहन के हाथ में विधान की पुस्तक अवश्य हो।

इस भाषा सिद्धचक्र विधान के रचयिता कवि पं० श्री सन्तलालजी हैं, जो सहारनपुर के कस्वा नकुड़ के रहनेवाले थे। इनके पिता का नाम श्री सज्जनकुमारजी

था। ये सहारनपुर के प्रतिष्ठित घराने में लाला शीलचन्दजी के वंशज थे। कविवर का जन्म सन् १८३४ में हुआ था। कवि के संस्कार प्रारंभ से ही धार्मिक थे, जो माता–पिता से विरासत में मिले थे। परिवार के सब लोग धर्म संस्कारवाले थे। आपने रुड़की कॉलेज में अध्ययन किया। आपको साहित्य से प्रेम था। सिद्धचक्र की हिन्दी पूजा न होने से आपने इसका विचार किया और प्रस्तुत रचना कर डाली। इस पूजन में जगह–जगह जो जैन सिद्धान्त सम्बन्धी विवरण आया है, उससे आपके सैद्धान्तिक ज्ञान का भी भली प्रकार परिचय मिल जाता है। आप विद्वान् थे, कवि थे और भक्त थे। मिथ्यात्व–वर्धक कई रूढ़ियों को आपने मिटाया। ५२ वर्ष की आयु में जून सन् १८८६ में आपका स्वर्गवास हो गया। आपने सिद्धचक्र मंडल विधान के अतिरिक्त भी कुछ पूजायें एवं अनेक भजन लिखे हैं।

सभी जीव पूज्य गुरुदेव श्री द्वारा प्ररूपित ज्ञायकस्वभाव के आलम्बन से शीघ्र ही सिद्धचक्र में सम्मिलित हो जाएँ, यही भावना है।

साहित्यप्रकाशन-समिति

श्री दि० जैन स्वाध्यायमन्दिर ट्रस्ट,

सोनगढ़ (सौराष्ट्र)

સહજ સિદ્ધાનંદ

प्रकाशकीय निवेदन

स्वानुभवविभूषित आत्मज्ञसंत परम पूज्य सद्गुरुदेव श्री कानजीस्वामी द्वारा जैनजगतमें अध्यात्मकी महान क्रांति हुई है; अनेकोनेक जीवोंको आत्महितकी रुचि हुई, अध्यात्म सिद्धान्तके कई पहलु अति स्पष्ट हुए—इस तरह वर्तमानमें अध्यात्मविद्याकी जो भी प्रभावना है वह सभी श्रेय पूज्य गुरुदेवश्री कानजीस्वामीका ही है।

पूज्य गुरुदेवश्रीको अध्यात्मविद्या जितना ही अपार भक्ति-प्रेम देव-शास्त्र-गुरुके प्रति था। आपके प्रतापसे ही अनेक जिनमंदिर बने, जिनबिंबोंकी स्थापना हुई और आत्मार्थीयोंमें जिनेन्द्रपूजा-भक्ति आदिकी अभिरुचि सह प्रवृत्ति नियमित चली।

आत्मसाधनाकी पवित्र तीर्थभूमि सोनगढमें परम पूज्य गुरुदेवश्री कानजीस्वामीके अनन्य भक्त प्रशममूर्ति धन्यावतार पूज्य बहिनश्री चम्पाबेनकी प्रशस्त प्रेरणा व प्रतापसे पूज्य गुरुदेवश्री द्वारा प्रकाशित देव-गुरु-धर्मके प्रति उल्लसित भक्ति-प्रेममयी अध्यात्मक्रान्ति अविरतरूपसे प्रवहित हो रही है। आपकी ही पावन प्रेरणासे सोनगढमें प्रसंगोचित्त विविध मंडलविधान होते हैं।

द्वितीय आवृत्ति समाप्त हो जानेसे इसमें जो अशुद्धियाँ थी वह सुधारकर पुनः तृतीय आवृत्तिको मुद्रित किया जा रहा है।

कहान मुद्रणालयने इसका सुंदर मुद्रण किया है, इसलिए हम उनके आभारी है।

इस प्रकाशनसे, देव-गुरु-धर्मके प्रति भक्तिवंत जीवोंका अध्यात्मजीवन खीले, इसी भावनाके साथ यह संस्करण पुनः प्रकाशित हो रहा है

पूज्य बहिनश्रीका
96वाँ जन्म-जयंती महोत्सव
दि. 7-8-2009

साहित्यप्रकाशन-समिति
श्री दि० जैन स्वाध्यायमन्दिर ट्रस्ट,
सोनगढ़ (सौराष्ट्र)

श्री सिद्धचक्र मंडल विधान

उद्देश्य एवं महत्त्व :—

जैन शास्त्रों में वर्णित अनेक पूजन विधान है उनमें सिद्धचक्र मंडल विधान का विशेष महत्त्व है, क्योंकि हमारा चरम लक्ष्य सिद्ध दशा प्रगट करना है तथा इसमें सिद्ध भगवान का विस्तृत गुणानुवाद किया गया है।

जो संसार के बन्धनों से छूट गए हैं, जिसमें अनन्त दर्शन, अनन्त ज्ञान, अनन्त सुख और अनन्त वीर्य प्रगट हो गए हैं, जो द्रव्यकर्म, भावकर्म और नोकर्म से सर्वथा रहित हो गए हैं, उन्हें सिद्ध कहते हैं। ऐसे अनन्त सिद्ध परमात्मा लोक के अग्रभाग में विराजमान हैं। सिद्धों का समुदाय ही सिद्धचक्र कहलाता है और सिद्धचक्र विधान में सिद्ध दशाका स्वरूप एवं वह प्रगट करने का विधान (उपाय) बतलाते हुए सिद्धों का गुणानुवाद किया गया है।

ज्ञानी का चरम लक्ष्य पूर्णसुख प्रगट करना है अतः उसके हृदय में पूर्ण सुखी अर्हन्त और सिद्ध परमेष्ठी तथा पूर्ण सुख के आराधक आचार्य, उपाध्याय और साधु परमेष्ठी तथा पूर्ण सुख का मार्ग बतानेवाली जिनवाणी के प्रति भक्तिभाव होना स्वाभाविक है। ज्ञानी जीव विषय–कषाय रूप अशुभ भावों में तो रहना नहीं चाहते और सिद्धों के समान पूर्ण शुद्ध भाव प्रगट करने की उनकी सामर्थ्य नहीं है, अतः सिद्ध भगवन्तों के गुणानुवाद के माध्यम से अपने लक्ष्य के प्रति सतर्क रहते हुए वे अशुभभावों से सहज ही बच जाते हैं।

सिद्धों की आराधना का सच्चा फल तो वीतराग भाव की वृद्धि होना है, क्योंकि वे स्वयं वीतराग हैं। सिद्धों का सच्चा भक्त उनसे लौकिक लाभ की चाह नहीं रखता, फिर भी पुण्यबन्ध होने से उसे लौकिक अनुकूलताएँ सहज ही प्राप्त होती हैं, परन्तु ज्ञानी की दृष्टि में उनका कोई महत्त्व नहीं है।

लौकिक अनुकूलताओं के लक्ष्य से वीतरागी देव–गुरु–धर्म की या कुदेवों की आराधना से तो पापबन्ध होता है अतः लौकिक अनुकूलताएँ भी उपलब्ध नहीं होतीं। इस सम्बन्ध में पं० टोडरमलजी मोक्षमार्ग प्रकाशक में लिखते हैं :—

''इस प्रयोजन के हेतु अरहन्तादिक की भक्ति करने से भी तीव्रकषाय होने

के कारण केवल पापबन्ध ही होता है, इसलिए अपने को इस प्रयोजन का अर्थी होना योग्य नहीं है। अरहन्तादिक की भक्ति करने से ऐसे प्रयोजन तो स्वयमेव सिद्ध होते हैं।''

अतः हमें वीतरागी देव–गुरु–शास्त्र का सही स्वरूप पहिचान कर सिद्धचक्र विधान के माध्यम से वीतराग भावों का ही पोषण करना चाहिए।

विधान करने की विधि :—

(1) जाप संकल्प

(2) मंडप शुद्धि तथा मंडपकी वेदी पर विधि अध्यक्ष भगवान विराजमान, नांदीविधान कलश स्थापन, अखंड दीप प्रदीपन

(3) धर्मध्वजारोहण

(4) आचार्य अनुज्ञा एवं इन्द्रप्रतिष्ठा

(5) जिनेन्द्र अभिषेक

(6) सिद्धचक्रविधान

(7) विधान समापन-शांतियज्ञ

यदि विधान मण्डपमें करना हो तो प्रथम मंडप शुद्धि करके विधि अध्यक्ष भगवानको विधि मंडपमें स्थापित करें।

ॐ नमोऽर्हते केवलिने परमयोगिने अनंत विशुद्ध परिणाम परिस्फुरच्छुक्लध्यानाग्निर्दग्धकर्मबीजाय प्राप्तानंतचतुष्टयाय सौम्याय शांताय मंगलाय वरदाय अष्टादश दोष रहिताय स्वाहा। ॐ णमो अरिहंताणं, णमो सिद्धाणं, णमो आइरियाणं, णमो उवज्झायाणं, णमो लोए सव्वसाहूणं, परम हंसाय परमेष्ठिने हं, सः हं हां हूं हैं हौं हः जिनाय नमः वेदिकोपरि जिनं स्थापयामि संवौषट्।

(जिनप्रतिमा विराजमान करें)

सिद्धा विशुद्धाः स्वगुणैः प्रबुद्धाः निर्धूत कर्म प्रकृति प्रसिद्धाः।
प्राप्ताप्त संपत् स्वगुणेष्टि तुष्टाश्चतेऽध्वरायार्घमहं ददामि॥

ॐ ह्रीं वेदिकोपरिविराजमान श्री जिनप्रतिमाभ्यः अर्धम्।

नांदिविधान मंगल कलश स्थापन

ॐ अद्य भगवतो महापुरुषस्य श्रीमदादिब्रह्मणो मतेऽस्मिन् मांगलिक कार्ये श्री वीर निर्वाण संवत्सरे ..... तमे ..... मासे, ... पक्षे, ... तिथौ, ... दिने जंबूद्वीपे भरतक्षेत्रे आर्यदेशे ....नगरे .....प्रतिष्ठोत्सवे .... कार्यस्य निर्विध्न समाप्त्यर्थं मण्डपभूमिशुद्ध्यूर्थ पात्रशुद्ध्यूर्थं शान्त्यर्थं पुण्याहवाचनार्थं नवरत्न-गन्ध-पुष्पाक्षतादि-बीजपूरशोभितं विघ्न निवारणार्थं मंगल कलश स्थापनं करोमि भ्वीं क्ष्वीं हं सः स्वाहा।

यह मन्त्र पढ़कर एक सफेद कलश (जलरहित)में सुपारी, हल्दी गाँठ, सरसों रखकर ऊपर श्रीफल लाल चोलसे ढक कर लच्छासे बांधकर (विनायक यन्त्रके समीप) वेदि उपर चौकी पर प्रमुख व्यक्तिसे स्थापित करावें। वहीं अखण्ड दीप स्थापित करावें।

दीपक स्थापन

(ऊपर ढक्कन काँचवाला रखें)

रुचिरदीप्तिकरं शुभदीपकं सकललोकसुखाकरमुज्ज्वलम्।
तिमिरजालहरं प्रकरं सदा किल धरामि सुमंगलकं मुदा॥

ॐ अज्ञानतिमिरहरं दीपकं स्थापयामि।

आयोजन के प्रारंभ में जिनेन्द्र भगवान की वेदी के सामने सिद्धचक्र विधान का मांडना मांड़ते हैं। मंडल के मध्य ॐ पर सिंहासन में श्री जिनेन्द्र प्रतिमा विराजमान करते हैं।

जाप्य संकल्प विधि

जप में सम्मिलित होने के लिए आवश्यक निर्देश :—

१. सिद्धचक्र मंडल विधान में अपनी शक्ति व समय का विचार कर २१ हजार, ५१ हजार, ७१ हजार व सवा लाख तक जप निम्नांकित मंत्र का किया जा सकता है।

२. जप करनेवाले व्यक्ति कम से कम गृहीत–मिथ्यात्व, लोकनिंद्य कार्य, अन्याय व अभक्ष्य के त्यागी अवश्य हों।

३. अनुष्ठान के दिनों में पूर्ण संयम से रहें।

४. रात्रि में चारों प्रकार के आहार ग्रहण नहीं करें। बाजारू भोजन न लें, बार–बार न खायें।

५. मंत्र का उच्चारण शुद्ध करें।

६. शारीरिक व मानसिक व्याधि न हो।

७. शुद्ध नये धोती–दुपट्टे पहनें।

८. जप के समय परस्पर बातें न करें।

९. जप में नियमित सम्मिलित होकर अपना संकल्प पूरा करें।

१०. जप पर्यन्त यज्ञोपवित धारण करें व उसमें दिये गये नियमों का पालन करें।

जाप्य विधि

जिस स्थान पर जप करना हो, वहाँ बीच में एक बड़ा बजौटा रख कर उस पर पुष्पों से एक नन्द्यावर्त स्वस्तिक बनावें। एक कलश में सुपारी और अक्षतों के साथ १।) सवा रुपया डाल दें। तथा बादाम, सुपारी और अक्षत डाल दें। वह कलश, बजौटा के बीचमें रक्खा जावे।

उसी बजौटा (चौकी) पर पूर्व या उत्तर की ओर एक सिंहासन पर विनायक यन्त्र विराजमान किया जावे। दीपक जलता रहे—ऐसी व्यवस्था करना चाहिये, (ताकि जप के स्थान पर अंधेरा न रहे)। दीपक के स्थान पर विजली का बल्ब भी रखा जा सकता है। मिट्टी अथवा लकड़ी के चार थपा (गोले) बनाकर उसमें पांच रंग की छोटी–छोटी ध्वजाएँ लगायें और वे थपा (गोले) बाजौटा के चारों कोनों में रख दे। जप करनेवालों का मुख दक्षिण दिशा की ओर न हो। जप का मन्त्र मुखाग्र याद न हो तो एक कागज पर लिखकर सामने रख लेना चाहिये। यन्त्र के सम्मुख पूजा के लिये अष्ट द्रव्य तथा बर्तनों का सैट जमा कर रख लेना चाहिये। रक्षासूत्र और यज्ञोपवीत भी पहले से तैयार कर लेना चाहिये।

इतनी सब तैयारी करा लेने के बाद प्रतिष्ठाचार्य जप में बैठने वाले महाशयों को अपने–अपने आसन पर खड़ाकर सर्वप्रथम नीचे लिखा मङ्गलाष्टक पढ़ें। सबके हाथ में पुष्प दे दे और 'कुर्वन्तु ते मङ्गलम्'के उच्चारणके साथ पुष्प क्षेपण करें।

मङ्गलाष्टक

श्रीमन्नम्रसुरासुरेन्द्रमुकुटप्रद्योतरत्नप्रभा–
भास्वत्पादनखेन्दवः प्रवचनाम्भोधाववस्थायिनः।
ये सर्वे जिन–सिद्ध–सूर्यनुगतास्ते पाठकाः साधवः
स्तुत्या योगिजनैश्च पञ्चगुरवः कुर्वन्तु ते मङ्गलम्॥१॥

सम्यग्दर्शनबोधवृत्तममलं रत्नत्रयं पावनं
मुक्तिश्रीनगराधिनाथजिनपत्युक्तोऽपवर्गप्रदः।
धर्मः सूक्तिसुधा व चैत्यमखिलं चैत्यालयं श्र्यालयं
प्रोक्तं च त्रिविधं चतुर्विधममी कुर्वन्तु ते मङ्गलम्॥२॥

नाभेयादिजिनाः प्रशस्तवदनाः ख्याताश्चतुर्विंशतिः
श्रीमन्तो भरतेश्वरप्रभृतयो ये चक्रिणो द्वादश।
ये विष्णु–प्रतिविष्णु–लाङ्गलधराः सप्तोत्तरा विंशति—
स्त्रैलोक्याभयदास्त्रिषष्टिपुरुषाः कुर्वन्तु ते मङ्गलम्॥३॥

ये पञ्चौषधऋद्धयः श्रुततपोवृद्धिंगताः पञ्च ये
ये चाष्टाङ्गमहानिमित्तकुशलाश्चाष्टौ वियच्चारिणः।
पञ्चज्ञानधराश्च येऽपि विपुला ये सिद्धिबुद्धीश्वराः
सप्तैते सकलार्चिता मुनिवराः कुर्वन्तु ते मङ्गलम्॥४॥

ज्योतिर्व्यन्तर–भावनामरगृहे मेरौ कुलाद्रौ स्थिताः
जम्बू–शाल्मलि–चैत्याशाखिषु तथा वक्षाररौप्याद्रिषु
इष्वाकारगिरौ च कुण्डलनगे द्वीपे च नन्दीश्वरे
शैले ये मनुजोत्तरे जिनगृहाः कुर्वन्तु ते मङ्गलम्॥५॥

कैलासो वृषभस्य निर्वृत्तिमही वीरस्य पावापुरी
चम्पा वा वसुपूज्यसज्जिनपतेः सम्मेदशैलोऽर्हताम्।
शेषाणामपि चोर्जयन्तशिखरी नेमीश्वरस्यार्हतो
निर्वाणावनयः प्रसिद्धविभवाः कुर्वन्तु ते मङ्गलम्॥६॥

जायन्ते जिन–चक्रवर्ति–बलभृद्–भोगीन्द्र–कृष्णादयो
धर्मादिव दिगङ्गनाङ्गविलसच्छश्वद्यशश्चन्दनाः।

तद्धीना नरकादियोनिषु नरा दुःखं सहन्ते ध्रुवं
स स्वर्गात्सुखरामणीयकपदं कुर्यात् सदा मङ्गलम्॥७॥

यो गर्भावतरोत्सवो भगवतां जन्माभिषेकोत्सवो
यो जातः परिनिष्क्रमेण विभवो यः केवलज्ञानभाक्।
यः कैवल्यपुरप्रवेशमहिमा सम्पादितः स्वर्गिभिः
कल्याणानि च तानि पञ्च सततं कुर्वन्तु ते मङ्गलम्॥८॥

इत्थं श्रीजिनमङ्गलाष्टकमिदं सौभाग्यसम्पत्करं
कल्याणेषु महोत्सवेषु सुधियस्तीर्थंकराणां मुखात्।
ये श्रृण्वन्ति पठन्ति तैश्च सुजनैर्धमार्थकामान्विता
लक्ष्मीराध्रियते व्यपायरहिता निर्वाणलक्ष्मीरपि॥९॥

अङ्गन्यास

मङ्गलाष्टक के बाद शरीर की रक्षा और तत्तद् दिशाओं से आने वाले विघ्नों की निवृत्ति के लिए नीचे लिखे अनुसार अङ्गन्यास करें। दोनों हाथों के अंगुष्ठ से लेकर कनिष्ठिका पर्यन्त पांचों अंगुलियों में क्रम से अरहंत, सिद्ध, आचार्य, उपाध्याय और साधु परमेष्ठी की स्थापना करें। जप में बैठने वाले महाशय सर्वप्रथम दोनों हाथों के अंगूठों को बराबरी से मिलाकर सामने करें तथा—

'ओं ह्रां णमो अरिहंताणं ह्रां अंगुष्ठाभ्यां नमः'—इस मन्त्र का उच्चारण कर शिर झुकावें। फिर दोनों हाथों की तर्जनियों (अंगूठां के पास की अंगुलियों) को बराबरी से मिलाकर सामने करें और—

'ओं ह्रीं णमो सिद्धाणं ह्रीं तर्जनीभ्यां नमः'—यह मन्त्र पढ़कर शिर झुकावें।

बीच की दोनों अंगुलियों को मिलाकर सामने करें और 'ओं ह्रूं णमो आइरीयाणं ह्रूं मध्यमाभ्यां नमः'—यह मन्त्र पढ़कर शिर झुकावें।

दोनों अनामिकाओं को सामने करें और 'ओं ह्रौं णमो उवज्झायाणं ह्रौं अनामिकाभ्यां नमः'—यह मन्त्र पढ़कर शिर झुकावें।

दोनों छिंगुरियों को मिलाकर सामने करें और 'ओं ह्रः णमो लोए सव्वसाहुणं ह्रः कनिष्ठिकाभ्यां नमः'—यह मन्त्र पढ़कर शिर झुकावें।

दोनों हथेलियों को बराबर सामने फैलाकर 'ओं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः करतलाभ्यां नमः'—यह मन्त्र पढ़कर शिर झुकावें।

दोनों करपृष्ठों को बराबर सामने फैलाकर 'ओं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः करपृष्ठाभ्यां नमः'—यह मन्त्र पढ़कर शिर झुकावें।

'ओं ह्रां णमो अरहंताणं ह्रां मम शीर्षं रक्ष रक्ष स्वाहा'—यह मन्त्र पढ़कर दाहिने हाथ से शिर का स्पर्श करें।

'ओं ह्रीं णमो सिद्धाणं ह्रीं मम वदनं रक्ष रक्ष स्वाहा'—यह मन्त्र पढ़कर मुख का स्पर्श करें।

'ओं ह्रूं णमो आइरीयाणं ह्रूं मम हृदयं रक्ष रक्ष स्वाहा'—यह मन्त्र पढ़कर हृदय का स्पर्श करें।

'ओं ह्रौं णमो उवज्झायाणं ह्रौं मम नाभिं रक्ष रक्ष स्वाहा'—यह मन्त्र पढ़कर नाभि का स्पर्श करें।

'ओं ह्रः णमो लोए सव्वसाहूणं ह्रः मम पादौ रक्ष रक्ष स्वाहा'—यह मंत्र पढ़कर पैरों का स्पर्श करें।

तदनन्तर प्रतिष्ठाचार्य—

'ओं नमोऽर्हते सर्वं रक्ष हुँ फट् स्वाहा'—यह मन्त्र पढ़कर जप करने वाले महाशयों के दाहिने मणिबन्ध (कलाई) में रक्षासूत्र बांधें। तदनन्तर निम्नोक्त श्लोक पढ़कर जप करने वाले अपने ललाट पर केशर का तिलक लगावें।

मङ्गलं भगवान् वीरो, मङ्गलं गौतमो गणी।
मङ्गलं कुन्दकुन्दाद्यो जैनधर्मोऽस्तु मङ्गलम्॥

तत्पश्चात् 'ओं नमः परमशान्ताय शान्तिकराय पवित्रीकरणायाहं रत्नत्रयस्वरूपं यज्ञोपवीतं दधामि मम गात्रं पवित्रं भवतु अर्हं नमः स्वाहा'—इस मन्त्र का सबसे उच्चारण कराकर यज्ञोपवीत धारण करायें।

'ओं ह्रां णमो अरहंताणं ह्रां पूर्वदिशात आगतविघ्नान् निवारय निवारय मां रक्ष रक्ष स्वाहा'—यह मन्त्र पढ़कर पूर्व दिशा में पुष्प अथवा पीले सरसों फेंकें।

'ओं ह्रीं णमो सिद्धाणं ह्रीं दक्षिणदिशात आगतविघ्नान् निवारय निवारय मां रक्ष रक्ष स्वाहा'—यह मन्त्र पढ़कर दक्षिण दिशा में पुष्प अथवा पीले सरसों फेंकें।

'ओं ह्रूं णमो आइरीयाणं ह्रूं पश्चिमदिशात आगतविघ्नान् निवारय निवारय मां रक्ष रक्ष स्वाहा'—यह मन्त्र पढ़कर पश्चिम दिशा में पुष्प अथवा पीले सरसों फेंकें।

'ओं ह्रौं णमो उवज्झायाणं ह्रौं उत्तरदिशात आगतविघ्नान् निवारय निवारय मां रक्ष रक्ष स्वाहा'—यह मन्त्र पढ़कर उत्तर दिशा में पुष्प अथवा पीले सरसों फेंकें।

'ओं ह्रः णमो लोए सव्वसाहूणं ह्रः सर्वदिग्भ्यः आगतविघ्नान् निवारय निवारय मां रक्ष रक्ष स्वाहा'—यह मन्त्र पढ़कर दशों दिशाओं में पुष्प या पीले सरसों फेंकें।

'ओं ह्रां णमो अरहंताणं ह्रां मां रक्ष रक्ष स्वाहा'—यह मन्त्र पढ़कर अपने शरीर का स्पर्श करें।

'ओं ह्रीं णमो सिद्धाणं ह्रीं मम वस्त्रं रक्ष रक्ष स्वाहा'—यह मन्त्र पढ़कर अपने वस्त्रों का स्पर्श करें।

'ओं ह्रूं णमो आइरीयाणं ह्रूं मम पूजाद्रव्यं रक्ष रक्ष स्वाहा'—यह मन्त्र पढ़कर पूजा की सामग्री का स्पर्श करें।

'ओं ह्रौं णमो उवज्झायाणं ह्रौं मम स्थलं रक्ष रक्ष स्वाहा'—यह मन्त्र पढ़कर अपने खड़े होने की ओर देखे।

'ओं ह्रः णमो लोए सव्वसाहूणं ह्रः सर्व जगत् रक्ष रक्ष स्वाहा'—यह मन्त्र पढ़कर चुल्लू में जल ले सब ओर फेंके।

'क्षां क्षीं क्षूं क्षौं क्षः सर्वदिशासु, ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः सर्वदिशासु ओं ह्रीं अमृते अमृतोद्भवे अमृतवर्षिणि अमृतं स्रावय सं सं ब्लीं ब्लूं ब्लूं द्रां द्रीं द्रीं द्रावय द्रावय ठः ठः ह्रीं स्वाहा'—इस मन्त्र से चुल्लू के जल को मन्त्रि कर अपने शिर पर सींचें। तदन्तर प्रतिष्ठाचार्य—

'ओं नमोर्हते सर्व रक्ष रक्ष हूं फट् स्वाहा'—इस मन्त्र से पुष्प अथवा पीले सरसों को सात बार मन्त्र पढ़कर परिचारकों के शिर पर डालें।

तत्पश्चात् 'ओं हूं फट् किरिटिं घातय घातय परविघ्नान् स्फोटय स्फोटय सहस्रखण्डान् कुरु कुरु परमुद्रां छिन्द छिन्द परमन्त्रान् भिन्द भिन्द वाः वाः हूँ फट् स्वाहा'—इस मन्त्र से पुष्प अथवा पीले सरसों को मन्त्रि कर सब दिशाओं में फेंकें।

इसके बाद जप करने वाले महाशय अपने अपने आसनों पर बैठ जावें। और यन्त्र के सामने बैठने वाला नीचे लिखे अनुसार नवदेव पूजन तथा विनायकयन्त्र की पूजा करे। पूजा के पहले यह श्लोक और मंत्र पढ़कर यन्त्रका अभिषेक कर ले।

स्नात्वा शुभाम्बरधरा, कृतयत्न योगात्
यन्त्रं निवेश्य शुचिपीठ वरेऽभिषिञ्चेत्।
ओं भूर्भुवः स्वरिह मंगल यन्त्रमेतत्
विघ्नौघवारकमहं परिषेचयामि॥

'ओं भूर्भुवः स्वरिह विघ्नौघवारकं यन्त्रं वयं परिषेचयामः'

नवदेवपूजन

अनन्तकालसंभवद् भवभ्रमणभीतितो
निवार्य संदधत् स्वयं शिवोत्तमार्यसद्मनि।
जिनेश–विश्वदर्शि–विश्वनाथ–मुख्यनामभिः
स्तुतं जिनं महामि नीरचन्दनैः फलैरहम्॥१॥

ओं ह्रीं अनन्तभवार्णवभयनिवारकानन्तगुणस्तुतायार्हते परमेष्ठिनेऽर्घ्यं निर्वपामीति०

(द्रुतविलंबित)

कर्मकाष्ठहुतभुक् स्वशक्तितः
संप्रकाश्य महनीयभानुभिः।
लोकतत्त्वमचले निजात्मनि
संस्थितं शिवमहीपतिं यजे॥२॥

ओं ह्रीं अष्टकर्मविनाशक निजात्मतत्वविभासकसिद्धपरमेष्ठिनेऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सार्थवाहमनवद्यविद्यया शिक्षणान्मुनिमहात्मनां वरम्।
मोक्षमार्गमलघुप्रकाशकं संयजे गुरुवरं परेश्वरम्॥३॥

ओं ह्रीं अनवद्यविघाविद्योतनायाचार्यपरमेष्टिनेऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

द्वादशाङ्गपरिपूर्णसत्छ्रूत यः परानुपदिशेत पाठकः।
बोधयत्यभिहितार्थसिद्धये तानुपास्य यजयामि पाठकान्॥४॥

ओं ह्रीं द्वादशाङ्गपरिपूर्णश्रुतपाठनोद्यतबुद्धिविभवोपाध्यायपरमेष्ठिनेऽर्घ्यं निर्वपामीति०

उग्रमर्घ्यतपसाभिसंस्कृतिं ध्यानतानविनिवेशितात्मकम्।
साधकं शिवरमासुखाप्तये साधुमीड्यपदलब्धयेऽर्चये॥५॥

ओं ह्रीं घोरतपोऽभिसंस्कृतध्यानस्वाध्यायनिरतसाधुपरमेष्ठिनेऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(शार्दूलविक्रीडित)

यो मिथ्यात्वमतङ्गजेषु तरुणक्षुन्नुन्नसिंहायते
एकान्तातपतापितेषु समरुत्पीयुषमेघायते।
श्वभ्राख्यप्रहिसंपतत्सु सदयं हस्तावलम्बायते
स्याद्वादध्वजमागमं तमभितः संपूजयामो वयम्॥६॥

ओं ह्रीं स्याद्वादमुद्राङ्कितपरमजिनागमायार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(शिखरिणी)

जिनेन्द्रोक्तं धर्मं सुदशयुतभेदं त्रिविधया
स्थितं सम्यक्‌रत्नत्रयलतिकयापि द्विविधया।
प्रणीतं सागारेतरचरणतो ह्येकमनघं
दयारूपं वन्दे मखभुवि समास्थापितमिमम्॥७॥

ओं ह्रीं सर्वज्ञवीतरागप्रणीतशाश्वतधर्मायार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(शार्दूलविक्रीडित)

कृत्याकृत्रिमचारुचैत्यनिलयान्नित्यं त्रिलोकींगतान्
वन्दे व्यन्तरभावनद्युतिवरान्कल्पामरावासगान्।
सद्‌गन्धाक्षतपुष्पदामचरुभिर्दीपैश्च धूपैः फलै–
र्नीराद्यैश्च यजे प्रणम्य शिरसा दुष्कर्मणां शांतये॥८॥

ओं ह्रीं कृत्याकृत्रिमत्रिलोकवर्तिश्रीजिनालयेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(अनुष्टुप)

यावन्ति जिनचैत्यानि विद्यन्ते भुवनत्रये।
तावन्ति सततं भक्त्या त्रिःपरीत्य नमाम्यहम्॥९॥

ओं ह्रीं त्रिलोकवर्तिवीतरागबिम्बेभ्योर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

विनायकयन्त्र पूजा

(अनुष्टुप)

परमेष्ठिन् मङ्गलादित्रय विघ्नविनाशने।
समागच्छ तिष्ठ तिष्ठ मम सन्निहितो भव॥१॥

ओं ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुपरमेष्ठिन् ! मङ्गल–लोकोत्तमशरणभूत ! अत्रावतरावतर संवौषट् आह्वाननम्। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणं।

(पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्)

(इन्द्रवज्रा)

स्वच्छैर्जलैस्तीर्थभवैर्जरापमृत्यूग्ररोगापनुदे पुरस्तात्।
अर्हन्मुखान्पञ्चपदान्शरण्यान्लोकोत्तमान् माङ्गलिकान्यजेऽहम्॥२॥

ओं ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुमङ्गललोकोत्तमशरणेभ्यो जलं निर्वपामीति०

सच्चन्दनैर्गन्धहृतालिवृन्दचितैर्हिमांशुप्रसरावदातैः।
अर्हन्मुखान्पञ्चपदान्शरण्यान्लोकोत्तमान् माङ्गलिकान्यजेऽहम्॥३॥

ओं ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुमङ्गललोकोत्तमशरणेभ्यश्चन्दनं निर्वपामीति०

सदक्षतैर्मौक्तिककान्तिपाट–
च्चरैःसितैर्मानसनेत्रमित्रैः।
अर्हन्मुखान् पंचपदान् शरण्यान्
लोकोत्तमान्माङ्गलिकान्यजेऽहम्॥४॥

ओं ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्याय.........अक्षतं०।

पुष्पैरनेकैरसवर्णगन्ध–
प्रभासुरैर्वासितदिग्वितानैः।
अर्हन्मुखान्पञ्चपदान् शरण्यान्
लोकोत्तमान्माङ्गलिकान्यजेऽहम्॥५॥

ओं ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्याय.......पुष्पं०।

नैवेद्यपिण्डैर्घृतशर्कराक्त–
हविष्यभागैः सुरसाभिरामैः।

अर्हन्मुखान्पञ्चपदान् शरण्यान्
लोकोत्तमान्माङ्गलिकान्यजेऽहम् ॥६॥

ओं ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्याय........नैवेद्यं० ।

आरार्तिकैरत्नसुवर्णरुक्म–
पात्रार्पितैर्ज्ञानविकासहेतोः।
अर्हन्मुखान्पञ्चपदान् शरण्यान्
लोकोत्तमान्माङ्गलिकान्यजेऽहम् ॥७॥

ओं ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्याय....दीपं० ।

आशासु यद्धूमवितानमूर्द्धं
तैर्धूपवृन्दैदहनोपसर्पैः,
अर्हन्मुखान्पञ्चपदान् शरण्यान्
लोकोत्तमान्माङ्गलिकान्यजेऽहम् ॥८॥

ओं ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्याय.......धूपं० ।

फलैरसालैर्वरदाडिमाद्यै–
हृद्घ्राणहार्यैरमलैरुदारैः,
अर्हमुखान्पञ्चपदान् शरण्यान्
लोकोत्तमान्माङ्गलिकान्यजेऽहम् ॥९॥

ओं ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्याय......फलं० ।

द्रव्याणि सर्वाणि विधाय पात्रे
ह्यनर्घ्यमर्घ्यं वितरामि भक्त्या,
भवे भवे भक्तिरुदारभावाद्
यैषां सुखायास्तु निरन्तराय॥१०॥

ओं ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्याय......अर्घ्यं० ।

अनादिसन्तानभवान् जिनेन्द्रान्
अर्हत्पदेष्टानुपदिष्टधर्मान्।
द्वेधाश्रियालिङ्गितपादपद्मान्
यजामि भक्त्या प्रकृतिप्रसक्त्यै॥११॥

ओं ह्रीं अनन्तचतुष्टयसमवसरणलक्ष्मीं विभ्रतेऽर्हत्परमेष्ठिनेऽर्घ्यं० ।

कर्माष्टनाशाच्युतभावकर्मो–
द्धतीन् निजात्मस्वविलासभूपान्।
सिद्धानन्तांस्त्रिककालमध्ये
गीतान् यजामीष्टविधिप्रसक्त्यै॥१२॥

ओं ह्रीं अष्टकर्मकाष्ठगणं भस्मीकुर्वते सिद्धपरमेष्ठिनेऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ये पञ्चधाचारपरायणानामग्रेसरा दक्षिणशिक्षिकासु।
प्रमाणनिर्णीतपदार्थसार्थानाचार्यवर्यान् परिपूजयामि॥१३॥

ओं ह्रीं पञ्चाचारपरायणाचार्यपरमेष्ठिनेऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थश्रुतं सत्यविबोधनेन द्रव्यश्रुतं ग्रन्थविदर्भणेन।
येऽध्यापयन्ति प्रवरानुभावास्तेऽध्यापका मेऽर्हणया दुहन्तु॥१४॥

ओं ह्रीं द्वादशाङ्गपठनपाठनोद्यतायोपाध्यायपरमेष्ठिनेऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

द्विधा तपोभावनया प्रवीणान् स्वकर्मभूवीध्रविखण्डनेषु।
विविक्तशय्यासनहर्म्यपीठ स्थितान् तपस्विप्रवरान् यजामि॥१५॥

ओं ह्रीं त्रयोदशप्रकारचारित्राराधकसाधुपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(आर्या)

अर्हन्मङ्गलमर्चे सुरनरविद्याधरैकपूज्यपदम्।
तोयप्रभृतिभिरर्घ्यैर्विनीतमूर्धा शिवाप्तये नित्यम्॥१६॥

ओं ह्रीं अर्हन्मङ्गलायार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ध्रौव्योत्पादविनाशनरूपाखिलवस्तुबोधनार्थकरम्।
सिद्धं मंगलमिति वा मत्वार्चे चाष्टविधवस्तुभिः॥१७॥

ओं ह्रीं सिद्धमङ्गलायार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

यद्दर्शनकृतविभवाद् रोगोपद्रवगणा मृग इव मृगेन्द्रात्।
दूरं भजन्ति देशं साधुभ्योऽर्च्यते विधिना॥१८॥

ओं ह्रीं साधुमङ्गलायार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

केवलिमुखावगतया वाण्या निर्दिष्टभेदधर्मगणम्।
मत्वा भवसिन्धुतरीं प्रयजे तन्मंगलं शुद्धयै॥१९॥

ओं ह्रीं केवलिप्रज्ञप्तधर्मायार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

लोकोत्तममथ जिनराट्पदाब्जसेवनयामितदोषविलयाय।
शक्तं मत्वा घृतजलगन्धैरर्चे समीडितं प्रभवैः॥२०॥

ओं ह्रीं अर्हल्लोकोत्तमायार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सिद्धाश्च्युतदोषमला लोकाग्रं प्राप्य शिवसुखं व्रजिताः।
उत्तमपथगा लोके तानर्चे वसुविधार्चनया॥२१॥

ओं ह्रीं सिद्धलोकोत्तमायार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

इन्द्रनरेन्द्रसुरेन्द्रैरर्चिततपसां व्रतैषिणां सुधियाम्।
उत्तममध्वानमसावर्चेऽहं सलिलगन्धमुखैः॥२२॥

ओं ह्रीं साधुलोकोत्तमायार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

रागपिशाचविमर्दनमत्र भवे धैर्यधारिणामतुलम्।
उत्तममपगतकामो वृषमर्चे शुचितरं कुसुमैः॥२३॥

ओं ह्रीं केवलिप्रज्ञप्तधर्मायार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्हच्छरणमथार्चेऽनन्तजनुष्यपि न जातु सम्प्राप्तम्।
नर्तन–गानादिविधिमुद्दिश्याष्टकर्मणां शान्त्यै॥२४॥

ओं ह्रीं अर्हच्छरणायार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

निर्व्याबाधगुणादिकप्राग्र्यं शरणं समेतचिदनन्तम्।
सिद्धानाममृतानां भूत्यै पूजेयमशुभहान्यर्थम्॥२५॥

ओं ह्रीं सिद्धशरणायार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चिदचिद्भेदं शरणं लौकिकमाप्यं प्रयोजनातीतम्।
त्यक्त्वा साधुजनानां शरणं भूत्यै यजामि परमार्थम्॥२६॥

ओं ह्रीं साधुशरणायार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

केवलिनाथमुखोद्गतधर्मः प्राणिसुखहितार्थमुद्दिष्टः।
तत्प्राप्त्यै तद्यजनं कुर्वे मखविघ्ननाशाय॥२७॥

ओं ह्रीं केवलिप्रज्ञप्तधर्मशरणायार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(वसंततिलका)

संसारदुःखहनने निपुणं जनानां
नाद्यन्तचक्रमिति सप्तदशप्रमाणम्।
संपूजये विविधभक्तिभरावनम्रः
शान्तिप्रदं भुवनमुख्यपदार्थसार्थैः॥२८॥

ओं ह्रीं अर्हदादिसप्तदशमन्त्रेभ्यः समुदायार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

(वसततिलका)

विघ्नप्रणाशनविधौ सुरमर्त्यनाथा
अग्रेसरं जिन वदन्ति भवन्तमिष्टम्।
अनाद्यनन्तयुगवर्तिनमत्र कार्ये
विघ्नौघवारणकृतेऽहमपि स्मरामि॥१॥

(भुजंगप्रयात)

गणानां मुनीनामधीशत्वतस्ते
गणेशाख्यया ये भवन्तं स्तुवन्ति।
तदा विघ्नसन्दोहशान्तिर्जनानां
करे संलुठत्यायतश्रायसानाम्॥२॥

(इन्द्रवज्रा)

कलेः प्रभावात्कलुषाशयस्य
जनेषु मिथ्यामदवासितेषु।
प्रवर्तितोऽन्यो गणराजनाम्ना
कथं स कुर्याद् भव वार्धिशोषम्॥३॥

यो दृक् सुधातोषितभव्यजीवो
यो ज्ञानपीयूषपयोधितुल्यः।
यो वृत्तदूरिकृतपापपुञ्ज
स एव मान्यो गणराज नाम्ना॥४॥

यतस्त्वमेवासि विनायको मे
दृष्टेष्टयोगादविरुद्धवाचः।
त्वन्नाममात्रेण पराभवन्ति
विघ्नारयस्तर्हि किमत्र चित्रम्॥5॥

(मालिनी)

जय जय जिनराज त्वद्गुणान्को व्यनक्ति
यदि सुरगुरुरिन्द्रः कोटिवर्षप्रमाणम्।
वदितुमभिलषेद्वा पारमाप्नोति नो चेत्
कथमिव हि मनुष्यः स्वल्पबुद्धया समेतः॥६॥

इति अर्हदादिसप्तदशमन्त्रेभ्योऽर्घ्यं०......

श्रियं बुद्धिमनाकुल्यं धर्मप्रीतिविवर्धनम्।
जिनधर्मे स्थितिर्भूयाच्छ्रेयो मे दिशतु त्वरा॥७॥

इति पुष्पाञ्जलिः।

संकल्प

पूजा के बाद प्रतिष्ठाचार्य जप करने वालों के हाथ में कुछ फल, अक्षत, चन्दन तथा पुष्प देकर अथवा कुछ न हो तो जल देकर निम्नलिखित संकल्प पढ़वावें—

'ओम् जम्बूद्वीपे भरतक्षेत्रे आर्यखण्डे........देशे.........प्रान्ते........ नगरे........ऋतौ.........मासे..........पक्षे.........तिथौ.......सम्वत्सरे..... जिनमन्दिरे........कार्यस्य निर्विघ्नसमाप्त्यर्थं.......इति मन्त्रस्य......इति प्रमितस्य जापस्य संकल्पं कुर्मः, निर्विघ्नं समाप्तिर्भवतु अर्हं नमः स्वाहा'।

उक्त मन्त्र पढ़कर हाथ में लिया हुआ सामान अथवा जल अपने सामने चढ़ा दें।

प्रतिष्ठाचार्य सबके मुख से मन्त्र का उच्चारण सुनकर यदि अशुद्ध हो तो शुद्ध करा दें। जप करनेवाले ९ वार णमोकार मन्त्र पढ़कर निश्चित मन्त्र का जाप शुरु कर दें।

जाप के मन्त्र

(१) 'ओं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः अ सि आ उ सा सर्वशान्तिं कुरु कुरु स्वाहा'।

(२) 'ओं ह्रीं अर्हं अ सि आ उ सा सर्वशान्तिं कुरु कुरु स्वाहा'।

मंङ्गलध्वजस्थापन विधि

यदि समारोहका मण्डप विशाल प्राङ्गणमें बनाया गया है तो उसके प्रवेशद्वारके सामने तीन कटनीकी एक पीठिका बनाकर उस पर मङ्गल ध्वजा स्थापित करना चाहिए। उसकी संक्षिप्त विधि इस प्रकार है। पीठिका का निर्माण पहेले करा लेना चाहिए। प्रतिष्ठाचार्य, संकल्पित इन्द्रोंको साथ ले तथा एक थाली में नवनिर्मित जैनध्वज, पुष्पमाला, रक्षासूत्र, हल्दी, रोली, पीले सरसों, जल का कलश तथा कुछ अष्ट द्रव्य लेकर पीठिकाके पास जावे। सर्वप्रथम मङ्गल पञ्चक या मङ्गलाष्टक पढ़कर निम्नलिखित मंत्र द्वारा दिग्बन्धन करे।

'ओं हूं क्षूं फट् किरिटिं किरिटिं घातय घातय परविघ्नान् स्फोटय स्फोटय सहस्रखण्डान् कुरु कुरु परमुद्रां छिन्द छिन्द परमन्त्रान् भिन्द भिन्द वाः वाः हूं फट् स्वाहा।

यह मन्त्र पढ़कर पीले सरसों दशों दिशाओंमें क्षेपे। तदनन्तर सिद्धभक्तिका पाठ कर (Page No 41) स्वयं और इन्द्रोंसे नौ बार णमोकार मन्त्रका जाप करे, करावे। इन्द्रोंके हाथमें रक्षासूत्र बाँधे। पञ्च नमस्कार मन्त्र तथा 'एसो पंच णमोयारो—' बोलकर पात्रों-इन्द्रों आदि पर पुष्प या पीले सरसों छोड़े। विनायक सिद्धयंत्र पूजा करे, (पेज नं.-१५) पश्चात् पीठिकाकी शुद्धि निम्नलिखित मन्त्रसे करे।

ओं भो वायुकुमाराय सर्वविघ्न प्रणाशिने।
महीं पूतां कुरु स्वाहा सुगन्ध-मृदुनात्मना॥

ओं वायुकुमाराय हूं फट् स्वाहा।

वस्त्रसे पीठिकाको साफ करे। पश्चात्

तेषां सम्बोधनायात्र तेषामाख्यायनाय च।
प्रसिञ्चाम्यमृतेनेमां भूमिं सम्मार्जयाम्यहम्॥

'ओं ह्रीं मेघकुमार धरां प्रक्षालय प्रक्षालय अं हं सं तं पं झं यं क्ष्वीं क्षः भूः फट स्वाहा'।

यह मन्त्र पढ़कर पीठिका पर जल की छींटे देवे और रोली तथा हल्दीसे पीठिकाको अलंकृत करे। पश्चात्

श्रीमज्जिनस्य जगदीश्वरता ध्वजस्य मीनध्वजादि-रिपुजाल-जयध्वजस्य।
तन्यासदर्शनजनागमनध्वजस्य चारोपणं विधिवदाविदधे ध्वजस्य॥

यह बोलकर पीठिका पर पुष्प छोड़े। पश्चात् निम्न श्लोक और मन्त्र बोलकर ध्वजडण्ड एवं ध्वजाकी जलसे शुद्धि करे।

ज्ञानशक्तिमयीं मत्वा ध्वजदण्डाग्रचूलिकाम्।
अनादिसिद्धमन्त्रेण स्नपनं ते करोम्यहम्॥

ओं ह्रीं अर्हं णमो अरिहंताणं, णमो सिद्धाणं, णमो आयरियाणं, णमो उवज्झायणं, णमो लोए सव्व साहूणं ह्रीं क्लीं श्रीं सर्वशान्ति कुरु कुरु स्वाहा।

पश्चात् निम्नलिखित श्लोक बोलकर नव देवताओंके लिए अर्घ देवे । ध्वजदंड पर स्वस्तिक करें तथा तीन प्रदक्षिणा करें।

(आर्या)

पञ्चपरमेष्ठिनस्ते मङ्गललोकोत्तमाश्च शरणानि।
धर्मोऽपि कर्णिकायां समर्चिताः सन्तु नः सुखदाः॥

ओं ह्रीं अर्हदादि मङ्गललोकोत्तमशरण्यभूतेभ्यो नव देवेभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा। पश्चात्

रत्नत्रयात्मकतयाभिमतेऽत्र दण्डे लोकत्रय-प्रकृत-केवल-बोधरूपम्।
संकल्प पूजितमिदं ध्वजमर्च्य लग्ने स्वारोपयामि सति मङ्गलवाद्यघोषे॥

ओं णमो अरिहंताणं स्वस्ति भद्रं भवतु सर्वलोकशान्तिर्भवतु स्वाहा।

यह पढ़कर ध्वजदंड पर ध्वजा लगावे। वाद्यध्वनि तथा जैनधर्मकी जय जयकार करे। (ध्वजा फहराए)

स जयतु जिनधर्मो यावदाचन्द्र-तारे
व्रत-नियम-तपोभिर्वर्धतां साधुसंघः।
अहरहरभिवृद्धिं यान्ति चैत्यालयास्ते
तदधिकृतजनानां क्षेममारोग्यमस्तु॥

यह पढ़कर ध्वजा पर पुष्प क्षेपण करे ।

ध्वजा फहरानेका फल

मुक्ते प्राची गते केतौ सर्वकामानवाप्नुयात्।
उत्तराशांगते तस्मिन् स्वस्यारोग्यं च सम्पदः॥
यदि पश्चिमतो याति वायव्ये च दिशाश्रये।
ऐशान्ये वा ततो वृष्टिः कुर्यात् केतुः शुभानि सः॥
अन्यस्मिन् दिग्विभागे तु गते केतौ मरुद्वशात्।
शान्तिकं तत्र कर्तव्यं दान-पूजा-विधानतः॥

इन्द्र प्रतिष्ठा

इन्द्रों को निर्देश—

(१) नियमित रूप से विधान में अन्त तक सम्मिलित रहें।

(२) स्वस्थ हों।

(३) विकलांग न हो।

(४) हीन आचरण न हो।

(५) विधान के अन्त तक संयम से रहें।

(६) गृहस्थोचित शुद्ध भोजन करें।

(७) विधान पर्यन्त व्यापार की चिंता से मुक्त रहें।

यदि इनकी पत्नी इन्द्राणी बनना चाहती है तो उसमें भी उक्त विशेषताएँ होनी आवश्यक हैं। साथ ही छह माह से अधिक गर्भवती न हो। अधिक छोटे बच्चे वाली न हो, अन्यथा विधि–विधान में आकुलता हो सकती है। इन्द्र–इन्द्राणियों को उत्तम पीत वस्त्र धारण करावें, मुकुट बाँध तथा निम्नलिखित मन्त्र द्वारा रक्षासूत्र बाँधे—

'ओं नमोऽर्हते सर्वं रक्ष रक्ष हूँ फट् स्वाहा'।

फिर निम्नलिखित मन्त्र द्वारा अमृतस्नान करावें।

'ओम् अमृते अमृतोद्भवे अमृतवर्षिणि अमृतं द्रावय द्रावय सं सं क्लीं क्लीं ब्लूं ब्लूं द्रां द्रीं द्रीं द्रावय द्रावय हं सं क्ष्वीं क्ष्वीं हं सः स्वाहा।'

(इस मंत्रको पढ़कर प्रतिष्ठाचार्य इन्द्र–इन्द्राणियोंपर जल के छींटे डाले।)

तदनन्तर चन्दन, मुकुट, माला, केयूर, हार, कुण्डल आदि उपलब्ध आभूषणों को एक थाली में रखकर मण्डल के सामने रखे और प्रतिष्ठाचार्य निम्नलिखित मन्त्र बोलकर उन पर पुष्प तथा पीले सरसों डाले—

'ओं ह्रां णमो अरहंताणं ओं ह्रीं णमो सिद्धाणं ओं ह्रूँ णमो आइरीयाणं ओं ह्रौं णमो उवज्झायाणं ओं ह्रः णमो लोए सव्वसाहूणं इन्द्रइन्द्राण्योराभूषणानि पवित्राणि कुरु कुरु स्वाहा'।

उक्त मन्त्र से शुद्ध किये हुए चन्दन आदि को क्रम से निम्नलिखित मन्त्र बुलवा कर धारण करावे—

पात्रेऽर्पितं चन्दनमौषधीशं शुभ्रं सुगन्धाहृतचञ्चरीकम्।
स्थाने नवाङ्के तिलकाय चर्च्यं न केवलं देहविकारहेतोः॥

ओं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः मम सर्वाङ्गशुद्धिं कुरु कुरु स्वाहा'।

यह श्लोक और मन्त्र बोलकर ललाट, मस्तक पर तिलक लगावें।

जिनांघ्रिभूमिस्फुरितां स्त्रजं मे स्वयंवरं यज्ञविधानपत्नी।
करोतु यत्नादचलत्वहेतोरितीव मालामुररीकरोमि॥

(यह पढ़कर माला पहिनावें)

धौतान्तरीयं विधुकान्तिसूत्रैः सद्ग्रन्थितं धौतनवीनशुद्धम्।
नग्नत्वलब्धिर्न भवेच्च यावत संधार्यते भूषणमुरुभूम्याः॥

(यह पढ़कर अधोवस्त्र का स्पर्श करावें)

संव्यानमञ्चद्दशया विभान्तमखण्डधौताभिनवं मृदुत्वम्।
संधार्यते पीत–सितांशुवर्णमंशोपरिष्टाद्धृतमूषणाङ्कम्॥

(यह पढ़कर दुपट्टा का स्पर्श करावें)

शीर्षण्यशुम्भन्मुकुटं त्रिलोकीहर्षात्तराज्यस्य च पट्टबन्धम्।
दधामि पापोर्मिकुलप्रहन्तृ रत्नाढ्यमालाभिरुदञ्चिताङ्गम्॥

(यह पढ़कर मुकुट बंधवावें)

ग्रैवेयकं मौक्तिकदामधामविराजितं स्वर्णनिबद्धयुक्तम्।
दधेऽध्वरापूर्णविसर्पणेच्छुर्महाधनाभोगनिरूपणाङ्कम्॥

(यह पढ़कर कण्ठ में कण्ठाभरण पहिनावें)

मुक्तावलीगोस्तनचन्द्रमालाविभूषणान्युत्तमनाकभाजाम्।
यथार्हसंसर्गगतानि यज्ञलक्ष्मीसमालिङ्गनकृद् दधेऽहम्॥

(यह पढ़कर हार धारण करावें)

एकत्र भास्वानपरत्र सोमः सेवां विधातुं जिनपस्य भक्त्या।
रूपं परावृत्य च कुण्डलस्य मिषादवाप्ते इव कुण्डले द्वे॥

(यह पढ़कर कानों में कर्णाभरण धारण करावें)

भुजासु केयूरमपास्तदुष्टवीर्यस्य सम्यक् जयकृद् ध्वजाङ्कम्।
दधे निधीनां नवकैश्च रत्नैर्विमण्डितं सद्ग्रथितं सुवर्णे॥

(यह पढ़कर केयूर–बाजूबंद धारण करावें)

यज्ञार्थमेवं सृजतादिचक्रेश्वरेण चिह्नं विधिभूषणानाम्।
यज्ञोपवीतं विततं हि रत्नत्रयस्य मार्गं विदधाम्यतोऽहम्॥

(यह पढ़कर यज्ञोपवीत पहिनावें)

अन्यैश्च दीक्षां यजनस्य गाढं कुर्वद्भिरिष्टैः कटिसूत्रमुख्यैः।
संभूषणैर्भूषयतां शरीरं जिनेन्द्रपूजा सुखदा घटेत॥

(यह पढ़कर कटिसूत्र धारण करावें)

विधेर्विधातुर्यजनोत्सवेऽहं गेहादिमूर्च्छामपनोदयामि।
अनन्यचेताः कृतिमादधामि स्वर्गादिलक्ष्मीमपि हापयामि॥

(यह पढ़कर घर गृहस्थी के कार्यों से उत्सव पर्यन्त निवृत्त रहने की प्रतिज्ञा करावें)।

जिनेन्द्र भगवान् का अभिषेक विशेष समारोह के साथ किया जाना चाहिये।

माघनन्दिमुनिकृत–अभिषेक पाठ

श्रीमन्नतामरशिरस्तटरत्नदीप्ति–
तोयावभासिचरणाम्बुजयुग्ममीशम्।
अर्हन्तमुन्नतपदप्रदमाभिनम्य
त्वन्मूर्तिषूद्यदभिषेकविधिं करिष्ये॥१॥

अथ पौर्वाह्णिकदेववन्दनायां पूर्वाचार्यानुक्रमेण सकलकर्मक्षयार्थं भावपूजास्तववन्दनासमेतं श्रीपञ्चमहागुरुभक्तिकायोत्सर्गं करोम्यहम्।

(यहाँ पर नौ बार णमोकार मन्त्र पढ़ें)

याः कृत्रिमास्तदितराः प्रतिमा जिनस्य
संस्नापयन्ति पुरुहूतमुखादयस्ताः।
सद्भावलब्धिसमयादिनिमित्तयोगा–
त्तत्रैवमुज्ज्वलधिया कुसुमं क्षिपामि॥२॥

जन्मोत्सवादिसमयेषु यदीयकीर्ति
सेन्द्राः सुराप्तमदवारणगाः स्तुवन्ति।
तस्याग्रतो जिनपतेः परया विशुद्ध्या
पुष्पाञ्जलिं मलयजातमुपाक्षिपेऽहम्॥३॥

(यह पढ़कर पुष्पाञ्जलि क्षेपण करके अभिषेक की प्रतिज्ञा करें)

श्रीपीठक्लृप्ते विशदाक्षतौघैः श्रीप्रस्तरे पूर्णशशाङ्ककल्पे।
श्रीवर्तके चन्द्रमसीति वार्तां सत्यापयन्तीं श्रियमालिखामि॥४॥

ओं ह्रीं श्रीं अर्हं श्रीलेखनं करोमि। (यह पढ़कर अभिषेक की थाली में केशर से श्री लिखें)

कनकाद्रिनिभं कम्रं पावनं पुण्यकारणम्।
स्थापयामि परं पीठं जिनस्नपनाय भक्तितः॥5॥

ओं ह्रीं श्रीपीठस्थापनं करोमि। (यह पढ़कर सिंहासन स्थापित करें)

भृङ्गारचामरसुदर्पणपीठकुम्भ–
तालध्वजातपनिवारकभूषिताग्रे।
वर्धस्व नन्द जय पाठपदावलीभिः
सिंहासने जिनभवन्तमहं श्रयामि॥६॥

वृषभादिसुवीरान्तान् जन्माप्तौ जिष्णुचर्चितान्।
स्थापयाम्यभिषेकाय भक्त्या पीठे महोत्सवम्॥७॥

ओं ह्रीं श्रीधर्मतीर्थाधिनाथ ! भगवन्निह पाण्डुकशिलापीठे सिंहासने तिष्ठ तिष्ठ।

(यह पढ़कर प्रतिमा विराजमान करें)

श्रीतीर्थकृत्स्नपनवर्यविधौ सुरेन्द्रः
क्षीराब्धिवारिभिरपूरयदर्थकुम्भान्।
तांस्तादृशानिव विभाव्य यथार्हणीयान्
संस्थापये कुसुमचन्दनभूषिताग्रे॥८॥

शातकुम्भीयकुम्भौघान् क्षीराब्धेस्तोयपूरितान्।
स्थापयामि जिनस्नानचन्दनादिसुचर्चितान्॥९॥

ओं ह्री चतुःकोणेषु चतुःकलशस्थापनं करोमि।

(यह पढ़कर चार कोनों में चार कलश रखें)

आनन्दनिर्भरसुरप्रमदादिगानै–
र्वादित्रपूरजयशब्दकलप्रशस्तैः।
उद्गीयमानजगतीपतिकीर्तिमेनां
पीठस्थलीं वसुविधार्चनयोल्लसामि॥१०॥

ओं ह्रीं स्नपनपीठस्थिताय जिनायार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(यह पढ़कर अर्घ चढ़ावें, वादित्र, नाद तथा जय–जय शब्द का उच्चारण करें)

कर्मप्रबन्धनिगडैरपि हीनताप्तं
ज्ञात्वापि भक्तिवशतः परमादिदेवम्।
त्वां स्वीयकल्मषगणोन्मथनाय देव
शुद्धोदकैरभिनयामि नयार्थतत्त्वम्॥११॥

ओं ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं वं मं हं सं तं पं वं वं हं सं सं तं तं पं पं झं झं झ्वीं झ्वीं क्ष्वीं क्ष्वीं द्रां द्रां द्रीं द्रीं द्रावय द्रावय नमोऽर्हते भगवते श्रीमते पवित्रतरजलेन जिनमभिषेचयामि स्वाहा।

(यह पढ़कर अभिषेक करें)

तीर्थोत्तमभवैर्नीरैः क्षीरवारिधिरूपकैः।
स्नपयामि जन्माप्तान् जिनान् सर्वार्थसिद्धिदान्॥१२॥

ओं ह्रीं श्री वृषभादिवीरान्तान् जलेन स्नपयामीति स्वाहा।

(यह पढ़ते हुए कलश से १०८ धारा छोड़ें)

सकलभुवननाथं तं जिनेन्द्रं सुरेन्द्रै–
रभिषवविधिमाप्तं स्नातकं स्नापयामः।
यदभिषवनवारां विन्दुरेकोऽपि नृणां
प्रभवति विदधातुं भुक्तिसन्मुक्तिलक्ष्मीम्॥१३॥

ओं ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं वं मं हं सं तं पं वं वं मं मं हं हं सं सं तं तं पं पं झं झं झ्वीं झ्वीं क्ष्वीं क्ष्वीं द्रां द्रां द्रीं द्रीं हं झं झ्वीं झ्वीं हं सः झं वं ह्रः यः सः क्षां क्षीं क्षूं क्षें क्षैं क्षों क्षौं क्षं क्षः क्ष्वीं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रें ह्रैं: ह्रौं ह्रं ह्रः ह्रीं द्रां द्रीं नमोऽर्हते भगवते श्रीमते ठः ठः इति वृहच्छान्तिमन्त्रेणाभिषेकं करोमि।

(यह पढ़कर कोनों में रखे हुए चार कलशों से अभिषेक करें)

पानीयचन्दनसदक्षतपुष्पपुञ्ज–
नैवेद्यदीपकसुधूपफलव्रजेन।
कर्माष्टकक्रथनवीरमनन्तशक्तिं
संपूजयामि महसा महसां निधानम्॥१४॥

ओं ह्रीं अभिषेकान्ते वृषभादिवीरान्तेभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

(यह पढ़कर अर्घ चढ़ावें)

हे तीर्थपा निजयशोधवलीकृताशाः
सिद्धौषधाश्च भवदुःखमहागदानाम्।
सद्द्रव्यहृज्जनितपङ्कबन्धकल्पा
यूयं जिनाः सततशान्तिकरा भवन्तु॥१५॥

(यह पढ़कर शान्ति के लिये पुष्पाञ्जलि छोड़ें)

नत्वा मुहुर्निजकरैरमृतोपमेयैः
स्वच्छैर्जिनेन्द्र तव चन्द्रकरावदातैः।
शुद्धांशुकेन विमलेन नितान्तरम्ये
देहे स्थितान् जलकणान्परिमार्जयामि॥१६॥

ओं अमलांशुकेन जिनबिम्बमार्जनं करोमि

(यह पढ़कर प्रतिमाजी को शुद्ध और स्वच्छ वस्त्र से पोंछें)

स्नानं विधाय भवतोऽष्टसहस्रनाम्ना–
मुच्चारणेन मनसो वचसो विशुद्धिम्।
जिघृक्षुरिष्टिमिन तेऽष्टतयीं विधातुं।
सिंहासने विधिवदत्र निवेशयामि॥१७॥

(यह पढ़कर प्रतिमाको सिंहासन पर विराजमान करें)

जलगन्धाक्षतैः पुष्पैश्चरुदीपसुधूपकैः।
फलैरर्घैर्जिनमर्चे जन्मदुःखापहानये॥१८॥

ओं ह्रीं पीठस्थिताय जिनायार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(यह पढ़कर अर्घ चढ़ावें)

नत्वा परीत्य निजनेत्रललाटयोश्च
व्यात्युक्षणेन हरतादघसंचयं मे।
शुद्धोदकं जिनपते तव पादयोगाद्
भूयाद् भवातपहरं धृतमादरेण॥१९॥

मुक्तिश्रीवनिताकरोदकमिदं पुण्याङ्कुरोत्पादकं
नागेन्द्रत्रिदशेन्द्रचक्रपदवीराज्याभिषेकोदकम्।
सम्यग्ज्ञानचरित्रदर्शनलतासंवृद्धिसंपादकं
कीर्तिश्रीजयसाधकं तव जिन स्नानस्य गन्धोदकम्॥२०॥

(यह पढ़कर गन्धोदक शिर पर लगावें)

इमे नेत्रे जातेसुकृतजलसिक्ते सफलिते।
ममेदं मानुष्यं कृतिजनगणादेयमभवत्।
मदीयाद् भल्लाटादशुभकर्माटनमभूत्।
सदेदृक् पुण्यार्हन् मम भवतु ते पूजनविधौ॥२१॥

(यह पढ़कर पुष्पाञ्जलि क्षेपण करें)

अभिषेक के बाद विनयपाठ बोलें और उसके बाद सामूहिक रूपसे नित्यपूजा करें, पश्चात् विधान प्रारंभ करें।

विधान समापन विधि

मण्डप में वेदी के सन्मुख चौकोर, गोल और त्रिकोण ऐसे थाली में चन्दन से कुंड बनावें। समापन विधि में बैठने वालों की संख्या अधिक हो तो अलग से थाली रख लेना चाहिये। प्रारम्भ में सब लोग अपने स्थान पर खड़े होकर मङ्गलाष्टक (पेज नं. - ९) पढ़ते हुए थाली पर पुष्प क्षेपण करें।

तदनन्तर—

'ओं ह्रीं क्ष्वीं भूः स्वाहा'—यह मन्त्र पढ़कर कुंडभूमि में पुष्प क्षेपण करें।

'ओं ह्रीं मेघकुमार धरां प्रक्षालय प्रक्षालय अं हं सं तं पं स्वं झं यं क्षः फट् स्वाहा'—यह मन्त्र पढ़कर कुंडभूमि पर जल सींचें।

'ओं ह्रीं अग्निकुमाराय ह्म्ल्व्र्यूं ज्वल ज्वल तेजः पतये अमिततेजसे स्वाहा'—यह मंत्र पढ़कर कपूर जलाकर कुंडभूमि को संतप्त करें।

'ओं ह्रीं अर्हं क्षं वं वं श्री पीठस्थापनं करोमीति स्वाहा'—यह पढ़कर पश्चिम में पीठ स्थापन करें।

'ओं ह्रीं श्री क्लीं ऐं अर्हं जगतां सर्वशान्तिं कुर्वन्तु श्रीपीठयन्त्रस्थापनं करोमीति स्वाहा—यह पढ़कर पीठ पर विनायक यन्त्र विराजमान करें।

तदनन्तर—नीचे लिखे मन्त्रों से यन्त्र की पूजा करें—अर्घ चढ़ावें।

ओं ह्रीं अर्हं नमः परमेष्ठिभ्यः स्वाहा।

ओं ह्रीं अर्हं नमः परमात्मभ्यः स्वाहा।

ओं ह्रीं अर्हं नमोऽनादिनिधनेभ्यः स्वाहा।

ओं ह्रीं अर्हं नमो नृसुरासुरपूजितेभ्यः स्वाहा।

ओं ह्रीं अर्हं नमोऽनन्तवीर्येभ्यः स्वाहा।

ओं ह्रीं अर्हं नमोऽनन्तसुखेभ्यः स्वाहा।

तदनन्तर—

'ओं ह्रीं धर्मचक्रायाप्रतिहततेजसे स्वाहा'—यह पढ़कर धर्मचक्र के लिये अर्घ चढ़ावें।

'ओं ह्रीं श्वेतछत्रत्रयश्रियै स्वाहा'—यह पढ़कर छत्रत्रयको अर्घ देवें।

ओं ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं हं सौं ह्रौं सर्वशास्त्रप्रकाशिनि वद वद वाग्वादिनि अवतर अवतर, तिष्ठ तिष्ठ, सन्निहिता भव भव वषट्।

(उक्त मन्त्र पढ़कर सरस्वती का आह्वान करें।)

ओं ह्रीं जिनमुखोद्भूतस्याद्वादनयगर्भितद्वादशाङ्गश्रुतज्ञानार्घं निर्वपामीति स्वाहा।

(उक्त मंत्र पढ़कर सरस्वती–जिनवाणी को अर्घ देवें।)

'ओं ह्रीं सम्यग्दर्शनज्ञानचरित्रपवित्रतरगात्र, चतुरशीतिलक्षोत्तर गुणाष्टदश-सहस्रशीलधरगणधरचरण ! आगच्छ आगच्छ तिष्ठ तिष्ठ संनिहितो भव भव वषट्'।

(यह पढ़कर निर्ग्रन्थ गुरु का आह्वान करें।)

ओं ह्रीं सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्रादिगुणविराजमानाचार्योपाध्यायसर्वसाधुभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा— (यह पढ़कर गुरु को अर्घ्य चढ़ावें)।

ओं ह्रीं स्वस्तिविधानाय पुण्याहवाचनार्थं च कलशं स्थापयामीति स्वाहा।

(यह पढ़कर चांवलों पर जल भरा एवं श्रीफल तथा तूल आदि से सुशोभित कलश स्थापित करें।)

ओं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः नमोऽर्हते भगवते पद्‌ममहापद्‌मतिगिंच्छकेसरि-पुण्डरीकमहापुण्डरीकगङ्गासिन्धुरोहिद्रोहितास्याहरिद्धरिकान्तासीतासीतोदानारीनरकान्ता सुवर्णरूप्यकूलारक्तारक्तोदापयोधिशुद्धजलसुवर्णघटप्रक्षालितनवरत्नगन्धाक्षतपुष्पो-र्जितामोदकं पवित्रं कुरु कुरु झं झं झौं झौं वं वं मं मं हं हं सं सं तं तं पं पं द्रां द्रीं द्रीं हं सः स्वाहा'

(यह पढ़कर कलश पर थोड़ा प्रासुक जल डालें)।

ओं ह्रीं अज्ञानतिमिरहरं दीपकं स्थापयामीति स्वाहा।

(यह पढ़कर घृतसे प्रज्वलित कर चारों दिशाओंमें चार दीपक रखें) तदनन्तर– नीचे लिखे मन्त्र बोलकर क्रमसे जल आदि आठ द्रव्य चढ़ावें।

ओं ह्रीं नीरजसे नमः (जलम्)
ओं ह्रीं शीलगन्धाय नमः (चन्दनम्)
ओं ह्रीं अक्षताय नमः (अक्षतम्)
ओं ह्रीं विमलाय नमः (पुष्पम्)
ओं ह्रीं दर्पमथनाय नमः (नैवेद्यम्)
ओं ह्रीं ज्ञानद्योतनाय नमः (दीपम्)

ओं ह्रीं श्रुतधूपाय नमः (धूपम्)
ओं ह्रीं अभीष्टफलदाय नमः (फलम्)
ओं ह्रीं परमसिद्धाय नमः (अर्घम्)

तदनन्तर—

श्रीतीर्थनाथपरिनिवृतिपूतकाले ह्यागत्य वह्निसुरपामुकुटोल्लसद्भिः
वह्निव्रजैर्जिनपदेहमुदारभक्त्या देहुस्तदग्निमहमर्चयितुं दधामि ।।1।।

ओं ह्रीं चतुरस्त्रे तीर्थंकरकुण्डे गार्हपत्यग्नौ कृतसंस्काराय तीर्थंकरपरमदेवायऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (यह पढकर कुण्डमें अर्घ चढ़ावे)

गणाधिपानां शिवयातिकालेऽग्नीन्द्रोत्तमाङ्गस्फुरदुग्ररोचिः।
संस्थाप्य पूज्यश्च समाह्वनीयो विघ्नौघशान्त्यै विधिना हुताशः॥१॥

ओं ह्रीं श्रीं वृत्ते द्वितीयगणधरकुण्डे गणधरदेवायऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा। (यह पढ़कर अर्घ चढ़ावे।)

श्रीदक्षिणाग्निः परिकल्पितश्च किरीटदेशात्प्रणताग्निदेवैः।
निर्वाणकल्याणकपूतकाले तमर्चये विघ्नविनाशनाय॥२॥

ओं ह्रीं श्रीं त्रिकोणे तृतीयसामान्यकेवलिकुण्डे सामान्यकेवलिनेऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा–(यह पढ़कर अर्घ चढ़ावें।)

तदनन्तर—निम्नलिखित मंत्रों को पढ़ते हुये पुष्पों का क्षेपण करें।

ओं ह्रीं अर्हद्भ्यः स्वाहा। ओं ह्रीं सिद्धेभ्यः स्वाहाः। ओं ह्रीं सूरिभ्यः स्वाहा। ओं ह्रीं पाठकेभ्यः स्वाहाः। ओं ह्रीं साधुभ्यः स्वाहा। ओं ह्रीं जिनधर्मेभ्यः स्वाहा। ओं ह्रीं जिनागमेभ्यः स्वाहा। ओं ह्रीं जिनबिम्बेभ्यः स्वाहा। ओं ह्रीं जिनचैत्यालयेभ्यः स्वाहा। ओं ह्रीं सम्यक्चारित्राय स्वाहा।

(साकल्यसे आहुतियां देवें। मन्त्र के बाद स्वाहा शब्द का उच्चारण स्पष्ट करें।)

पीठिकामंत्राः

ओं सत्यजाताय नमः स्वाहा :। ओं अर्हज्जाताय नमः स्वाहा। ओं परमजाताय नमः स्वाहा। ओं अनुपमजाताय नमः स्वाहा। ओं स्वप्रधानाय नमः स्वाहा। ओं अचलाय नमः स्वाहा। ओं अक्षयाय नमः स्वाहा। ओं अव्याबाधाय नमः स्वाहा। ओं

अनन्तज्ञानाय नमः स्वाहा। ओं अनन्तदर्शनाय नमः स्वाहा। ओं अनन्तवीर्याय नमः स्वाहा। ओं अनन्तसुखाय नमः स्वाहा। ओं नीरजसे नमः स्वाहा। ओं निर्मलाय नमः स्वाहा। ओं अच्छेद्याय नमः स्वाहा। ओं अभेद्याय नमः स्वाहा। ओं अजराय नमः स्वाहा। ओं अमराय नमः स्वाहा। ओं अप्रमेयाय नमः स्वाहा। ओं अगर्भवासाय नमः स्वाहा। ओं अक्षोभाय नमः स्वाहा। ओं अविलीनाय नमः स्वाहा। ओं परमधनाय नमः स्वाहा। ओं परमकाष्ठायोगरूपाय नमः स्वाहा। ओं लोकाग्रनिवासिने नमो नमः स्वाहा। ओं परमसिद्धेभ्यो नमः स्वाहा। ओं अर्हत्सिद्धेभ्यो नमः स्वाहा। ओं ह्रीं केवलिसिद्धेभ्यो नमो नमः स्वाहा। ओं अन्तःकृतसिद्धेभ्यो नमोनमः स्वाहा। ओं परम्परासिद्धेभ्यो नमो नमः स्वाहा। ओं अनादिपरम्परासिद्धेभ्यो नमः स्वाहा। श्री अनाद्यनुपमसिद्धेभ्यो नमः स्वाहा। ओं सम्यग्दृष्टे आसन्नभव्यनिर्वाणपूजार्हअग्नीन्द्राय स्वाहा।

सेवाफलं षट्परमस्थानं भवतु अपमृत्युविनाशनं भवतु समाधिमरणं भवतु स्वाहा।

[यह काम्यमन्त्र पढ़कर प्रतिष्ठाचार्य (इन्द्रों इन्द्राणियों) तथा हवन करनेवालों पर पुष्प फेंके अथवा जलके छींटे देवे।]

जातिमंत्राः

ओं सत्यजन्मनः शरणं प्रपद्ये स्वाहा। ओं अर्हज्जन्मनः शरणं प्रपद्ये स्वाहा। ओं अर्हन्मातुः शरणं प्रपद्ये स्वाहा। ओं अर्हत्सुतस्य शरणं प्रपद्ये स्वाहा। ओं अनादिगमनस्य शरणं प्रपद्ये स्वाहा। ओं अनुपमजन्मनः शरणं प्रपद्ये स्वाहा। ओं रत्नत्रयस्य शरणं प्रपद्ये स्वाहा। ओं सम्यग्दृष्टे सम्यग्दृष्टे ज्ञानमूर्ते ज्ञानमूर्ते सरस्वति सरस्वति स्वाहा।

सेवाफलं षट्परमस्थानं भवतु अपमृत्युविनाशनं भवतु समाधिमरणं भवतु स्वाहा।

निस्तारकमंत्राः

ओं सत्यजाताय स्वाहा। ओं अर्हज्जाताय स्वाहा। ओं षट्कर्मणे स्वाहा। ओं ग्रामपतये स्वाहा। ओं अनादिश्रोत्रियाय स्वाहा। ओं स्नातकाय स्वाहा। ओं श्रावकाय स्वाहा। ओं देवब्राह्मणाय स्वाहा। ओं सुब्राह्मणाय स्वाहा। ओं अनुपमाय स्वाहा। ओं सम्यग्दृष्टे निधिपते निधिपते वैश्रवण वैश्रवण स्वाहा।

सेवाफलं षट्परमस्थानं भवतु अपमृत्युविनाशनं भवतु समाधिमरणं भवतु स्वाहा।

ऋषिमन्त्राः

ओं सत्यजाताय नमः स्वाहा। ओं अर्हज्जाताय नमः स्वाहा। ओं निर्ग्रन्थाय नमः

स्वाहा। ओं वीतरागाय नमः स्वाहा। ओं महाव्रताय नमः स्वाहा। ओं त्रिगुप्ताय नमः स्वाहा। ओं महायोगाय नमः स्वाहा। ओं विविधयोगाय नमः स्वाहा। ओं विवर्द्धये नमः स्वाहा। ओं अङ्गधराय नमः स्वाहा। ओं पूर्वधराय नमः स्वाहा। ओं गणधराय नमः स्वाहा। ओं परमर्षिभ्यो नमो नमः स्वाहा। ओं अनुपमजाताय नमः स्वाहा। ओं सम्यग्दृष्टे ! सम्यग्दृष्टे ! भूपते ! नगरपते ! नगरपते ! कालश्रमण ! कालश्रमण ! स्वाहा।

सेवाफलं षट्परमस्थानं भवतु अपमृत्युविनाशनं भवतु समाधिमरणं भवतु स्वाहा।

सुरेन्द्रमन्त्राः

ओं सत्यजाताय स्वाहा। ओं अर्हज्जाताय स्वाहा। ओं दिव्यजाताय स्वाहा। ओं दिव्यार्चिजाताय स्वाहा। ओं नेमिनाथाय स्वाहा। ओं सौधर्माय स्वाहा। ओं कल्पाधिपतये स्वाहाः। ओं अनुचराय स्वाहा। ओं परम्परेन्द्राय स्वाहा। ओं अहमिन्द्राय स्वाहा। ओं परमार्हताय स्वाहा। ओं अनुपमाय स्वाहा। ओं सम्यग्दृष्टे ! कल्पपते ! दिव्यमूर्ते ! वज्रनामन् ! वज्रनामन् ! स्वाहा।

सेवाफलं षट्परमस्थानं भवतु अपमृत्युविनाशनं भवतु समाधिमरणं भवतु स्वाहा।

परमराजादिमन्त्राः

ओं सत्यजाताय स्वाहा। ओं अर्हज्जाताय स्वाहा। ओं अनुपमेन्द्राय स्वाहा। ओं विजयार्च्यजाताय स्वाहा। ओं नेमिनाथाय स्वाहा। ओं परमजाताय स्वाहा। ओं परमार्हताय स्वाहा। ओं अनुपमाय स्वाहा ! ओं सम्यग्दृष्टे ! सम्यग्दृष्टे ! उग्रतेजः ! उग्रतेजः ! दिशाञ्जन ! दिशाञ्जन ! नेमिविजय ! नेमिविजय ! स्वाहा।

सेवाफलं षट्परमस्थानं भवतु अपमृत्युविनाशनं भवतु समाधिमरणं भवतु स्वाहा।

परमेष्ठिमंत्राः

ओं सत्यजाताय नमः स्वाहा। ओं अर्हज्जाताय नमः स्वाहा। ओं परमजाताय नमः स्वाहा। ओं परमार्हताय नमः स्वाहा। ओं परमरूपाय नमः स्वाहा। ओं परमतेजसे नमः स्वाहा। ओं परमगुणाय नमः स्वाहा। ओं परमस्थानाय नमः स्वाहा। ओं परमयोगिने नमः स्वाहा। ओं परमभाग्याय नमः स्वाहा। ओं परमर्द्धये नमः स्वाहा। ओं परमप्रसादाय नमः स्वाहा। ओं परमकांछिताय नमः स्वाहा। ओं परमविजयाय नमः स्वाहा। ओं परमविज्ञानाय नमः स्वाहा। ओं परमदर्शनाय नमः स्वाहा। ओं परमवीर्याय नमः स्वाहा। ओं परमसुखाय नमः स्वाहा। ओं परमसर्वज्ञाय नमः स्वाहा। ओं अर्हते

नमः स्वाहा। ओं परमेष्ठिने नमः स्वाहा। ओं परमनेत्रे नमोनमः स्वाहा। ओं सम्यग्दृष्टे ! सम्यग्दृष्टे ! त्रैकोक्यविजय ! त्रैलोक्यविजय ! धर्ममूर्ते ! धर्ममूर्ते ! धर्मनेमे ! धर्मनेमे ! स्वाहा।

सेवाफलं षट्परमस्थानं भवतु अपमृत्युविनाशनं भवतु समाधिमरणं भवतु। स्वाहा।

तदनन्तर जिस मन्त्र का जितना जप किया हो, उसकी दशांश पुष्पों द्वारा आहुतियाँ देना चाहिये। यह मन्त्र प्रतिष्ठाचार्य मन में बोलकर स्वाहा शब्दका उच्चारण करे और तदनन्तर इन्द्रादि बनने वाले सब महाशय स्वाहा बोलकर पुष्प अर्पण करें।

समापन विधि समाप्त होने पर जो घट स्थापित किया था उसे हाथ में लेकर इन्द्र बृहच्छान्तिधारा दें।

शांतिमंत्र

ओं अ ह्रां सि ह्रीं आ ह्रूं उ ह्रौं सा ह्रः जगदातपविनाशनाय ह्रीं शान्तिनाथाय नमः।

ओं ह्रीं श्री शान्तिनाथायअशोकतरुसत्प्रातिहार्यमण्डिताय अशोकतरुप्रातिहार्य-शोभनपदप्रदाय ह्मल्वर्यूं बीजाय सर्वोपद्रवशान्तिकराय नमः।

ओं ह्रीं श्री शान्तिनाथाय सुरपुष्पवृष्टिसत्प्रातिहार्यमण्डिताय सुरपुष्पवृष्टि-शोभनपदप्रदाय भ्म्ल्व्रर्यूं बीजाय सर्वोपद्रवशान्तिकराय नमः।

ओं ह्रीं श्री शान्तिनाथाय दिव्यध्वनिसत्प्रातिहार्यमण्डिताय दिव्यध्वनिसत्पदप्रदाय म्म्ल्व्यूं बीजाय सर्वोपद्रवशान्तिकराय नमः।

ओं ह्रीं श्री शान्तिनाथाय चामरोज्ज्वलसत्प्रातिहार्यमण्डिताय चामरोज्ज्वल-शोभनपदप्रदाय र्म्ल्वर्यूं बीजाय सर्वोपद्रवशान्तिकराय नमः।

ओं ह्रीं श्री शान्तिनाथाय सिंहासन सत्प्रातिहार्यमण्डिताय सिंहासनशोभनपदप्रदाय घ्म्ल्वर्यूं बीजाय सर्वोपद्रवशान्तिकराय नमः।

ओं ह्रीं श्री शान्तिनाथाय दुन्दुभिप्रातिहार्यमण्डिताय दुन्दुभिशोभनपदप्रदाय झम्ल्वर्यूं बीजाय सर्वोपद्रवशान्तिकराय नमः।

ओं ह्रीं श्री शान्तिनाथाय छत्रत्रयप्रातिहार्यमण्डिताय छत्रत्रयशोभनपदप्रदाय स्म्ल्वर्यूं बीजाय सर्वोपद्रवशान्तिकराय नमः।

ओं ह्रीं श्री शान्तिनाथाय भामण्डलसत्प्रातिहार्यमण्डिताय भामण्डल-शोभनपदप्रदाय रुम्ल्वर्यूं बीजाय सर्वोपद्रवशान्तिकराय नमः।

ओं ह्रीं श्री शान्तिनाथाय प्रातिहार्याष्टसहिताय बीजाष्टमण्डनमण्डिताय सर्वविघ्नशान्तिकराय नमः।

तव भक्तिप्रसादाल्लक्ष्मी-पुर-राज्य गेहपदभ्रष्टोपद्रवदारिद्रियोद्भवोपद्रव-स्वचक्र-परचक्रोद्‌भवोपद्रव-प्रचण्डपवनामलजलोद्‌भवोपद्रव-शाकिनी-डाकिनी-भूत-पिचाशकृतोपद्रव-दुर्भिक्षव्यापारवृद्धिरहितोपद्रवाणां विनाशनं भवतु । सम्पूर्णकल्याण-मङ्गलरूपमोक्षपुरुषार्थश्च भवतु।

(उसके बाद निम्नलिखित पुण्याहवाचन करें।)

पुण्याहवाचन

ओं पुण्याहं पुण्याहं लोकोद्योतनकरा अतीतकालसंजाता निर्वाणसागर-प्रभृतयश्चतुर्विंशतिपरमदेवाः वः प्रीयन्तां प्रीयन्ताम्। (धारा)

ओं सम्प्रतिकालसंभवा वृषभादिवीरान्ताश्चतुर्विंशतिपरम—जिनेन्द्रा वः प्रीयन्तां प्रीयन्ताम् (धारा)।

ओं भविष्यत्कालाभ्युदयप्रभवा महापद्मादिचतुर्विंशतिभविष्यत्परमदेवाः वः प्रीयन्तां प्रीयन्ताम् (धारा)।

ओं त्रिकालवर्ति परमधर्माभ्युदय सीमन्धरप्रभृतयः विदेहक्षेत्र विहरमाणविंशति परमदेवाः वः प्रीयन्तां प्रीयन्ताम् (धारा)।

ओं वृषभसेनादिगणधरदेवा वः प्रीयन्तां प्रीयन्ताम् (धारा)।

ओं सप्तर्द्धिविशोभिताः कुन्दकुन्दाद्यनेकदिगम्बरसाधुचरणा वः प्रीयन्तां प्रीयन्ताम् (धारा)।

इह वान्यनगरग्रामदेवतामनुजाः सर्वे गुरुभक्ता जिनधर्मपरायणा भवन्तु। दानतपोवीर्यानुष्ठानं नित्यमेवास्तु। सर्वजिनधर्मभक्तानां धनधान्यैश्वर्यबलद्युतियशः प्रमोदोत्सवाः प्रवर्तन्ताम्।

तुष्टिरस्तु, पुष्टिरस्तु, वृद्धिरस्तु, कल्याणमस्तु, अविघ्नमस्तु, आयुष्यमस्तु, आरोग्यमस्तु, कर्मसिद्धिरस्तु, इष्टसम्पत्तिरस्तु, काममाङ्गल्योत्सवाः सन्तु, पापानि शाम्यन्तु, घोराणि, शाम्यन्तु, पुण्यं वर्धताम्, धर्मो वर्धताम्, श्रीर्वर्धताम्. कुलं गोत्रं चाभिवर्धेताम्, स्वस्ति भद्रं चास्तु, क्ष्वीं, क्ष्वीं हं सः स्वाहा। श्री मज्जिनेन्द्रचरणारविन्देष्वानन्दभक्तिः सदास्तु।

तदनन्तर शान्ति पाठ और विसर्जन पाठ पढ़ें।

शान्तिपाठ

शान्तिजिनं शशिनिर्मलवक्त्रं, शीलगुणव्रतसंयमपात्रम्,
अष्टशतार्चितलक्षणगात्रं, नौमि जिनोत्तममम्बुजनेत्रम्;
पंचममीप्सितचक्रधराणां, पूजितमिन्द्रनरेन्द्रगणैश्च,
शान्तिकरं गणशान्तिमभीप्सु; षोडशतीर्थंकर प्रणमामि।
दिव्यतरुः सुरपुष्पसुवृष्टिः, दुन्दुभिरासनयोजनघोषौ,
आतपवारणचामरयुग्मे, यस्य विभाति च मंडलतेज;
तं जगदर्चितशान्तिजिनेन्द्रं, शान्तिकरं सिरसा प्रणमामि,
सर्वगणाय तु यच्छतु शांतिं, मह्ममरं पठते परमां च।

(वसंततिलका छंद)

येऽभ्यर्चिता मुकुटकुंडलहाररत्नै; शक्रादिभिः सुरगणैः स्तुतपादपद्मा;
ते मे जिनाः प्रवरवंशजगत्प्रदीपा; तीर्थंकराः सतत शान्तिकरा भवन्तु।

(इन्द्रवज्रा)

संपूजकानां प्रतिपालकानां, यतीन्द्रसामान्यतपोधनानाम्;
देशस्य राष्ट्रस्य पुरस्य राज्ञः करोतु शान्ति भगवन् जिनेन्द्रः।

(स्रग्धरावृतम्)

क्षेमं सर्वप्रजानां प्रभवतु वलवान्, धार्मिको भूमिपाल;
काले काले च सम्यग्वर्षतु मघवा व्याधयो यान्तु नाशम्;
दुर्भिक्षं चौरमारी क्षणमपि जगतां मास्मभूज्जीवलोके,
जैनेन्द्रं धर्मचक्रं प्रभवतु सततं सर्वसौख्यप्रदायि।

(अनुष्टुप)

प्रध्वस्तघातिकर्माणः केवलज्ञानभास्करा;
कुर्वन्तु जगतः शांतिं वृषभाद्या जिनेश्वरा।

।। प्रथमं करणं चरणं द्रव्यं नमः ।।

(अथेष्ट प्रार्थना--मंदाक्रान्ता)

शास्त्राभ्यासो जिनपतिनुतिः संगतिः सर्वदार्यैः;
सद्वृतानां गुणगणकथा दोषवादे च मौनम्;

सर्वस्यापि प्रियहितवचो भावना चात्मतत्त्वे,
सम्पद्यंतां मम भवभवे यावदेतेऽपवर्गः ।

(आर्यावृतम्)

तव पादौ मम हृदये, मम हृदयं तव पदद्वये लीनम्;
तिष्ठतु जिनेन्द्र! तावत् यावन्निर्वाणसम्प्राप्तिं ।
अक्खरपयत्थहीणं मत्ताहीणं च जं मए भणियं;
तं खमउ णाणदेव य मज्झवि दुःकखक्खयं दिंतु ।
दुःक्ख–खओ कम्म-खओ समाहिमरणं च बोहिलाहो य;
मम होइ जगद-बंधव तव जिणवर चरणसरणेण ।

(प्रार्थना-आर्या)

त्रिभुवनगुरो! जिनेश्वर! परमानन्दैककारणं कुरुष्व;
मयि किंकरेऽत्र करुणां यथा तथा जायते मुक्तिः ।
निर्विण्णोहं नितरामर्हन् बहुदुकखया भवस्थित्या;
अपुनर्भवाय भवहर कुरु करुणामत्र मयि दीने ।
उद्धर मां पतितमतो विषमाद् भवकूपतः कृपां कृत्वा;
अर्हन्नलमुद्धरणे त्वमसीति पुनः पुनर्वच्मि ।
त्वं कारुणिकः स्वामी त्वमेव शरणं जिनेश ! तेनाहं;
मोहरिपुदलितमानं फूत्करणं तव पुरः कुर्वे ।
ग्रामपतेरपि करुणापरेण केनाप्युपद्रुते पुंसि;
जगतां प्रभो ! न किं तव, जिन ! मयि खलु कर्मभिः प्रहते ।
अपहर मम जन्म दयां, कृत्वा चेत्येकवचसि वक्तव्यं;
तेनातिदग्ध इति मे देव! बभूव प्रलापित्वं ।
तव जिन चरणाब्जयुगं करुणामृतशीतलं यावत्;
संसारतापतप्तः करोमि हृदि तावदेव सुखी ।
जगदेकशरण भगवन्! नौमि श्रीपद्मनंदितगुणौध;
किं बहुना कुरु करुणामत्र जने शरणमापन्ने ।

॥ परिपुष्पांजलि क्षिपेत् ॥

विसर्जन

ज्ञानतोऽज्ञानतो वापि शास्त्रोक्तं न कृतं मया;
तत्सर्वं पूर्णमेवास्तु त्वत्प्रसादाज्जिनेश्वर। १

आह्वानं नैव जानामि नैव जानामि पूजनं;
विसर्जनं न जानामि क्षमस्व परमेश्वर। २

मंत्रहीनं क्रियाहीनं द्रव्यहीनं तथैव च
तत्सर्वं क्षम्यतां देव रक्ष रक्ष जिनेश्वर। ३

मंगलं भगवान् वीरो मंगलं गौतमो गणी;
मंगलं कुंदकुंदार्यो जैनधर्मोऽस्तु मंगलम्। ४

सर्वमंगल मांगल्यं, सर्वकल्याणकारकं;
प्रधानं सर्वधर्माणां, जैनं जयतु शासनम्। ५

(यहाँ नौ बार णमोकारमंत्रका जाप करें।)

सिद्धभक्तिः

असरीरा जीवघना उवजुत्ता दंसणे य णाणे य।
सायारमणायारा लक्खणमेयं तु सिद्धाणं॥१॥

मूलोत्तरपयडीणं बन्धोदयसत्तकम्मउम्मुक्का।
मंगलभूदा सिद्धा अट्ठगुणा तीदसंसारा॥२॥

अट्ठविहकम्मवियला सीदीभूदा णिरंजणा णिच्चा।
अट्ठगुणा किदकिच्चा लोयग्गणिवासिणो सिद्धा॥३॥

सिद्धा णट्ठट्ठमला विसुद्धबुद्धी य लद्धिसब्भावा।
तिहुअणसिरिसेहरया पसियन्तु भडारया सव्वे॥४॥

गमणागमणविमुत्ते विहडियकम्मपयडिसंघारा।
सासहसुसंपत्ते ते सिद्धा वंदियो णिच्चं॥५॥

जयमंगलभूदाणं विमलाणं णाणदंसणमयाणं।
तइलोइसेहराणं णमो सदा सव्वसिद्धाणं॥६॥

सम्मत्तणाणदंसणवीरियसुहुमं तहेव अवगहणं।
अगुरुलघु अव्वावाहं अट्ठगुणा होंति सिद्धाणं।।७।।
तवसिद्धे णयसिद्धे संजमसिद्धे चरित्तसिद्धे य।
णाणम्मि दंसणम्मि य सिद्धे सिरसा णमस्सामि।।८।।

इच्छामि भंते सिद्धभत्तिं काओसग्गो कओ तस्सालोचेओ सम्मणाणसम्मदंसण-सम्म-चरित्तजुत्ताणं अट्ठविहकम्ममुक्काणं अट्ठगुण-सम्पण्णाणं उड्ढलोयमज्झयम्मि पयिट्ठियाणं तवसिद्धाणं णयसिद्धाणं संजमसिद्धाणं चरित्तसिद्धाणं सम्मणाणसम्मदंसणसम्मचरित्त-सिद्धाणं तीदाणागदवट्टमाणकालत्तयसिद्धाणं सव्वसिद्धाणं वंदामि णमस्सामि दुक्खक्खओ कम्मक्खओ बोहिलाओ सुगइगमणं समाहिमरणं जिणगुण-सम्पत्ति होउमज्झं। इति पूर्वाचार्यानुक्रमेण भावपूजास्तवसमेतं कायोत्सर्ग करोमि।

(यह पढ़कर नौ बार णमोकारमंत्र पढ़ें)

यज्ञदीक्षा चिह्न विसर्जन

यज्ञोचितं वरत विशेष वृतोप्रतष्ठन्।
यष्टा प्रतीन्द्र सहितः स्वय मे पुरावत्॥
एतानि तानि भगवज्ञिनयज्ञ दीक्षा।
चिह्नान्यथैलविसृजामि गुरोः पदाग्रे॥

इति यज्ञोपवितादि यज्ञ चिह्नानि गुरु समीपं संन्यस्य नमस्येत् ।

(यज्ञोपवीत पाटे पर रख देवे)।

॥ नमः सिद्धेभ्यः ॥

कविवर पण्डित सन्तलालजी कृत

श्री सिद्धचक्र विधान

मंगलाचरण

(दोहा)

जिनाधीश शिवईस नमि, सहसगुणित विस्तार।
सिद्धचक्र पूजा रचूँ, शुद्ध त्रियोग सम्हार॥१॥
नीत्याश्रित धनपति सुधी, शीलादिक गुण खान।
जिनपद अम्बुज भ्रमर मन, सो प्रशस्त यजमान॥२॥
देश काल विधि निपुणमति, निर्मल भाव उदार।
मधुर बैन नयना सुघर, सो याजक निरधार॥३॥
रत्नत्रयमंडित महा, विषय-कषाय न लेश।
संशयहरण सुहितकरन, करत सुगुरु उपदेश॥४॥

(छप्पय)

निर्मल मंडप भूमि दरव-मंगल करि सोहत।
सुरभि सरस शुभ पुष्प-जाल, मंडित मन मोहत॥
यथायोग्य सुन्दर मनोज्ञ, चित्राम अनूपा।
दीरघ मोल सुडोल, बसन झखझोल सरूपा॥
हो वित्त-सार प्रासुक दरब, सरब अंग मनको हरै।
सो महाभाग आनंद सहित, जो जिनेन्द्र अर्चा करै॥५॥

(दोहा)

सुर-मुनि मन आनन्दकर, ज्ञान सुधारस धार।
सिद्धचक्र सो थापहूँ, विधि-दव-जल उनहार॥६॥

अडिल्ल

'अर्हं' शब्द प्रसिद्ध अर्द्ध-मात्रिक कहा,
अकारादि स्वर मंडित अति शोभा लहा।
अति पवित्र अष्टांग अर्घ करि लायके,
पूरब दिशि पूजों अष्टांग नमायके॥७॥

ॐ ह्रीं अर्हं अ आ इ ई उ ऊ ॠ ॠ लृ लॄ ए ऐ ओ औ अं अः अनाहतपराक्रमाय सिद्धाधिपतये नमः पूर्वदिशि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(सोरठा)

वर्ण कवर्ग महान, अष्ट पूर्वविधि अर्घ ले।
भक्ति भाव उर ठान, पूजों हो आग्नेय दिशि॥८॥

ॐ ह्रीं अर्हं क ख ग घ ङ अनाहतपराक्रमाय सिद्धाधिपतये आग्नेयदिशि अर्घ्यं०

वर्ण चवर्ग प्रसिद्ध, वसुविधि अर्घ उतारिके।
मिलि है वसुविधि रिद्धि, दक्षिण दिशि पूजा करौं॥९॥

ॐ ह्रीं अर्हं च छ ज झ ञ अनाहतपराक्रमाय सिद्धाधिपतये दक्षिणदिशि अर्घ्यं०

वर्ण टवर्ग प्रशस्त, जलफलादि शुभ अर्घ ले।
पाऊँ सब विधि स्वस्ति, नैॠत्य दिशि अर्चा करौं॥१०॥

ॐ ह्रीं अर्हं ट ठ ड ढ ण अनाहतपराक्रमाय सिद्धाधिपतये नैॠत्यदिशि अर्घ्यं०

वर्ण तवर्ग मनोग, यथायोग्य कर अर्घ धरि।
मिलि है सब शुभ योग, पश्चिम दिशि पूजा करौं॥११॥

ॐ ह्रीं अर्हं त थ द ध न अनाहतपराक्रमाय सिद्धाधिपतये पश्चिमदिशि अर्घ्यं०

वर्ण पवर्ग सुभाग, करूँ आरती अर्घ ले।
सब विधि आरति त्याग, वायव दिशि पूजा करौं॥१२॥

ॐ ह्रीं अर्हं प फ ब भ म अनाहतपराक्रमाय सिद्धाधिपतये वायव्यदिशि अर्घ्यं०

वर्ण यवर्गी सार, दर्व-अर्घ वसु द्रव्य करि।
भाव-अर्घ उर धार, उत्तर दिशि पूजा करौं॥१३॥

ॐ ह्रीं अर्हं य र ल व अनाहतपराक्रमाय सिद्धाधिपतये उत्तरदिशि अर्घ्यं०

शेष वर्ण चउ अन्त, उत्तम अर्घ बनाइकें।
नशे कर्म वसु भंत, पूजों हो ईशान दिशि॥१४॥

ॐ ह्रीं अर्हं श ष स ह अनाहतपराक्रमाय सिद्धाधिपतये ईशानदिशि अर्घ्यं०

प्रथम पूजा

(आठ गुण सहित)

(छप्पय)

ऊरध अधो सु रेफ सबिंदु हंकार विराजे,
अकारादि स्वर लिप्त कर्णिका अन्त सु छाजे।
वर्गनिपूरित वसुदल अम्बुज तत्त्व संधिधर,
अग्रभागमें मंत्र अनाहत सोहत अतिवर॥
पुनि अंत ह्रीं बेढ़्यो परम, सुर ध्यावत अरि नागको।
ह्वै केहरि सम पूजन निमित, सिद्धचक्र मंगल करो॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्रीसिद्धपरमेष्ठिन् नमः अत्रावतरावतर संवौषट् आह्वाननम्। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम्। (पुष्पांजलिं क्षिपेत्)

(दोहा)

सूक्ष्मादिक गुणसहित हैं, कर्मरहित निरोग।
सकल सिद्ध पूजों सदा, मिटै उपद्रव योग॥

(इति यंत्रस्थापनार्थं पुष्पांजलिं क्षिपेत्)

अथाष्टकं

(चाल – श्री नन्दीश्वरद्वीप पूजाकी)

शीतल शुभ सुरभि सु नीर, कंचन कुम्भ भरों।
पाऊँ भवसागर तीर, आनन्द भेंट धरों।
अन्तरगत अष्ट-स्वरूप, गुणमई राजत हैं।
नमूँ सिद्धचक्र शिव-भूप, अचल विराजत हैं॥१॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने नमः श्री सम्मत्तणाण दंसणवीरज सुहमत्तहेव अवग्गहणं-अगुरुलघुमव्वाहं अष्टगुणसंयुक्ताय जलं निर्वपामीति स्वाहा ॥१॥

चन्दन तुम वंदन हेत, उत्तम मान्य गिना।
नातर सब काष्ठ समेत, ईंधन ही थपना॥
अन्तरगत अष्ट-स्वरूप, गुणमई राजत हैं।
नमूँ सिद्धचक्र शिव-भूप, अचल विराजत हैं॥२॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने नमः श्रीसम्यक्त्वादि अष्टगुणसंयुक्ताय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

दीरघ शशि किरण समान, अक्षत ल्यावत हूँ।
शशिमंडल सम बहुमान, पूज रचावत हूँ॥
अन्तरगत अष्ट-स्वरूप, गुणमई राजत हैं।
नमूँ सिद्धचक्र शिव-भूप, अचल विराजत हैं॥३॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने नमः श्रीसम्यक्त्वादि अष्टगुणसंयुक्ताय अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

तुम चरणचन्द्रके पास, पुष्प धरे सोहैं।
मानूं नक्षत्रनकी रास, सोहत मन मोहैं॥
अन्तरगत अष्ट-स्वरूप, गुणमई राजत हैं।
नमूँ सिद्धचक्र शिव-भूप, अचल विराजत हैं॥४॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने नमः श्रीसम्यक्त्वादि अष्टगुणसंयुक्ताय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

उत्तम नेवज बहु भाँति, सरस सुधा साने।
अहिमिन्द्रन मन ललचाय, भक्षण उमगाने॥
अन्तरगत अष्ट-स्वरूप, गुणमई राजत हैं।
नमूँ सिद्धचक्र शिव-भूप, अचल विराजत हैं॥५॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने नमः श्रीसम्यक्त्वादि अष्टगुणसंयुक्ताय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

फैली दीपनकी जोति, अति परकाश करै।
जिम स्याद्वाद उद्योत, संशय तिमिर हरै॥
अन्तरगत अष्ट-स्वरूप, गुणमई राजत हैं।
नमूँ सिद्धचक्र शिव-भूप, अचल विराजत हैं॥६॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने नमः श्रीसम्यक्त्वादि अष्टगुणसंयुक्ताय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

धरि अग्नि धूपके ढेर, गंध उड़ावत हूँ।
कर्मोंकी धूप बखेर, ठोंक जरावत हूँ॥
अन्तरगत अष्ट-स्वरूप, गुणमई राजत हैं।
नमूँ सिद्धचक्र शिव-भूप, अचल विराजत हैं॥७॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने नमः श्री सम्यक्त्वादिअष्टगुणसंयुक्ताय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

जिन-धर्म वृक्ष की डाल, शिवफल सोहत हैं।
इम धरि फल कंचन थाल, भविजन मोहत हैं॥
अन्तरगत अष्ट-स्वरूप, गुणमई राजत हैं।
नमूँ सिद्धचक्र शिव-भूप, अचल विराजत हैं॥८॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने नमः श्री सम्यक्त्वादि अष्टगुणसंयुक्ताय फलं निर्वपामीति स्वाहा।

करि दर्व अर्घ वसु जात, यातैं ध्यावत हूँ।
अष्टांग सुगुण विख्यात, तुम ढिंग पावत हूँ॥
अन्तरगत अष्ट-स्वरूप, गुणमई राजत हैं।
नमूँ सिद्धचक्र शिव-भूप, अचल विराजत हैं॥९॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने नमः श्री सम्यक्त्वादि अष्टगुणसंयुक्ताय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(गीता)

निर्मल सलिल शुभवास चन्दन, धवल अक्षत युत अनी।
शुभ पुष्प मधुकर नित रमैं, चरु प्रचुरस्वाद सुविधि घनी॥
करि दीपमाल उजाल धूपायन, रसायन फल भले।
करि अर्घ सिद्ध-समूह पूजत, कर्म-दल सब दलमले॥१॥
ते क्रमावर्त नशाय युगपत, ज्ञान निर्मलरूप हैं।
दुख जन्म टार अपार गुण, सूक्षम स्वरूप अनूप हैं॥
कर्माष्ट बिन त्रैलोक्य पूज्य, अदूज शिव कमलापती।
मुनि ध्येय सेय अमेय, चहुँगुण गेह, द्यो हम शुभमती॥२॥

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धचक्राधिपतये नमः सम्मत्तणाणादि अट्ठगुणाणं अनर्घ्यपदप्राप्तये महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अष्टगुण सहित अर्घ

(चौपाई)

मिथ्या-त्रय चउ आदि कषाया, मोह नाशि क्षायक गुण पाया।
निज अनुभव प्रत्यक्ष सरूपा, नमूँ सिद्ध समकित गुणभूपा॥१॥

ॐ ह्रीं सम्यक्त्वाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥१॥

सकल त्रिधा षट् द्रव्य अनन्ता, युगपत जानत हैं भगवंता।
निर आवरण विषद स्वाधीना, ज्ञानानंद परम रस लीना॥२॥

ॐ ह्रीं अनन्तज्ञानाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥२॥

चक्षु अचक्षु अवधि विधि नाशी, केवल दर्श जोति परकाशी।
सकल ज्ञेय युगपत अवलोका, उत्तम दर्श नमूँ सिद्धोंका॥३॥

ॐ ह्रीं अनन्तदर्शनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥३॥

अन्तराय विधि प्रकृति अपारा, जीवशक्ति घाते निरधारा।
ते सब घात अतुल बल स्वामी, लसत अखेद सिद्ध प्रणमामी॥४॥

ॐ ह्रीं अनन्तवीर्याय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥४॥

रूपातीत मन-इन्द्रिय ताहीं, मनपर्यय हूँ जानत नाहीं।
अलख अनूप अमित अविकारी, नमूँ सिद्ध सूक्षम गुणधारी॥५॥

ॐ ह्रीं सूक्ष्मत्वाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥५॥

एक क्षेत्र-अवगाह स्वरूपा, भिन्न-भिन्न राजैं चिद्रूपा।
निजपरघात विभाव विडारा, नमूँ सुहित अवगाह अपारा॥६॥

ॐ ह्रीं अवगाहनत्वाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥६॥

परकृत ऊँच-नीच पद नाहीं, रमत निरंतर निजपद माहीं।
उत्तम अगुरुलघु गुण भोगी, सिद्धचक्र ध्यावै नित योगी॥७॥

ॐ ह्रीं अगुरुलघुत्वात्मकजिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥७॥

नित्य निरामय भवभयभंजन, अचल निरंतर शुद्ध निरंजन।
अव्याबाध सोइ गुण जानो, सिद्धचक्र पूजन मन मानो॥८॥

ॐ ह्रीं अव्याबाधत्वाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥८॥

जयमाला

(दोहा)

जग आरत भारत महा, गारत करि जय पाय।
विजय आरती तिन कहूँ, पुरुषारथ गुणगाय॥

(पद्धरी छंद)

जय करण कृपाण सु प्रथमबार, मिथ्यात सुभट कीनो प्रहार।
दृढ़ कोट विपर्यय मति उलंघि, पायो समकित थल थिर अभंग॥१॥

निज-पर विवेक अंतर पुनीत, आतम रुचि वरती राजनीत।
जग विभव विभाव असार एह, स्वातम सुखरस विपरीत देह॥२॥

नित नाशन लीनो दृढ़ संभार, शुद्धोपयोग चित चरण-सार।
निर्ग्रन्थ कठिन मारग अनूप, हिंसादिक टारण सुलभ रूप॥३॥

द्वयबीस परीषह सहन वीर, बहिरंतर संयम धरण धीर।
द्वादश भावन, दशभेद धर्म, विधि नाशन बारह तपसु पर्म॥४॥

शुभ दयाहेत धरि समिति सार, मन शुद्धकरण त्रय गुप्ति धार।
एकाकी निर्भय निःसहाय, विचरो प्रमत्त नाशन उपाय॥५॥

लखि मोहशत्रु परचंड जोर, तिस हनन शुकल दल ध्यान जोर।
आनन्द वीररस हिये छाय, क्षायक श्रेणी आरम्भ थाय॥६॥

बारम गुणथानक ताहि नाश, तेरम पायो निजपद प्रकाश।
नव केवललब्धि विराजमान, दैदीप्यमान सोहे सुभान॥७॥

तिस मोह दुष्ट आज्ञा एकांत, थी कुमति स्वरूप अनेक भाँति।
जिनवाणी करि ताको विहंड, करि स्याद्वाद आज्ञा प्रचंड॥८॥

बरतायो जग में सुमति रूप, भविजन पायो आनंद अनूप।
थे मोह नृपति दुखकरण शेष, चारों अघातिया विधि विशेष॥९॥

है नृपति सनातन रीति एह, अरि विमुख न राखे नाम तेह।
यों तिन नाशन उद्यम सु ठानि, आरंभ्यो परम शुकल सु ध्यान॥१०॥

तिस बलकरि तिनकी थिति विनाश, पायो निर्भय सुखनिधि निवास।
यह अक्षय जोत लई अबाधि, पुनि अंश न व्यापो शत्रु व्याधि॥११॥

शाश्वत स्वाश्रित सुखश्रेय स्वामि, है शांति संत! तुम कर प्रणाम।
अन्तिम पुरुषारथ फल विशाल, तुम विलसौ सुखसौं अमित काल॥१२॥

ॐ ह्रीं सम्मत्तणाणादि अट्ठगुणसंजुत्तसिद्धेभ्यो महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(धृत्ता)

परसमय विदूरित पूरित निजसुख समयसार चेतनरूपा।
नानाप्रकार पर का विकार सब टार लसै सब गुण भूषा॥
ते निरावर्ण निर्देह निरूपम सिद्धचक्र परसिद्ध जजूं।
सुर-मुनि नित ध्यावें आनन्द पावें, मैं पूजत भवभार तजूं॥

(इत्याशीर्वादः।)

(यहाँ १०८ बार 'ॐ ह्रीं अर्हं असिआउसा नमः' मंत्र का जाप करें।)

સહજ ચિદાનંદ

श्री सिद्धपूजा (द्वितीय)

(सोलह गुणसहित)

(छप्पय)

ऊरध अधो सुरेफ सबिंदु हंकार विराजे,
अकारादि स्वरलिप्त कर्णिका अन्त सु छाजे।
वर्ग्गनिपूरित वसुदल अम्बुज तत्त्व संधिधर,
अग्रभाग में मंत्र अनाहत सोहत अतिवर॥
पुनि अंत ह्रीं बेढ़्यो परम, सुर ध्यावत अरि नागको।
ह्वै केहरिसम पूजन निमित, सिद्धचक्र मंगल करो॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने नमः षोडशगुणसंयुक्ताय सिद्धपरमेष्ठिन् अत्रावतरावतर संवौषट् आह्वाननम्। अत्र तिष्ठ-तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्। अत्र मम सन्निहितो भव-भव वषट् सन्निधिकरणम्। (पुष्पांजलिं क्षिपेत्)।

(दोहा)

सूक्ष्मादि गुण सहित हैं, कर्म रहित नीरोग।
सिद्धचक्र सो थापहूं, मिटै उपद्रव जोग॥

(इति यंत्रस्थापनार्थं पुष्पांजलिं क्षिपेत्)

अथाष्टकं

(गीता)

हिमशैल धवल महान कठिन पाषाण तुम जस रासतैं।
शरमाय अरु सकुचाय द्रव ह्वै बहो गंगा तासतैं॥
सम्बन्ध योग चितार चित भेटार्थ झारी में भरूँ।
षोडष गुणान्वित सिद्धचक्र चितार उर पूजा करूँ॥१॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं षोडशगुणसंयुक्ताय श्रीसिद्धपरमेष्ठिने जलं निर्वपामीति स्वाहा।

काश्मीर चन्दन आदि अन्तर-बाह्य बहुविधि तप हरै।
यह कार्य-कारण लखि नमित मम भाव हू उद्यम करै॥
मैं हूँ दुखी भवताप से घसि मलय चरनन ढिंग धरूँ।
षोडश गुणान्वित सिद्धचक्र चितार उर पूजा करूँ॥२॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं षोडशगुणसंयुक्ताय श्रीसिद्धपरमेष्ठिने चन्दनं०।

सौरभि चमक जिस सह न सकि अम्बुज वसैं सरताल में।
शशि गगन वसि नित होत कृश अहिनिश भ्रमै इस ख्याल में॥
सो अक्षतौघ अखण्ड अनुपम पुंज धरि सन्मुख धरूँ।
षोडश गुणान्वित सिद्धचक्र चितार उर पूजा करूँ॥अक्षतं॥३॥

जग प्रगट काम सुभट विकट कर हट करत जिय घट जगा।
तुम शील कटक सुघट निकट सरचाप पटक सुभग भगा॥
इम पुष्पराशि सुवास तुम ढिंग कर सुयश बहु उच्चरूँ।
षोडश गुणान्वित सिद्धचक्र चितार उर पूजा करूँ॥पुष्पं॥४॥

जीवन सतावत नहिं अघावत क्षुधा डाइन सी बनी।
सो तुम हनी, तुम ढिंग न आवत, जान यह विधि हम ठनी॥
नैवेद्यके संकेत करि निज क्षुधानाशन विधि करूँ।
षोडश गुणान्वित सिद्धचक्र चितार उर पूजा करूँ॥नैवेद्यं॥५॥

मैं मोह-अन्ध अशक्त अरु यह विषम भववन है महा।
ऐसे रुलेको ज्ञानदुति बिन पार निवरण हो कहाँ॥
सो ज्ञानचक्षु उघार स्वामी दीप ले पायनि परूँ।
षोडश गुणान्वित सिद्धचक्र चितार उर पूजा करूँ॥दीपं॥६॥

प्रासुक सुगंधित द्रव्य सुन्दर दिव्य घ्राण सुहावनो।
धरि अग्नि दश दिश वास पूरित ललित धूम्र सुहावनो॥
तुम भक्ति भाव उमंग करत प्रसंग धूप सु विस्तरूँ।
षोडश गुणान्वित सिद्धचक्र चितार उर पूजा करूँ॥ धूपं ॥७॥

चित हरन अचित सुरंग रसपूरित विविध फल सोहने।
रसना लुभावन कल्पतरुके सुर-असुर मन मोहने॥
भरि थाल कंचन भेंट धरि संसार फल तृष्णा हरूँ।
षोडश गुणान्वित सिद्धचक्र चितार उर पूजा करूँ॥फलं॥८॥

शुभ नीर वर काश्मीर चंदन धवल अक्षत युत अनी।
वर पुष्पमाल विशाल चरु सुरमाल दीपक दुति मनी॥
वर धूप पक्व मधुर सुफल लै अर्घ अठ विधि संचरूँ।
षोडश गुणान्वित सिद्धचक्र चितार उर पूजा करूँ॥अर्घ्यं॥९॥

(गीता)

निर्मल सलिल शुभवास चन्दन, धवल अक्षत युत अनी।
शुभ पुष्प मधुकर नित रमैं चरु, प्रचुर स्वाद सुविधि घनी॥
वर दीप माल उजाल धूपायन, रसायन फल भले।
करि अर्घ सिद्ध-समूह पूजत, कर्मदल सब दलमले॥१॥
ते क्रमावर्त नशाय युगपत, ज्ञान निर्मलरूप हैं।
दुख जन्म टार अपार गुण, सूक्षम सरूप अनूप हैं॥
कर्माष्ट बिन त्रैलोक्य पूज्य, अदूज शिव कमलापती।
मुनि ध्येय सेय अमेय, चहुँ गुण गेह, द्यो हम शुभमती॥२॥

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धचक्राधिपतये नमः महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सोलह गुण सहित अर्घ्य

(त्रोटक)

दर्शन आवर्णी प्रकृति हनी, अथिता अवलोक सुभाव बनी।
इक साथ समान लखो सब ही, नमूँ सिद्ध अनंत दृगन अबही॥१॥

ॐ ह्रीं अनन्तदर्शनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

विधि ज्ञानावर्ण विनाश कियो, निज ज्ञानस्वभाव विकाश लियो।
समयांतर सर्व विशेष जनों, नमूँ ज्ञान अनंत सु सिद्ध तनों॥२॥

ॐ ह्रीं अनन्तज्ञानाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सुख अमृत पीवत स्वेद न हो, निज भाव विराजत खेद न हो।
असमान महाबल धारत हैं, हम पूजत पाप विडारत हैं॥३॥

ॐ ह्रीं अतुलवीर्याय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

विपरीत सभीत पराश्रितता, अतिरिक्त धरै न करै थिरता।
परकी अभिलाष न सेवत हैं, निज भाविक आनन्द बेवत हैं॥४॥

ॐ ह्रीं अनन्तसुखाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

निज आत्म विकाशक बोध लह्यो, भ्रम को परवेश न लेश कह्यो।
निजरूप सुधारस मग्न भये, हम सिद्धन शुद्ध प्रतीति नये॥५॥

ॐ ह्रीं अनन्तसम्यक्त्वाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

निज भाव विडार विभाव न हो, गमनादिक भेद विकार न हो।
निजस्थान निरूपम नित्य बसे, नमूँ सिद्ध अनाचलरूप लसैं॥६॥

ॐ ह्रीं अचलाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(चौपई)

गुण पर्यय परणतिके भेद, अति सूक्षम असमान अछेद।
ज्ञान गहे, न कहै जड़ बैन, नमों सिद्ध सूक्षम गुण ऐन॥७॥

ॐ ह्रीं अनन्तसूक्ष्मत्वाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जन्म-मरण युत धरे न काय, रोगादिक संक्लेश न पाय।
नित्य निरंजन निर-अविकार, अव्याबाध नमों सुखकार॥८॥

ॐ ह्रीं अव्याबाधाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

एक पुरुष अवगाह प्रजंत, राजत सिद्ध-समूह अनंत।
एकमेक बाधा नहिं लहैं, भिन्न-भिन्न निजगुण में रहैं॥९॥

ॐ ह्रीं अवगाहनगुणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

काययोग पर्यापति प्रान, अनवधि छिन-छिन होवे हान।
जरा कष्ट जग प्रानी लहै, नमों सिद्ध यह दोष न सहै॥१०॥

ॐ ह्रीं अजराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

काल-अकाल प्राणको नाश, पावैं जीव मरणको त्रास।
तासौं रहित अमर अविकार, सिद्ध-समूह नमूँ सुखकार॥११॥

ॐ ह्रीं अमराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

गुण-गुण प्रति है भेद अनन्त, यों अथाह गुणयुत भगवंत।
है परमाण अगोचर तेह, अप्रमेय गुण बंदूँ एह॥१२॥

ॐ ह्रीं अप्रमेयाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(भुजंगप्रयात)

अनूकर्मतैं फर्स वर्णादि जानो, किसी एक वीशेषको किं प्रमानो।
पराधीन आवर्ण अज्ञान त्यागी, नमूँ सिद्ध विगतेन्द्रिय ज्ञान भागी॥१३॥

ॐ ह्रीं अतीन्द्रियज्ञानधारकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

त्रिधा भेद भावित महाकष्टकारे, रमण भावसों आकुलित जीव सारे।
निजानंद रमणीय शिवनार स्वामी, नमोंपुरुष आकृति सबै सिद्ध नामी॥१४॥

ॐ ह्रीं अवेदाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

विशेष सकल चेतना धार माँही, भये लै भली विधि रहो भेद नाहीं।
तथा हीन अधिकाय को भाव टारी, नमों सिद्ध पूरणकला ज्ञानधारी॥१५॥

ॐ ह्रीं अभेदाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

निजानन्दरस स्वादमें लीन अंतः, मगन हो रहे रागवर्जित निरंता।
कहाँलों कहूँ आपको पार नाहीं, धरों आपको आपही आपमाहीं॥१६॥

ॐ ह्रीं निजाधीनजिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

(दोहा)

पंच परम परमात्मा, रहित कर्मके फंद।
जग प्रपंच विरहित सदा, नमों सिद्ध सुखकंद॥१॥

(त्रोटक)

दुखकारन द्वेष विडारन हो, वश डारन राग निवारन हो।
भवितारन पूरणकारण हो, सब सिद्ध नमों सुखकारन हो॥२॥

समयामृत पूरित देव सही, पर आकृत मूरति लेश नहीं।
विपरीत विभाव निवारन हो, सब सिद्ध नमों सुखकारन हो॥३॥

अखिना अभिना अछिना सुपरा, अभिदा अखिदा अविनाशवरा।
यमजाम जरा दुखजारन हो, सब सिद्ध नमों सुखकारन हो॥४॥

निर-आश्रित स्वाश्रित वासित हो, पर-आश्रित खेद विनाशित हो।
विधि धारन हारन पारन हो, सब सिद्ध नमों सुखकारन हो॥५॥

अमुधा अछुधा अद्विधा अविधं, अकुधा सुसुधा सुबुधा सुसिधं।
विधि कानन दहन हुताशन हो, सब सिद्ध नमों सुखकारन हो॥६॥

शरनं चरनं वरनं करनं, धरनं चरनं मरनं हरनं।
तरनं भव-वारिधि तारन हो, सब सिद्ध नमों सुखकारन हो॥७॥

भववास त्रास विनाशन हो, दुखरास विनास हुताशन हो।
निज दासन त्रास निवारन हो, सब सिद्ध नमों सुखकारन हो॥८॥

तुम ध्यावत शाश्वत व्याधि दहै, तुम पूजत ही पद पूज लहै।
शरणागत 'संत' उभारन हो, सब सिद्ध नमों सुखकारन हो॥९॥

(दोहा)

सिद्धवर्ग गुण अगम हैं, शेष न पावैं पार।
हम किंह विधि वरणन करैं, भक्ति भाव उर धार॥१०॥

ॐ ह्रीं अनन्तदर्शनज्ञानादिषोडशगुणयुक्तसिद्धेभ्यो महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

इत्याशीर्वादः

(यहाँ १०८ बार 'ॐ ह्रीं अर्हं असिआउसा नमः' मंत्रका जाप करना चाहिये।)

સહજ ચિદાનંદ

श्री सिद्ध पूजा (तृतीय)

(बत्तीस गुणसहित)

(छप्पय)

ऊरध अधो सुरेफ सबिंदु हंकार बिराजे,
अकारादि स्वर लिप्त कर्णिका अन्त सु छाजे।
वर्ग्गनिपूरित वसुदल अम्बुज तत्त्व संधिधर,
अग्रभागमें मंत्र अनाहत सोहत अतिवर॥
पुनि अंत ह्रीं बेढ्यो परम, सुर ध्यावत अरि नागको।
ह्वै केहरि सम पूजन निमित, सिद्धचक्र मंगल करो॥१॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं द्वात्रिंशत्गुणसहित विराजमान श्रीसिद्धपरमेष्ठिन् अत्रावतरावतर संवौषट् आह्वाननम्। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्। अत्र मम सन्निहितो भव-भव वषट् सन्निधिकरणम्।

(दोहा)

सूक्ष्मादिक गुण सहित हैं, कर्म रहित नीरोग।
सकल सिद्ध सो थापहूँ, मिटै उपद्रव योग॥

इति यंत्रस्थापनार्थं पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

अथाष्टकं

प्रभु पूजोरे भाई! सिद्धचक्र बत्तीसगुण, प्रभु पूजोरे भाई!
भवत्रासित अकुलित रहै, भवि कठिन मिटन दुखताई॥
विमल चरण तुम सलिल धार दे, पायो सहज उपाई॥ प्रभु पूजोरे०॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं द्वात्रिंशत्गुणसंयुक्ताय श्रीसिद्धपरमेष्ठिने जन्मजरा-रोगविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा॥१॥

जगवंदन परसत पद चन्दन, महाभाग उपजाई।
हरिहर आदि लोकवर उत्तम, कर धर शीश चढ़ाई॥ प्रभु पूजोरे०॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं द्वात्रिंशत्गुणसंयुक्ताय श्रीसिद्धपरमेष्ठिने संसारताप-विनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा॥२॥

शिवनायक पूजन लायक है, यह महिमा अधिकाई।
अक्षयपद दायक अक्षत यह, साँचो नाम धराई॥ प्रभु पूजोरे०॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं द्वात्रिंशत्गुणसंयुक्ताय श्रीसिद्धपरमेष्ठिने अक्षयपद प्राप्तये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा ॥३॥

कामदाह अति ही दुखदायक, मम उरसे न टराई।
ताहि निवारण पुष्प भेंट धरि, माँगूँ वर शिवराई॥ प्रभु पूजोरे०॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं द्वात्रिंशत्गुणसंयुक्ताय श्रीसिद्धपरमेष्ठिने कामबाण विनाशनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ॥४॥

चरुवर प्रचुर क्षुधा नहिं मेंटत पूर परौ इन ताई।
भेंट करत तुम इनहूँ न भेंटूँ, रहूँ चिरकाल अघाई॥ प्रभु पूजोरे०॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं द्वात्रिंशत्गुणसंयुक्ताय श्रीसिद्धपरमेष्ठिने क्षुधारोग-विनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥५॥

दिव्य रत्न इस देश-कालमें, कहै कौन है नांई।
तुम पद भेंटे दीप प्रकट यह, चिंतामणि पद पाई॥ प्रभु पूजोरे०॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं द्वात्रिंशत्गुणसंयुक्ताय श्रीसिद्धपरमेष्ठिने मोहांधकार-विनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा ॥६॥

धूप हुताशन वासनमें धरि, दसदिश वास वसाई।
तुम पद पूजत या विधि वसु विधि, ईंधन जर हो जाई॥ प्रभु पूजोरे०॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं द्वात्रिंशत्गुणसंयुक्ताय श्रीसिद्धपरमेष्ठिने अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ॥७॥

सर्वोत्तम फल द्रव्य ठान मन, पूजूं हूँ तुम पाई।
जासौं जजैं मुक्तिपद पइये, सर्वोत्तम फलदाई॥ प्रभु पूजोरे०॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं द्वात्रिंशत्गुणसंयुक्ताय श्रीसिद्धपरमेष्ठिने मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा ॥८॥

वसुविधि अर्घ देऊँ तुम मम द्यो, वसुविधि गुण सुखदाई।
जासु पास वसु त्रास न पाऊँ, 'सन्त' कहे हर्षाई॥ प्रभु पूजोरे०॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं द्वात्रिंशत्गुणसंयुक्ताय श्रीसिद्धपरमेष्ठिने सर्वसुखप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥९॥

(गीता)

निर्मल सलिल शुभ वास चन्दन, धवल अक्षत युत अनी।
शुभ पुष्प मधुकर नित रमैं, चरु प्रचुर स्वाद सुविधि घनी॥
वर दीपमाल उजाल, धूपायन रसायन फल भले।
करि अर्घ सिद्ध-समूह पूजत, कर्मदल सब दलमले॥१॥

ते क्रमावर्त नसाय युगपत, ज्ञान निर्मल रूप हैं।
दुख जन्म टाल अपार गुण, सूक्षम स्वरूप अनूप हैं॥
कर्माष्ट बिन त्रैलोक्य पूज्य, अदूज शिव कमलापती।
मुनि ध्येय सेय अमेय चहुँ गुण, गेह द्यो हम शुभमती॥२॥

ॐ ह्रीं णमोसिद्धाणं द्वात्रिंशत्गुणसंयुक्ताय श्रीसिद्धपरमेष्ठिने महार्घ्यं...।

अथ बत्तीस गुण अर्घ्य

(पद्धड़ी)

चेतन विभाव पुद्गल विकार, है शुद्ध बुद्ध तिस निमित टार।
दृगबोध सुरूप सुभाव एह, नमूँ शुद्ध चेतना सिद्ध देह॥१॥

ॐ ह्रीं शुद्धचेतनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मति आदि भेद विच्छेद कीन, क्षायक विशुद्ध निज भाव लीन।
निरपेक्ष निरन्तर निर्विकार, नमूँ शुद्ध ज्ञानमय सिद्ध सार॥२॥

ॐ ह्रीं शुद्धज्ञानाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सर्वांग चेतना व्याप्तरूप, तुम हो चेतन व्यापक सरूप।
पर लेश न निज परदेश माँहि, नमूँ सिद्ध शुद्ध चिद्रूप ताँहि॥३॥

ॐ ह्रीं शुद्धचिद्रूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अन्तरविधि उदय विपाक टार, तुम जातिभेद बाहिज विडार।
निज परिणति में नहिं लेश शेष, नमूँ शुद्धरूप गुणगण विशेष॥४॥

ॐ ह्रीं शुद्धस्वरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

रागादिक परिणतिको विध्वंश, आकुलित भाव राखो न अंश।
पायो निज शुद्ध स्वरूप भाव, नमूँ सिद्धवर्ग धर हिये चाव॥५॥

ॐ ह्रीं परम शुद्धस्वरूपभावाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(दोहा)

तिहुँ काल में ना डिगें, रहैं निजानन्द थान।
नमूँ शुद्ध दृढ़ गुण सहित, सिद्धराज भगवान॥६॥

ॐ ह्रीं शुद्धदृढ़ाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

निज आवर्तक में बसे, नित ज्यों जलधि कलोल।
नमूँ शुद्ध आवर्तकी, करि निज हिये अडोल॥७॥

ॐ ह्रीं शुद्धआवर्तकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

परस्कृत कर उपज्यो नहीं, ज्ञानादिक निज भाव।
नमों सिद्ध निज अमलपद, पायो सहज सुभाव॥८॥

ॐ ह्रीं शुद्धस्वयंभवे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(पद्धड़ी)

निज सिद्ध अनन्त चतुष्ट पाय, निज शुद्ध-चेतनापुंज काय।
निज शुद्ध सबै पायो संयोग, तुम सिद्धराज सु शुद्ध जोग॥९॥

ॐ ह्रीं शुद्धयोगाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

एकेन्द्रिय आदिक जातिभेद, हीनाधिक नामा प्रकृति छेद।
संपूरण लब्धि विशुद्ध जात, हम पूजैं हैं पद जोर हाथ॥१०॥

ॐ ह्रीं शुद्धजाताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(दोहा)

महातेज आनन्दघन, महातेज परताप।
नमों सिद्ध निजगुण सहित, दिपै अनूपम आप॥११॥

ॐ ह्रीं शुद्धतपसे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(पद्धड़ी)

वर्णादिकको अधिकार नाहिं, संस्थान आदि आकार नाहिं।
अति तेजपिंड चेतन अखंड, नमूँ शुद्ध मूर्तिक कर्मखंड॥१२॥

ॐ ह्रीं शुद्धमूर्तये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

बाहिज पदार्थ को इष्टमान, नहिं रमत ममत तासों जु ठान।
निज अनुभवरस में सदालीन, तुम शुद्ध सुखी हम नमन कीन॥१३॥

ॐ ह्रीं शुद्धसुखाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(दोहा)

धर्म अर्थ अरु काम बिन, अन्तिम पौरुष साध।
भये शुद्ध पुरुषारथी, नमूँ सिद्ध निरबाध॥१४॥

ॐ ह्रीं शुद्धपौरुषाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(पद्धड़ी)

पुद्गल निरमापित वर्ण युक्त, विधि नाम रचित तासों विमुक्त।
पुरुषांकित चेतनमय प्रदेश, ते शुद्ध शरीर नमूँ हमेश॥१५॥

ॐ ह्रीं शुद्धशरीराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(दोहा)

पूरण केवलज्ञान-गम, तुम स्वरूप निर्बाध।
और ज्ञान जाने नहीं, नमों सिद्ध तज आध॥१६॥

ॐ ह्रीं शुद्धप्रमेयाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दरशन ज्ञान सुभेद है, चेतन लक्षण योग।
पूरण भई विशुद्धता, नमों शुद्ध उपयोग॥१७॥

ॐ ह्रीं शुद्धोपयोगाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(पद्धड़ी)

परद्रव्य जनित भोगोपभोग, ते खेदरूप प्रत्यक्ष योग।
निजरस स्वादन है भोगसार, सो भोगो तुम हम नमस्कार॥१८॥

ॐ ह्रीं शुद्धभोगाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(दोहा)

निर्ममत्व युगपत लखो, तुम सब लोकालोक।
शुद्ध ज्ञान तुमको लखों, नमों शुद्ध अवलोक॥१९॥

ॐ ह्रीं शुद्धावलोकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(पद्धड़ी)

निरइच्छुक मन वेदी महान, प्रज्वलित अग्नि है शुक्लध्यान।
निर्भेद अर्घ दे मुनि महान, तुम ही पूजत अर्हंत जान॥२०॥

ॐ ह्रीं प्रज्वलितशुक्लध्यानाग्निजिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(दोहा)

आदि-अन्त वर्जित महा, शुद्ध द्रव्य की जात।
स्वयंसिद्ध परमात्मा, प्रणमूँ शुद्ध निपात॥२१॥

ॐ ह्रीं शुद्धनिपाताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

लोकालोक अनन्तवें, भाग वसो तुम आन।
ये तुमसों अति भिन्न हैं, शुद्ध गर्भ यह जान॥२२॥

ॐ ह्रीं शुद्धगर्भाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

लोकशिखर शुभ थान है, तथा निजातम वास।
शुद्ध वास परमात्मा, नमों सुगुण की रास॥२३॥

ॐ ह्रीं शुद्धवासाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अति विशुद्ध निज धर्ममें, वसत नशत सब खेद।
परमवास नमि सिद्धको, वासी वास अभेद॥२४॥

ॐ ह्रीं विशुद्धपरमवासाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

बहिरंतर द्वै विधि रहित, परमातप पद पाय।
निरविकार परमात्मा, नमूँ नमूँ सुखदाय॥२५॥

ॐ ह्रीं शुद्धपरमात्मने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

हीन अधिक इक देश को, विकल विभाव उछेद।
शुद्ध अनन्त दशा लई, नमूँ सिद्ध निरभेद॥२६॥

ॐ ह्रीं शुद्धअनन्ताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(त्रोटक)

तुम राग-विरोध विनाश कियो, निजज्ञान सुधारस स्वाद लियो।
तुम पूरण शांति विशुद्ध धरो, हमको इकदेश विशुद्ध करो॥२७॥

ॐ ह्रीं शुद्धशांताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

विद पंडित नाम कहावत है, विद अन्त जु अन्तहि पावत है।
निजज्ञान प्रकाश सु अन्त लहो, कुछ अंश न जानन माहिं रहो॥२८॥

ॐ ह्रीं शुद्धविदंताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वरणादिक भेद विडारन हो, परिणाम कषाय निवारन हो।
मन-इन्द्रिय ज्ञान न पावत ही, अति शुद्ध निरूपम ज्योति मही॥२९॥

ॐ ह्रीं शुद्धज्योतिजिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जन्मादिक व्याधि न फेरि धरो, मरणादिक आपद नाहिं वरो।
निर्वाण महान विशुद्ध अहो, जिन-शासन में परसिद्ध कहो॥३०॥

ॐ ह्रीं शुद्धनिर्वाणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

करि अन्त न गर्भ लियो फिरके, जनमे शिववास जनम धरके।
जिनको फिर गर्भ न हो कबहूँ, शिवराय कहाय नमूँ अबहूँ॥३१॥

ॐ ह्रीं शुद्धसंदर्भगर्भाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जग जीवन पाप नशायक हो, तुम आप महा सुखनायक हो।
तुम मंगल मूरति शांति सही, सब पाप नशै तुम पूजत ही॥३२॥

ॐ ह्रीं शुद्धशांताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

(दोहा)

पंच परमपद ईश है, पंचमगति जगदीश।
जगत प्रपंच रहित बसे, नमूँ सिद्ध जग-ईश॥
परम ब्रह्म परमातमा, परम ज्योति शिवथान।
परमातम पद पाइयो, नमों सिद्ध भगवान॥१॥

(कामिनी मोहन)

जन्ममरणकष्टको टारि अमरा भये, जरादिरोगव्याधि परिहार अजरा भये।
जय द्विविधि कर्ममलजार अमला भये, जय दुविधिटार संसार अचला भये॥
जय जगतवास तज जगतस्वामी भये, जय विनाश नाम थिर परमनामी भये।
जय कुबुद्धिरूप तजि सुबुद्धिरूपा भये, जय निषधदोष तज सुगुण भूपा भये॥

कर्मरिपु नाशकर परम जय पाइए, लोकत्रयपूरि तुम सुजस घन छाइये।
इन्द्रनागेन्द्र धर शीश तुम पद जजैं, महा वैरागरसपाग मुनिगण भजैं॥

विघनवन दहनको अघन घन पौन हो, सघन गुणरासके वासको भौन हो।
शिवतिय वशकरन मोहिनी मंत्र हो, काल क्षयकार बेताल के यंत्र हो॥

कोटिथित क्लेशको मेटि शिवकर रहो, उपलकी नकल हो अचल इकथल रहो।
स्वप्न में हू न निजअर्थको पावहीं, जे महा खल न तुम ध्यानधरि ध्यावहीं॥

आपके जाप बिन पाप सब भेंट ही, पापकी तापको पाप कब मेंटही।
'संत' निज दास की आस पूरी करो, जगत से काढ़ निजचरणमें ले धरो॥

(घत्ता)

जय अमल अनूपं, शुद्ध स्वरूपं, निखिल निरूपं धर्मधरा।
जय विघन नशायक, मंगलदायक, तिहुँ जगनायक परमपरा॥

ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये नमः द्वात्रिंशत्गुणसंयुक्तसिद्धेभ्यो नमः पूर्णार्घ्यं०।

(यहाँ १०८ बार 'ॐ ह्रीं अर्हं असिआउसा नमः' मंत्रका जाप करना चाहिये।)

चतुर्थ सिद्ध पूजा

(चौंसठ गुण सहित)

(छप्पय)

ऊरध अधो सु रेफ सबिंदु हकार विराजै,
अकारादि स्वर लिप्त कर्णिका अन्त सु छाजै।
वर्गनिपूरित वसुदल अम्बुज तत्त्व संधिधर,
अग्रभागमें मंत्र अनाहत सोहत अतिवर॥
पुनि अंत ह्रीं बेढ्यो परम, सुर ध्यावत अरि नागको।
ह्वै केहरि सम पूजन निमित, सिद्धचक्र मंगल करो॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्री सिद्धपरमेष्ठिन् अत्रावतरावतर संवौषट् आह्वाननम्। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम्। (पुष्पांजलिं क्षिपेत्)

(दोहा)

सूक्ष्मादिक गुण सहित हैं, कर्मरहित निरोग।
सिद्धचक्र सो थापहूँ, मिटै उपद्रव योग॥

(इति यंत्रस्थापनार्थं पुष्पांजलिं क्षिपेत्)

अथाष्टकं

सिद्धगण पूजो हरषाई, चौंसठि गुणनामा विधि माला।
सुमरों सुखदाई, सिद्धगण पूजोरे भाई॥ अचरी ॥
त्रिभुवन उपमा वास लखै, तुम पद-अम्बुज माई॥
निर्मल जलकी धार देहु, अवशेष करण ताई॥सिद्ध०॥

ॐ ह्रीं चतुःषष्ठिगुणसहित श्री सिद्धपरमेष्ठिने जन्मजरारोगमृत्युविनाशनाय जलं० ॥१॥

तुम पद अम्बुज वास लेन मनु, चन्दन मन माई।
निजसों गुणाधिक्य संगतिको, लहि मन हरषाई॥सिद्ध०॥

ॐ ह्रीं चतुःषष्ठिगुणसहित श्री सिद्धपरमेष्ठिने संसारतापविनाशनाय चंदनं० ॥२॥

क्षीरज धान सुवासित नीरज, करसों छरलाई।
अंगुलसे तंदुलसों पूजत, अक्षय पद पाई॥
सिद्धगण पूजो हरषाई, चौंसठि गुणनामा विधि माला।
सुमरों सुखदाई, सिद्धगण पूजो रे भाई॥

ॐ ह्रीं चतु:षष्ठिगुणसहित-श्रीसिद्धपरमेष्ठिने अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं० ॥३॥

धूलिसार छवि हरण विवर्जित, फूलमाल लाई।
कामशूल निरमूल करणकों, पूजहूँ तुम पाई॥सिद्ध०॥

ॐ ह्रीं चतु:षष्ठिगुणसहित-श्रीसिद्धपरमेष्ठिने कामबाणविनाशनाय पुष्पं० ॥४॥

भूखा गार अक्षीण रसी हूँ, पूरति है नाई।
चरुलाय तुम पद पूजत हों, पूरन शिवराई॥सिद्ध०॥

ॐ ह्रीं चतु:षष्ठिगुणसहित-श्रीसिद्धपरमेष्ठिने क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं० ॥५॥

दीपनि प्रति तुम पद नित पूजत, शिवमारग दरशाई।
घोर अंध संसार हरण की, भली सूझ पाई॥सिद्ध०॥

ॐ ह्रीं चतु:षष्ठिगुणसहित-श्रीसिद्धपरमेष्ठिने मोहांधकारविनाशनाय दीपं० ॥६॥

कृष्णागरु कर्पूर पूर घट, अगनिसे प्रजलाई।
उड़े धूम यह, उड़े किधों जर करमनकी छाई॥सिद्ध०॥

ॐ ह्रीं चतु:षष्ठिगुणसहित-श्रीसिद्धपरमेष्ठिने अष्टकर्मदहनाय धूपं० ॥७॥

मधुर मनोग सु प्रासुक फल सों, पूजों शिवराई।
यथायोग्य विधि फलको दे गुण, फलकी अधिकाई॥सिद्ध०॥

ॐ ह्रीं चतु:षष्ठिगुणसहित-श्रीसिद्धपरमेष्ठिने मोक्षफलप्राप्तये फलं० ॥८॥

निरघ उपावन पावन वसुविधि, अर्घ हर्ष ठाई।
भेंट धरत तुम पद मैं पाऊँ, पद निर-आकुलताई॥सिद्ध०॥

ॐ ह्रीं चतु:षष्ठिगुणसहित-श्रीसिद्धपरमेष्ठिने सर्वसुखप्राप्तये अर्घ्यं० ॥९॥

(गीता छन्द)

निर्मल सलिल शुभ वास चन्दन, धवल अक्षत युत अनी।
शुभ पुष्प मधुकर नित रमैं चरु, प्रचुर स्वाद सुविधि घनी॥

वर दीप माल उजाल धूपायन, रसायन फल भले।
करि अर्घ सिद्ध-समूह पूजत, कर्मदल सब दलमले॥१॥

ते क्रमावर्त नसाय युगपत, ज्ञान निर्मल रूप हैं।
दुख जन्म टाल अपार गुण, सूक्षम स्वरूप अनूप हैं॥
कर्माष्ट बिन त्रैलोक्य पूज्य, अदूज शिव कमलापती।
मुनि ध्येय सेय अमेय, चहुँ गुण गेह, द्यो हम शुभमती॥२॥

ॐ ह्रीं अर्हतजिनादिसिद्धेभ्यो नमः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अथ चौंसठ गुण अर्घ्य

(चाल-आलोचना पाठ)

चउ घाती कर्म नशायो, अरहंत परम पद पायो।
द्वै धर्म कह्यो सुखकारा, नमूँ सिद्ध भए अविकारा॥१॥

ॐ ह्रीं अर्हंतजिनसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

संक्लेश भाव परिहारी, भए अमल अवधि बलधारी।
सो अतिशय केवलज्ञाना, उपजाय लियो शिवथाना॥२॥

ॐ ह्रीं अवधिजिनसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

निर्मल चारित्र समारा, परमावधि पटल उघारा।
केवल पायो तिस कारण, नमूँ सिद्ध भये जग तारण॥३॥

ॐ ह्रीं परमावधिजिनसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वर्द्धमान विशद परिणामी, सर्वावधिके हो स्वामी।
अन्तिम वसुकर्म नसाया, नमूँ सिद्ध भये सुखदाया॥४॥

ॐ ह्रीं सर्वावधिजिनसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जिस अन्त अवधिको नाहीं, तुम उपजायो पद ताहीं।
निर्मल अवधी गुणधारी, सब सिद्ध नमूँ सुखकारी॥५॥

ॐ ह्रीं अनन्तावधिजिनसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तप बल महिमा अधिकाई, बुधि कोष्ठ रिद्धि उपजाई।
श्रुत ज्ञान कोष्ठ भंडारी, नमूँ सिद्ध भये अविकारी॥६॥

ॐ ह्रीं कोष्ठबुद्धिऋद्धिसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ज्यों बीज फले बहुरासी, त्यों छिनही बहु अभ्यासी।
यह पावत ही योगीशा, भये सिद्ध नमूँ शिव ईशा॥७॥

ॐ ह्रीं बीजबुद्धि ऋद्धिसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पदमात्र समस्त चितारे, है रिद्धि यह पद अनुसारे।
यह पाय यतीश्वर ज्ञानी, भये सिद्ध नमूँ शिवथानी॥८॥

ॐ ह्रीं पादानुसारिणिऋद्धिसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जो भिन्न-भिन्न इक लारैं, शब्दन सुन अर्थ विचारैं।
यह ऋद्धि पाय सुखदाता, नमूँ सिद्ध भये जगत्राता॥९॥

ॐ ह्रीं संभिन्नसंश्रोतृऋद्धिसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मति श्रुत अर अवधि अनूपा, बिन गुरुके सहज सरूपा।
भए स्वयंबुद्ध निज ज्ञानी, नमूँ सिद्ध भये सुखदानी॥१०॥

ॐ ह्रीं स्वयंबुद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जो पाय न पर उपदेशा, जाने तप ज्ञान विशेषा।
प्रत्येकबुद्ध गुण धारी, भये सिद्ध नमूँ हितकारी॥११॥

ॐ ह्रीं प्रत्येकबुद्ध-ऋद्धिसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

गणधरसे समकित धारी, तुम दिव्यध्वनि अनुसारी।
ज्ञानिनि सिरताज कहाये, भये सिद्ध सुजस हम गाये॥१२॥

ॐ ह्रीं बोधितबुद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मन योग सरलता धारै, तिस अन्तर भेद उघारै।
जो होय ऋजुमति ज्ञानी, नमूँ सिद्ध भये सुखदानी॥१३॥

ॐ ह्रीं ऋजुमति-ऋद्धिसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

बांके मन की सब बार्ता, जाने सो विपुल कहाता।
तुम पाय भये शिवधामी, नमूँ सिद्धराज अभिरामी॥१४॥

ॐ ह्रीं विपुलमतिऋद्धिसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सुर-विद्या को नहीं चाहैं, निज चारित विरद निवाहैं।
दस पूर्व ऋद्धि यह पायो, भये सिद्ध मुनिन गुण गायो॥१५॥

ॐ ह्रीं दशपूर्वऋद्धि सिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चौदह पूरव श्रुतज्ञानी, जाने परोक्ष परमानी।
प्रत्यक्ष लखो तिस सारूं, भये सिद्ध हरो अघ म्हारूँ॥१६॥

ॐ ह्रीं चौदहपूर्व-ऋद्धिसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(सुन्दरी)

ज्योतिषादिका लक्षण जानकैं, शुभ अशुभ फल कहत बखानिकैं।
निमित ऋद्धि प्रभाव न अन्यथा, होय सिद्ध भये प्रणमूँ यथा॥१७॥

ॐ ह्रीं अष्टांगनिमित्त-ऋद्धिसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

बहु विधि अणिमादिक ऋद्धि जू, तप प्रभाव भई तिन सिद्धिजू।
निष्प्रयोजन निजपद लीन हैं, नमूँ सिद्ध भये स्वाधीन हैं॥१८॥

ॐ ह्रीं विवर्ण-ऋद्धिसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

भूमि जल जंतु जिय ना हरैं, नमूँ ते मुनि शिवकामिनी वरैं।
नैकु नहीं बाधा परिहार हो, नमूँ सिद्ध सभी सुखकार हो॥१९॥

ॐ ह्रीं विज्जाहरण-ऋद्धिसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जंघ पर दो हाथ लगावहीं, अन्तरीक्ष पवनवत जावहीं।
पाय ऋद्धि महासुति चारणी, यथायोग्य विशुद्ध विहारणी॥२०॥

ॐ ह्रीं चारण-ऋद्धिसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

खग समान चलैं आकाश में, लीन नित निज धर्म प्रकाश में।
शुद्ध धारण करि निज सिद्धता, पाइयो हम नमन करैं यथा॥२१॥

ॐ ह्रीं आकाशगामिनि-ऋद्धिसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वाद विद्या फुरत प्रमानही, वज्रसम परमतगिरि हानही।
सब कुपक्षी दोष प्रगट करैं, स्याद्वाद महादुतिको धरैं॥२२॥

ॐ ह्रीं परामर्श-ऋद्धिसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

विषम जहर मिला भोजन करैं, लेत ग्रासहिं तिस शक्ती हरैं।
ते महामुनि जग सुखदाय जू, हम नमें तिन शिवपद पाय जू॥२३॥

ॐ ह्रीं आशीविष-ऋद्धिसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जो महाविष अति परचण्ड हो, दृष्टि करि तिन कीने खण्ड हो।
सो यतीश्वर कर्म विडारकैं, भये सिद्ध नमूँ उर धारकैं॥२४॥

ॐ ह्रीं दृष्टिविषंविष-ऋद्धिसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अनशनादिक नित प्रति साधना, मरणकाल तईं न विराधना।
उग्र तप करि वसुविधि नासतैं, हम नमें शिवलोक प्रकाशतैं॥२५॥
ॐ ह्री उग्रतप-ऋद्धिसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
बढ़ति नित प्रति सहज प्रभावना, उग्र तप करि क्लेश न पावना।
दीप्ति तप करि कर्म जरायकैं, भये सिद्ध नमूँ सिर नायकैं॥२६॥
ॐ ह्रीं दीप्ततप-ऋद्धिसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
अन्तराय भये उत्सव बढ़े, बाल चन्द्र समान कला चढ़े।
वृद्ध तप की ऋद्धि लहैं यती, भये सिद्ध नमत सुख हो अती॥२७॥
ॐ ह्रीं तपोवृद्धि-ऋद्धिसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
सिंहक्रीडित आदि विधानतें, नित बढ़ावत तप विधि हानतें।
महामुनीश्वर तप परकाशतें, नमूँ मुक्त भये जगवासतें॥२८॥
ॐ ह्रीं महातपो-ऋद्धिसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
शिखर-गिरि ग्रीषम हिम सर-तटैं, तरु निकट पावस निजपद रटैं।
घोर परिषह करि नाहीं हटैं, भये सिद्ध नमत हम दुख कटैं॥२९॥
ॐ ह्रीं घोरतपो-ऋद्धिसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
महाभयंकर निमित मिलै जहाँ, निरविकार यती तिष्ठैं तहाँ।
महापराक्रम गुणकी खान हैं, नमो सिद्ध जगत सुखदान हैं॥३०॥
ॐ ह्रीं घोरगुण-ऋद्धिसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
सघन गुणकी रास महा यती, रत्नराशि समान दिपै अति।
शेष जिन वर्णन करि थकि रहै, नमूँ सिद्ध महापदको लहै॥३१॥
ॐ ह्रीं घोरगुणपरिक्रमाणं-ऋद्धिसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
अतुल वीर्य धनी हन काम को, चलत मन न लखत सुर वामको।
बालब्रम्हचारी योगीश्वरा, नमूँ सिद्ध भये वसुविधि हरा॥३२॥
ॐ ह्रीं ब्रह्मचर्यऋद्धिसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
सकल रोग मिटैं संस्पर्शतें, महा यतीश्वर के आमर्शतें।
औषधी यह ऋद्धि प्रभावना, भये सिद्ध नमत सुख पावना॥३३॥
ॐ ह्रीं आमर्षऋद्धि सिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मूत्रमें अमृत अतिशय बसे, जो परसतैं सब व्याधी नसै।
औषधि यह ऋद्धि प्रभावना, भये सिद्ध नमत सुख पावना॥३४॥

ॐ ह्रीं आमोसिय-औषधि-ऋद्धिसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तन पसीजत जल-कण लगतही, रोग व्याधि सर्व जन भगतही।
औषधी यह ऋद्धि प्रभावना, भये सिद्ध नमत सुख पावना॥३५॥

ॐ ह्रीं जलोसियऋद्धिसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

हस्त पादादिक नखकेश में, सर्व औषधि हैं सब देशमें।
औषधी यह ऋद्धि प्रभावना, भये सिद्ध नमत सुख पावना॥३६॥

ॐ ह्रीं सर्वोसियऋद्धिसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(अडिल्ल)

मन सम्बन्धी वीर्य बढ़े अतिशय महा,
एक महूरत अन्तर श्रुत चिंतवन लहा।
मनोबली यह ऋद्धि भई सुखदाइ जू,
भये सिद्ध सुखदाय जजूँ तिन पाँय जू॥३७॥

ॐ ह्रीं मनोबली-ऋद्धिसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

भिन्न-भिन्न अति शुद्ध उच्च स्वर उच्चरैं,
एक मुहूरत-अन्तर श्रुत वर्णन करैं।
बचनबली यह ऋद्धि भई सुखदाय जू,
भये सिद्ध सुखदाय जजूँ तिन पाँय जू॥३८॥

ॐ ह्रीं वचनबली-ऋद्धिसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

खड्गासन इक अंग मास द्वैमासलों,
अचलरूप थिर रहैं छिनक खेदित न हों।
कायबली यह ऋद्धि भई सुखदाय जू,
भये सिद्ध सुखदाय जजूँ तिन पाँय जू॥३९॥

ॐ ही कायबली-ऋद्धिसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अति अरस चरु क्षीर होय कर धरत ही,
वचन खिरत पर-श्रवण तुष्टता करत ही।

क्षीरस्रावि यह ऋद्धि भई सुखदाय जू,
भये सिद्ध सुखदाय जजूँ तिन पाँय जूँ॥४०॥

ॐ ह्रीं क्षीरस्रावी-ऋद्धिसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

रूखे भोजनसे करमें घृतरस स्रवै,
वचन सुनत परको घृतसम स्वादित ह्वै।
सर्पिस्रावि यह ऋद्धि भई सुखदाय जू,
भये सिद्ध सुखदाय जजूँ तिन पाँय जूँ॥४१॥

ॐ ह्रीं सर्पिस्रावी-ऋद्धिसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

हस्तकमलमें अन्न मधुर रस देत है,
मधुकर सम जिय वचन गंधको लेत है।
मधुस्रावी यह ऋद्धि भई सुखदाय जू,
भये सिद्ध सुखदाय जजूँ तिन पाँय जू॥४२॥

ॐ ह्रीं मधुस्रावी-ऋद्धिसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अमृत सम आहार होय कर आयके,
वचनामृत दे सुक्ख श्रवणमें जायके।
आमियरस यह ऋद्धि भई सुखदाय जू,
भये सिद्ध सुखदाय जजूँ तिन पाँय जू॥४३॥

ॐ ह्रीं आमियरस-ऋद्धिसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जिस बासन जिस थान आहार करैं यती,
चक्री सेना खाय अखै होवे अती।
अक्षीणरसी यह ऋद्धि भई सुखदाय जू,
भये सिद्ध सुखदाय जजूँ तिन पाँय जू॥४४॥

ॐ ह्रीं अक्षीणरस-ऋद्धिसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(सोरठा)

सिद्धरास सुखदाय, वर्धमान नितप्रति लसे।
नमूँ ताहि सिर नाय, वृद्ध रूप गुण अगम है॥४५॥

ॐ ह्रीं वड्ढमाण सिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

रागादिक परिणाम, अन्तरके अरि नाशके।
लहि अरहंत सु नाम, नमों सिद्धपद पाइया॥४६॥

ॐ ह्रीं अरहन्तसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दो अन्तिम गुणथान, भाव-सिद्ध इस लोकमें।
तथा द्रव्य-शिवथान, सर्व सिद्ध प्रणमूँ सदा॥४७॥

ॐ ह्रीं णमो लोए सर्वसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शत्रु व्याधि भय नाहिं, महावीर धीरज धनी।
नमूँ सिद्ध जिननाह, संतनि के भवभय हरैं॥४८॥

ॐ ह्रीं भगवते महावीरवड्ढमाणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

क्षपकश्रेणि आरुढ़ निजभावी योगी यथा।
निश्चय दर्श अमूढ़, सिद्ध योग सब ही जजों॥४९॥

ॐ ह्रीं णमो योगसिद्धाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वीतराग परधान, ध्यान करे तिनको सदा।
सोई ध्येय महान, नमों सिद्ध हम अघ हरो॥५०॥

ॐ ह्रीं णमो ध्येयसिद्धाणं नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

लोक शिखर शिव थान, अचल विराजत सिद्ध जन।
लोकवास सर्वान, भये सिद्ध प्रणमूँ सदा॥५१॥

ॐ ह्रीं णमो सव्वसिद्धाणं नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

औरन करत कल्याण, आप सर्व कल्याणमय।
सोई सिद्ध महान, मंगलहेतु नमूँ सदा॥५२॥

ॐ ह्रीं णमो स्वस्तिसिद्धाणं नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तीन लोक के पूज, सर्वोत्तम सुखदाय हैं।
जिन सम और न दूज, तिनपद पूजों भावयुत॥५३॥

ॐ ह्रीं अर्हं सिद्धाणं नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

लोकोत्तम परधान, तिन पद पूजत हैं सदा।
तातैं सिद्ध महान, सर्व पूज्य के पूज्य हो॥५४॥

ॐ ह्रीं अर्हं सिद्धसिद्धाणं नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

परम धरम निज साध, परमातम पद पाइयो।
सोई धर्म अबाध, पूजत हमको दीजिये॥५५॥

ॐ ह्रीं परमात्मसिद्धाणं नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सर्व ऋद्धि नव निद्ध, सिद्ध भये नहिं सिद्ध हो।
निजपद साधत सिद्ध, होत सही तिनको णमो॥५६॥

ॐ ह्रीं परमसिद्धाणं नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

परमागम की शाख, परम अगम गुणगण सहित।
सोई मन में राख, श्रद्धायुत पूजा करो॥५७॥

ॐ ह्रीं परमागमसिद्धाणं नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

गुण अनंत परकाश, महा विभवमय लसत है।
आवर्णित पद नाश, ते पूजूँ प्रणमूँ सदा॥५८॥

ॐ ह्रीं प्रकाशमानसिद्धाणं नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

स्वयं सिद्ध भगवान, ज्ञानभूत परकाशमय।
लसत नमूँ मन आन, मम उर चिंता दुख हरो॥५९॥

ॐ ह्रीं णमो स्वयंभूसिद्धाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मन इन्द्रियसों भिन्न, मन इन्द्री परकाश कर।
सोई ब्रह्म अखिन्न, साधित सिद्ध भये नमूँ॥६०॥

ॐ ह्रीं णमो ब्रह्मसिद्धाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

द्रव्य अनन्त गुणात्म, परणामी परसिद्ध के।
सोई पद निज-आत्म, साधत सिद्ध अनंत गुण॥६१॥

ॐ ह्रीं णमो अनन्तगुणसिद्धाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सर्व तत्त्वमय पर्म, गुण अनंत परमातमा।
सो पायो निजधर्म, परम सिद्ध तिनको नमूँ॥६२॥

ॐ ह्रीं णमो परमानन्तसिद्धाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

लोक शिखर के वास, पायो अविचल थान निज।
सर्व लोक परकाश, ज्ञानज्योति तिनको नमों॥६३॥

श्री ह्रीं लोकाग्रवासिसिद्धाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

काल विभाग अनादि, शाश्वत रूप विराजते।
यातें नहिं सो आदि, नमि अनादि सिद्धान को॥६४॥

ॐ ह्रीं णमो अनादिसिद्धाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

(दोहा)

तीर्थंकर त्रिभुवन धनी, जापद करत प्रणाम।
हम किह मुख वर्णन करैं, तिन महिमा अभिराम॥१॥

(चौपाई)

जय भवि-कुमुदन मोदन चंदा, जय दिनन्द त्रिभुवन अरविंदा।
भव-तप-हरण शरण रस-कूपा, मद ज्वर जरन हरण घनरूपा॥२॥

अकथित महिमा अमित अथाई, निर-उपमेय सरसता नाँई।
भावलिंग बिन कर्म खिपाई, द्रव्यलिंग बिन शिव पद पाई॥३॥

नय विभाग बिन वस्तु प्रमाणा, दया भाव बिन निज कल्याणा।
पंगु सुमेरु चूलिका परसै, गुंग गान आरम्भे स्वर से॥४॥

यों अजोग कारज नहीं होई, तुम गुण कथन कठिन है सोई।
सर्व जैन-शासन जिनमाहीं, भाग अनन्त धरे तुम नाहीं॥५॥

गोखुर में नहीं सिंधु समावे, वायस लोक अन्त नहीं पावै।
तातैं केवल भक्ति भाव तुम, पावन करो अपावन उर हम॥६॥

जे तुम यश निज मुख उच्चारैं, ते तिहुँ लोक सुजस विस्तारैं।
तुम गुणगान मात्र कर प्रानी, पावैं सुगुण महा सुखदानी॥७॥

जिन चित ध्यान सलिल तुम धारा, ते मुनि तीरथ है निरधारा।
तुम गुण हंस तुम्हीं सरवासी, वचन जाल में लेत न फाँसी॥८॥

जगत बंधु गुणसिंधु दयानिधि, बीजभूत कल्याण सर्वसिधि।
अक्षय शिव-स्वरूप श्रिय स्वामी, पूरण निजानन्द विश्रामी॥९॥

शरणागत सर्वस्व सुहितकर, जन्म-मरण दुख आधि-व्याधि हर।
'संत' भक्ति तुम हो अनुरागी, निश्चै अजर अमर पद भागी॥१०॥

ॐ ह्रीं चतुःषष्ठिलयोपरिस्थितसिद्धेभ्यो नमः महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(घत्तानन्द)

जय जय सुखसागर, सुजस उजागर, गुणगण आगर, तारण हो।
जय संत उधारण विपति विडारण, सुख विस्तारण, कारण हो॥
तुम गुण गान परम फलदान, सो मंत्र प्रमान विधान करूँ।
जहरी कर्मनि वैरी की कहरी, असहैरी भव की व्याधि हरूँ॥

इत्याशीर्वादः

(यहाँ १०८ बार 'ॐ ह्रीं अर्हं असिआउसा नमः' मंत्र का जाप करना चाहिए)

पंचम पूजा

(एक सौ अट्ठाईस गुण सहित)

(छप्पय)

ऊरध अधो सुरेफ सबिंदु हकार विराजै,
अकारादि स्वर लिप्त कर्णिका अन्त सु छाजै।
वर्ग्गनिपूरित वसुदल अम्बुज तत्त्व संधिधर,
अग्रभागमें मंत्र अनाहत सोहत अतिवर॥
पुनि अंत ह्रीं बेढ्यो परम, सुर ध्यावत अरि नागको।
ह्वै केहरि सम पूजन निमित, सिद्धचक्र मंगल करो॥१॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं अष्टविंशत्यधिकशत- (१२८) गुणसहितविराजमान श्री सिद्धपरमेष्ठिन् अत्रावतरावतर संवौषट् आह्वाननम्। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम्। (पुष्पांजलिं क्षिपेत्)

(दोहा)

सूक्ष्मादि गुण सहित हैं, कर्म रहित नीरोग।
सिद्धचक्र सो थापहूँ, मिटै उपद्रव योग॥

(इति यंत्र स्थापनार्थं पुष्पांजलिं क्षिपेत्)

अथाष्टकं

(चाल - बारहमासा छन्द)

चन्द्रवर्ण लखि चन्द्रकांतमणि, मनतें श्रवै हुलसधारा हो।
कंज सुवासित प्रासुक जलसों, पूजूँ अंतर अनुसारा हो॥
लोकाधीश शीश चूड़ामणि, सिद्धचरण उरधारा हो।
चौंसठि दुगुण सुगुण मणि सुवरण, सुमिरत ही भवपारा हो॥१॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं अष्टविंशत्यधिकशतगुणसंयुक्ताय श्रीसिद्धपरमेष्ठिने जन्म-जरारोगविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा॥१॥

सुरगण मणिधर जास वास लहि, मद तजि गंध लुभावत हैं।
सो चंदन नंदनवन भूषण, तुम पदकमल चढ़ावत हैं॥लोकाधीश०॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं अष्टविंशत्यधिकशतगुणसंयुक्ताय-श्रीसिद्धपरमेष्ठिने संसारतापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा॥२॥

चंपक ही के भ्रम भ्रमरावलि, भ्रमत चकित चकराज भए।
शशि मण्डल जानो सो अक्षत, पुंजधार पद कंज नये॥
लोकाधीश शीश चूड़ामणि, सिद्धचक्र उरधारा हो।
चौंसठि दुगुण सुगुण मणि सुवरन, सुमरत ही भवपारा हो॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं अष्टविंशत्यधिकशतगुणसंयुक्ताय श्रीसिद्धपरमेष्ठिने अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा ॥३॥

मदन वदन दुतिहरन वरन रति, लोचन अलिगण छाय रहे।
पुष्पमाल वासित विशाल सो, भेंट धरत उर काम दहे॥लोकाधीश०॥

ॐ ह्रीं अष्टविंशत्यधिकशतगुणसंयुक्ताय श्रीसिद्धपरमेष्ठिने कामबाणविनाशनाय पुष्पं० ।

चितवत मन, वरणत रसना, रस स्वाद लेत ही तृप्त थये।
जन्मांतर हूँ की क्षुधा निवारै, सो नेवज तुम भेंट धरे॥लोकाधीश०॥

ॐ ह्रीं अष्टविंशत्यधिकशतगुणसंयुक्ताय श्रीसिद्धपरमेष्ठिने क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं... ।

लवमणिप्रभा अनूपम सुर निज, शीश धरण की रास करै।
या बिन तुच्छ विभव निज जानें, सो दीपक तुम भेंट धरै॥लोकाधीश०॥

ॐ ह्रीं अष्टविंशत्यधिकशतगुणसंयुक्ताय-श्रीसिद्धपरमेष्ठिने मोहांधकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा ॥६॥

नीलंजसा सुरी नभमें ज्यों, ऋषभ-भक्ति कर नृत्य कियो।
सो तुम सन्मुख धूप उड़ावत, तिस छविको नहीं भाव लियो॥लोकाधीश०॥

ॐ ह्रीं अष्टविंशत्यधिकशतगुणसंयुक्ताय-श्रीसिद्धपरमेष्ठिने अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ॥७॥

सेव रंगीले अनार रसीले, केलाकी ले डाल फली।
डाली हूँ नृपमाली हूँ, नातर प्रासुकता रीति भली॥लोकाधीश०॥

ॐ ह्रीं अष्टविंशत्यधिकशतगुणसंयुक्ताय-श्रीसिद्धपरमेष्ठिने मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा ॥८॥

एकसे एक अधिक सोहत वसु-जाति अर्घ करि चरण नमूँ।
आनंद आरति आरत तजिकै, परमारथ हित कुमति वमूँ॥

लोकाधीश शीश चूड़ामणि, सिद्धचक्र उरधारा हो।
चौंसठि दुगुण सुगुण मणि सुवरन, सुमिरत ही भवपारा हो॥

ॐ ह्रीं अष्टविंशत्यधिकशतगुणसंयुक्ताय श्रीसिद्धपरमेष्ठिने अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥९॥

(गीता)

निर्मल सलिल शुभ वास चन्दन, धवल अक्षत युत अनी।
शुभ पुष्प मधुकर नित रमें, चरु प्रचुर स्वाद सुविधि घनी॥
वर दीपमाल उजाल धूपायन रसायन फल भले।
करि अर्घ सिद्ध-समूह पूजत, कर्मदल सब दलमले॥
ते क्रमावर्त नसाय युगपत, ज्ञान निर्मल रूप हैं।
दुख जन्म टाल अपार गुण, सूक्षम स्वरूप अनूप हैं।
कर्माष्ट बिन त्रैलोक्य पूज्य, अदूज शिव कमलापती।
मुनि ध्येय सेय अमेय, चहुँ गुण गेह, द्यो हम शुभमती॥

ॐ ह्रीं अष्टविंशत्यधिकशतगुणयुक्तसिद्धेभ्यो नमः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

एक सौ अट्ठाईस गुण अर्घ्यं

(त्रोटक)

निरबाध सु तत्त्व सरूप लखो, इक लेश विशेष न शेष रखो।
अति शुद्ध सुभाविक क्षायक है, नमूँ दर्श महासुखदायक है॥१॥

ॐ ह्रीं सम्यग्दर्शनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

निरमोह अकोह अबाधित हो, परभाव थकी न विराधित हो।
निरअंस चराचर जानत हैं, हम सिद्ध सुज्ञान प्रमानत हैं॥२॥

ॐ ह्रीं सम्यग्ज्ञानाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सब राग-विरोध निवारन है, निज भाव थकी निज धारन है।
परमें न कबहुँ निज भाव वहै, अति सम्यक्‌चारित्र नाम यहै॥३॥

ॐ ह्रीं सम्यक्‌चारित्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

उतपाद विनाश न बाध धरैं, परनाम सुभाव नहीं निसरैं।
तुम धारत हो यह धर्म महा, हम पूजत हैं पद शीश यहाँ॥४॥

ॐ ह्रीं अस्तित्वधर्माय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

निज भावनतैं व्यतिरिक्त न हो, प्रनमों, गुणरूप गुणात्मन हो।
यह वस्तु सुभाव सदा विलसो, हम पूजत हैं सब पाप नसो॥५॥

ॐ ह्रीं वस्तुत्वधर्माय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

परमाण न जानत हैं तिनको, छिन रोग न आवत है जिनकों।
अप्रमेय महागुण धारत हैं, हम पूजत पाप विडारत हैं॥६॥

ॐ ह्रीं अप्रमेयधर्माय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

गुणपर्ज प्रमाण दसानित ही, निजरूप न छांडत है कित ही।
जिन वैन प्रमाण सुधारत हैं, हम पूजत पाप विडारत हैं॥७॥

ॐ ह्रीं अगुरुलघुधर्माय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जितने कछु हैं परिणाम विषैं, सब चित्त स्वरूप सुजान तिसैं।
मुख चेतनता गुण धारत हैं, हम पूजत पाप विडारत हैं॥८॥

ॐ ह्रीं चेतनत्वधर्माय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जिन अंग उपंग शरीर नहीं, जिन रंग प्रसंग सु तीर नहीं।
नभसार अमूरति धारत हैं, हम पूजत पाप विडारत हैं॥९॥

ॐ ह्रीं अमूर्तित्वधर्माय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

परकौ न कदाचित धर्म गहैं, निजधर्म स्वरूप न छांड़त हैं।
अति उत्तम धर्म सु धारत हैं, हम पूजत पाप विडारत हैं॥१०॥

ॐ ह्रीं समकितधर्माय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जितने कछु हैं परिणाम विषैं, सब ज्ञान स्वरूप सु जान तिसैं।
सुख-ज्ञानमई गुण धारत हैं, हम पूजत पाप विडारत हैं॥११॥

ॐ ह्रीं ज्ञानधर्माय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चिन्मय चिन्मूरति जीव सही, अति पूरणता बिन भेद कही।
निज जीव सुभाव सु धारत हैं, हम पूजत पाप विडारत हैं॥१२॥

ॐ ह्रीं जीवधर्माय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मनको नहिं बेग लखावत हैं, जिस बैन नहीं बतलावत हैं।
अति सूक्षम भाव सु धारत हैं, हम पूजत पाप विडारत हैं॥१३॥

ॐ ह्रीं सूक्ष्मधर्माय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

परघात न आप न घात करैं, इक खेत समूह अनन्त वरैं।
अवगाह सरूप सु धारत हैं, हम पूजत पाप विडारत हैं॥१४॥

ॐ ह्रीं अवगाहधर्माय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अविनाश सुभाव विराजत हैं, बिन बाध स्वरूप सु छाजत हैं।
यह धर्म महागुण धारत हैं, हम पूजत पाप विडारत हैं॥१५॥

ॐ ह्रीं अव्याबाधधर्माय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

निजसों निजकी अनुभूति करैं, अपनो परसिद्ध सुभाव वरैं।
निज ज्ञान प्रतीति सु धारत हैं, हम पूजत पाप विडारत हैं॥१६॥

ॐ ह्रीं स्वसंवेदनज्ञानाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

निज ज्योति स्वरूप उद्योतमई, तिसमें परदीप्त रहैं नित ही।
यह ताप स्वरूप उधारत हैं, हम पूजत पाप विडारत हैं॥१७॥

ॐ ह्रीं स्वरूपतापतपसे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

निजऽनंत चतुष्टय राजत हैं, दृग ज्ञान बला सुख छाजत हैं।
यह आप महागुण धारत हैं, हम पूजत पाप विडारत हैं॥१८॥

ॐ ह्रीं अनन्तचतुष्टयाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सुख समकित आदि महागुण को, तुम साधित सिद्ध भये अबहो।
यह उत्तम भाव सुधारत हैं, हम पूजत पाप विडारत हैं॥१९॥

ॐ ह्रीं सम्यक्त्वादिगुणात्मकसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(दोहा)

निश्चय पंचाचार सब, भेद रहित तुम साध।
चेतनकी अति शक्तिमें, सूचत सब निरबाध॥२०॥

ॐ ह्रीं पंचाचाराचार्योभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(चौपाई)

सब विकलप तजि भेद स्वरूपी, निज अनभूतिमग्न चिद्रूपी।
निश्चय रत्नत्रय परकासो, पूजूँ भाव भेद हम नासो॥२१॥

ॐ ह्रीं रत्नत्रयप्रकाशाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

करण भेद रत्नत्रय धारी, कर्म भेद निज-भाव सँवारी।
करता भेद आप परणामी, भेदाभेद रूप प्रणमामी॥२२॥

ॐ श्री स्वस्वरूपसाधकसर्वसाधुभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मनोयोग कृत जिय संसारी, क्रोधारम्भ करत दुखकारी।
तासों रहित सिद्ध भगवाना, अंतर शुद्ध करू तिन ध्याना॥२३॥

ॐ ह्रीं अकृतमनःक्रोधसंरम्भमनोगुप्तये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

परके मन क्रोधी संरम्भा, करत मूढ़ नाना आरम्भा।
सिद्धराज प्रणमूँ तिस त्यागी, निर्विकल्प निजगुणके भागी॥२४॥

ॐ ह्रीं अकारितमनःक्रोधसंरम्भनिर्विकल्पधर्माय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(भुजंगप्रयात)

मनोयोग रंभा प्रशंसीक क्रोधा, निजानंदको मान ठाने अबोधा।
महानिंदनी भावको त्याग दीना, निजानंदको स्वाद ही आप लीना॥२५॥

ॐ ह्रीं नानुमोदितमनःक्रोधसंरम्भसानन्दधर्माय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मनोयोग क्रोधी समारंभ धारी, सदा जीव भोगे महाखेद भारी ।
महानंद आख्यात को भाव पायो, नमों सिद्ध सो दोष नाहीं उपायो॥२६॥

ॐ ह्रीं अकृतमनःक्रोधसमारम्भपरमानन्दाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(दोहा)

समारम्भ क्रोधित सु मन, परकारित दुख नाहिं।
परमातम पद पाइयो, नमूँ सिद्ध गुण ताहिं॥२७॥

ॐ ह्रीं अकारितमनःक्रोधसमारम्भपरमानन्दाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(भुजंगप्रयात)

समारम्भ क्रोधी मनोयोग माहीं, धरे मोदना भाव को जीव ताहीं।
भये आप संतुष्ट ये त्याग भावा, नमूँ सिद्ध सो दोष नाहीं उपावा॥२८॥

ॐ ह्रीं नानुमोदितमनःक्रोधिसमारम्भपरमानन्दसंतुष्टाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति० ।

(पद्धरी)

निज क्रोधित मन आरम्भ ठान, जग जिय दुखमें सुख रहे मान।
सो आप त्याग संक्लेश भाव, भये सिद्ध नमूँ धर हिये चाव॥२९॥

ॐ ह्रीं अकृतमनःक्रोधारम्भस्वसंस्थानाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

क्रोधित मनसों आरम्भ हेत, पर प्रेरित निज अपराध लेत।
जग जीवनकी विपरीत रीति, तुम त्याग भये शिव वर पुनीत॥३०॥

ॐ ह्रीं अकारितमनःक्रोधारम्भबन्धसंस्थानाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

क्रोधित मनसों आरम्भ देख, जिय मानत है आनन्द विशेष।
तुम सत्य सुखी इह भव क्षार, भये सिद्ध नमूँ उर हर्ष धार॥३१॥

ॐ ह्रीं नानुमोदितमनः क्रोधारम्भसंस्थानाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(दोहा)

मान योग मन रंभमें, वरतत हैं जग जीव।
भये सिद्ध संक्लेश तजि, तिन पद नमूँ सदीव॥३२॥

ॐ ह्रीं अकृतमनोमानारम्भ-साधर्माय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मान उदय मन योगतें, परको रम्भ करान।
त्याग भये परमातमा, नमूँ सरन पर हान॥३३॥

ॐ ह्रीं अकारितमनोमानसंरम्भअनन्यशरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मान सहित मन रंभमें, जग जिय राखैं चाव।
नमों सिद्ध परमातमा, जिन त्यागो इह भाव॥३४॥

ॐ ह्रीं नानुमोदितमनोमानसंरम्भसुगतभावाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(अडिल्ल)

समारंभ परिवर्तमान युत मन धरे।
विकलपमई उपकरण विधि इकठे करै॥
महाकष्टको हेत भाव यह ना गहो।
प्रणमूँ सिद्ध अनंत सुखातम गुण लहो॥३५॥

ॐ ह्रीं अकृतमनोमानसमारम्भ-सुखात्मगुणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मान सहित मनयोग द्वार चितवन करै।
समारंभ पर कृत्य करावन विधि वरै॥
तहाँ कष्टको हेत भाव यह ना गहो।
प्रणमूँ सिद्ध अनन्तगुणातम पद लहौ॥३६॥

ॐ ह्रीं अकारितमनोमानसमारम्भ-अनन्यगताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जोड़े चित न समाज विविध जिस काजमें।
समारंभ तिस नाम सोम जिनराजमें॥
माने मानी मन आनंद सु निमित्तसे।
नमूँ सिद्ध हैं अतुल वीर्य त्यागत तिसे॥३७॥

ॐ ह्रीं नानुमोदितमनोमानसमारम्भ-अनन्तवीर्याय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अशुभकाज परिवर्त नाम आरंभको।
मान सहित मन द्वार तास उद्यम गहो॥
जगवासी जिस नितप्रति पाप उपाय हैं।
णमो सिद्ध या रहित अतुल सुखराय हैं॥३८॥

ॐ ह्रीं अकृतमनोयोगमानारम्भ-अनन्तसुखाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(दोहा)

मनो मान आरम्भके, भये अकारित आप।
अतुल ज्ञानधारी भये, नमत नसैं सब पाप॥३९॥

ॐ ह्रीं अकारितमनोमानारम्भ-अनन्तज्ञानाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मनो मान आरम्भमें, नानुमोदि भगवंत।
गुण अनंत युत सिद्ध पद, पूजत हैं नित संत॥४०॥

ॐ ह्रीं नानुमोदितमनोमानारम्भ-अनंतगुणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(गीता)

जो अशुभ काज विकल्प हो, संरम्भ मनयुत कुटिलता।
कर कर अनादित रंक जिय, बहु भाँति पाप उपावता॥
सो त्याग सकल विभाव यह तुम, सिद्धब्रह्मस्वरूप हो।
हम पूजि हैं नित भक्तियुत, तुम भक्त वत्सलरूप हो॥४१॥

ॐ ह्रीं अकृतमनोमायासंरम्भ-ब्रह्मस्वरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(दोहा)

मायावी मनतें नहीं, कबहूँ आरम्भ कराय।
सिद्ध चेतना गुण सहित, नमूँ सदा मन लाय॥४२॥

ॐ ह्रीं अकारितमनोमायासंरम्भचेतनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मायावी मनतें कभी, रंभानन्द न होय।
सिद्ध अनन्य सुभाव युत, नमूँ सदा मद खोय॥४३॥

ॐ ह्रीं नानुमोदितमनोमायासंरम्भ-अनन्यस्वभावाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(पद्धरी)

मायावी मनतें समारम्भ, नहिं करत सदा हो अचल खंभ।
तुम स्वानुभूति रमणीय संग, नित रमन करो धरि मन उमंग॥४४॥

ॐ ह्रीं अकृतमनोमायासमारम्भ-स्वानुभूतिरताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मन वक्र द्वार उपकर्ण ठान, विधि समारंभ को नहिं करान।
निज साम्यधर्ममें रहो लिप्त, तुम सिद्ध नमों पद धार चित्त॥४५॥

ॐ ह्रीं अकारितमनोमायासमारंभ-साम्यधर्माय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(दोहा)

मायावी मनमें नहीं, समारंभ आनन्द।
नमों सिद्धपद परमगुरु, पाऊँ पद सुखवृन्द॥४६॥

ॐ ह्रीं नानुमोदितमनोमायासमारंभगुरवे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(पद्धरी)

बहु विधिकर जोड़ अशुभ काज, आरम्भ नाम हिंसा समाज।
मायावी मन द्वारै करेय, तुम सिद्ध नमूँ यह विधि हरेय॥४७॥

ॐ ह्रीं अकृतमनोमायाआरम्भपरमशांताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्वोक्त अकारित विधि सरूप, पायो निर आकुल सुख अनूप।
सर्वोत्तम पद पायो महान, हम पूजत हैं उर भक्ति ठान॥४८॥

ॐ ह्रीं अकारितमनोमायाआरंभनिराकुलाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(दोहा)

मायावी आरम्भ करि, मनमें आनन्द मान।
सो तुम त्यागो भाव यह, भये परम सुख खान॥४९॥

ॐ ह्रीं नानुमोदितमनोमायाआरंभ-अनन्तसुखाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

लोभी मन द्वारे नहीं, करैं सदा समरंभ।
हम अनन्त-दृग सिद्धपद, पूजत हैं मनथंभ॥५०॥

ॐ ह्रीं अकृतमनोलोभसंरम्भ-अनन्तदृगाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

लोभी मन समरंभ को, पर-सों नाहिं कराय।
दृगानन्द भावातमा, नमूँ सिद्ध मन लाय॥५१॥

ॐ ह्रीं अकारितमनोलोभसंरम्भदृगानन्दभावाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

लोभी मन समरंभमें, मानै नहिं आनन्द।
नमूँ नमूँ परमातमा, भये सिद्ध जगवंद॥५२॥

ॐ ह्रीं नानुमोदितमनोलोभसंरम्भ-सिद्धभावाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

समारम्भ नहिं करत हैं, लोभी मनके द्वार।
चिदानंद चिद्देव तुम, नमूँ लहूँ पद सार॥५३॥

ॐ ह्रीं अकृतमनोलोभसमारम्भ-चिद्देवाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पर सों भी पूर्वोक्त विधि, कबहूँ नहीं कराय।
निराकार परमात्मा, नमूँ सिद्ध हर्षाय॥५४॥

ॐ ह्रीं अकारितमनोलोभसमारंभ-अनाकाराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ऐसे ही पूर्वोक्त विधि, हर्षित होवे नाहिं।
चित्सरूप साकारपद, धारत हूँ उरमाहिं॥५५॥

ॐ ह्रीं नानुमोदितमनोलोभसमारम्भ-साकाराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

रचना हिंसा काजकी, लोभी मनके द्वार।
नहीं करैं हैं ते नमूँ, चिदानंद पद सार॥५६॥

ॐ ह्रीं अकृतमनोलोभारंभ-चिदानन्दाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

लोभी मन प्रेरित नहीं, पर को आरंभ हेत।
चिन्मय रूपी पद धरैं, नमूँ लहूँ निज खेत॥५७॥

ॐ ह्रीं अकारितमनोलोभारंभ-चिन्मयस्वरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मन लोभी आरंभमें, आनंद लहे न लेश।
निजपदमें नित रमत हैं, ध्याऊँ भक्ति विशेष॥५८॥

ॐ ह्रीं नानुमोदितमनोलोभारंभ-स्वरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(अडिल्ल)

क्रोधित जिय वचयोग द्वार उपयोगको।
रचना विधि संकल्प नाम समरंभ सो॥
तामें धरैं प्रवृत्ति पाप उपजावते।
नमूँ सिद्ध या बिन वचगुप्ति उपावते॥५९॥

ॐ ह्रीं अकृतवचनक्रोधसंरम्भ-वाग्गुप्तये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

क्रोध अग्नि करि निज उपयोग जरावहीं।
वचनयोग करि विधि संरम्भ करावहीं॥
सो तुम त्याग विभाव सुभाव सरूप हो।
नमूँ उरानन्द धार चिदानन्द रूप हो॥६०॥

ॐ ह्रीं अकारितवचनक्रोधसंरम्भ-स्वरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(सोरठा)

क्रोधित निज वच द्वार, मोदित हो संरंभमें।
सो तुम भाव विडार, नमूँ स्वानुभव लब्धियुत॥६१॥

ॐ ह्रीं नानुमोदितवचनक्रोधसंरम्भ-स्वानुभवलब्धये नमः अर्घ्यं निर्व०।

(दोहा)

क्रोध सहित वाणी नहीं, समारंभ परव्रत्त।
स्वानुभूति रमणी रमण, नमूँ सिद्ध कृतकृत्य॥६२॥

ॐ ह्रीं अकृतवचनक्रोधसमारम्भ-स्वानुभूतिरमणाय नमः अर्घ्यं निर्व०

समारंभ क्रोधित जिये, प्रेरित पर वच द्वार।
नमूँ सिद्ध इस कर्म बिन, धर्मधरा साधार॥६३॥

ॐ ह्रीं अकारितवचनक्रोधसमारंभ-साधारणधर्माय नमः अर्घ्यं निर्व०।

समारंभ मय वचन करि, हर्षित हो युत क्रोध।
नमूँ सिद्ध या बिन लहो, परम शांति सुख बोध॥६४॥

ॐ ह्रीं नानुमोदितवचनक्रोधसमारंभ-परमशांताय नमः अर्घ्यं निर्व०।

(मोतियादाम)

वैर वचयोग धरै जियरोष, करैं विधि भेद आरम्भ सदोष।
तजो यह सिद्ध भये सुखकार, नमूँ परमामृत तुष्ट अवार॥६५॥

ॐ ह्रीं अकृतवचनक्रोधारम्भ-परमामृततुष्टाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अकारित बैन सदा युत क्रोध, महा दुखकार आरम्भ अबोध।
भये समरूप महारस धार, नमैं हम सिद्ध लहैं भवपार॥६६॥

ॐ ह्रीं अकारितवचनक्रोधारम्भ-समरसाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(दोहा)

नानुमोद आरम्भमें, क्रोध सहित वच द्वार।
परम प्रीति निज आत्मरति, नमूँ सिद्ध सुखकार॥६७॥

ॐ ह्रीं नानुमोदितवचनक्रोधारम्भ-परमप्रीतये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(अडिल्ल)

वचन द्वार संरम्भ मानयुत के करैं,
जोड़ करण उपकरण मानसों ऊचरैं।
नानाविधि दुखभोग निजातमको हरैं,
नमूँ सिद्ध या बिन अविनश्वर पद धरैं॥६८॥

ॐ ह्रीं अकृतवचनमानसंरम्भ-अविनश्वरधर्माय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मान प्रकृति करि उदै करावै ना कदा,
वचनन करि संरंभ भेद वरणूं यदा।
मन इन्द्रिय अव्यक्तस्वरूप अनूप हो,
नमूँ सिद्ध गुणसागर स्वातमरूप हो॥६९॥

ॐ ह्रीं अकारित-वचनमानसंरम्भ-अव्यक्तस्वरूपाय नमः अर्घ्यं निर्व०।

(सोरठा)

नानुमोद वच योग, मान सहित संरम्भ मय।
दुर्लभ इन्द्री भोग, परम सिद्ध प्रणमूँ सदा॥७०॥

ॐ ह्रीं नानुमोदितवचनमानसंरम्भदुर्लभाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(चौपाई)

समारंभ निज वैनन द्वार, करत नहीं है मान संभार।
ज्ञान सहित चिन्मूरति सार, परम गम्य है निर-आकार॥७१॥

ॐ ह्रीं अकृतवचनमानसमारंभ-परमगम्यनिराकाराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वचन प्रवृत्ति मानयुत ठान, समारम्भ विधि नाहिं करान।
शुद्ध स्वभाव परम सुखकार, नमूँ सिद्ध उर आनन्द धार॥७२॥

ॐ ह्रीं अकारितवचनमानसमारंभ-परमस्वभावाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वचन प्रवृत्ति मानयुत होय, समारम्भमय हर्षित सोय।
त्यागत एक रूप ठहराय, नमूँ एकत्व गती सुखदाय॥७३॥

ॐ ह्रीं नानुमोदितवचनसमारम्भ-एकत्वगताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मानी जिय निज वचन उचार, वरतत है आरम्भ मंझार।
परमातम हो तजि यह भाव, नमूँ धर्मपति धर्मस्वभाव॥७४॥

ॐ ह्रीं अकृतवचनमानारंभ-परमात्मधर्मराजधर्मस्वभावाय नमः अर्घ्यं निर्व०।

(सोरठा)

मानी बोले बैन, पर-प्रेरण आरम्भमें।
सो त्यागो तुम ऐन, शाश्वत सुख आतम नमूँ॥७५॥

ॐ ह्रीं अकारितवचनमानारम्भ-शाश्वतानन्दाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

हर्षित वचन उचार, मान सहित आरम्भमय।
सो तुम भाव विडार, निजानन्द रस घन नमूँ॥७६॥

ॐ ह्रीं नानुमोदितवचनमानारम्भ-अमृतपूरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(पद्धरी)

धरि कुटिल भाव जो कहत वैन, संरम्भ रूप पापिष्ट एन।
तुम धन्य-धन्य यही रीति त्याग, हो बेहद धर्मस्वरूप भाग॥७७॥

ॐ ह्रीं अकृतवचनमायासंरम्भ-अनन्तधर्मैकरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मायायुत वचननको प्रयोग, संरम्भ करावत अशुभ भोग।
तुम यह कलंक नहिं धरो लेश, हो अमृत शशि पूजूँ हमेश॥७८॥

ॐ ह्रीं अकारितवचनमायासंरम्भ-अमृतचन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वच मायायुत संरम्भ कीन, सो पापरूप भाषी मलीन।
तिस त्याग अनेक गुणात्मरूप, राजत अनेक मूरत अनूप॥७९॥

ॐ ह्रीं नानुमोदितवचनमायासंरम्भ-अनेकमूर्तये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तुम समारम्भकी विधि विधान, नहिं करत कुटिलता भेद ठान।
हो नित्य निरंजन भाव-युक्त, मैं नमूँ सदा संशय विमुक्त॥८०॥

ॐ ह्रीं अकृतवचनमायासमारंभ-नित्यनिरंजनस्वभावाय नमः अर्घ्यं निर्व०।

(दोहा)

मायायुत निज बैनतैं, समारंभके हेत।
नहिं प्रेरित परको नमूँ, निजगुण धर्म समेत॥८१॥

ॐ ह्रीं अकारितवचनमायासमारंभ-आत्मैकधर्माय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मायाकरि बोलत नहीं, समारम्भ हर्षाय।
सूक्ष्म अतीन्द्रिय वृष नमूँ, नमूँ सिद्ध मन लाय॥८२॥

ॐ ह्रीं नानुमोदितवचनमायासमारंभ-आत्मैकधर्माय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मायायुत आरंभ की वचन प्रवृत्ति नशाय।
नमूँ अनन्त अवकाश गुण, ज्ञान द्वार सुखदाय॥८३॥

ॐ ह्रीं अकृतवचनमायारंभ-अनन्तावकाशाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मायायुत आरंभ मय, मेंट वचन उपदेश।
भये अमलगुण ते नमूँ, रागद्वेष नहीं लेश॥८४॥

ॐ ह्रीं अकारितवचनमायारंभ-अमलगुणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मायायुत आरम्भ मय, मेंट वचन आनन्द।
भये अनन्त सुखी नमूँ, सिद्ध सदा सुखवृन्द॥८५॥

ॐ ह्रीं नानुमोदितवचनमायारंभ-निरवधिसुखाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(अडिल्ल छन्द)

जो परिग्रह को चाह लोभ सो मानिये,
विधि-विधान-ठानत संरंभ बखानिये।
वचन द्वार नहीं करें नमूँ परमातमा,
सब प्रत्यक्ष लखें व्यापक धर्मातमा॥८६॥

ॐ ह्रीं अकृतवचनलोभसंरम्भ-व्यापकधर्माय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वर्तावन संरम्भ हेत परके तई,
लोभ उदै करि वचन कहै हिंसामई।
नमूँ सिद्ध पद यह विपरीति सु जिन हरो,
सकल चराचर ज्ञानी व्यापक गुण वरो॥८७॥

ॐ ह्रीं अकारितवचनलोभसंरम्भ-व्यापकगुणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

लोभी वच संरम्भ हर्ष परकाशनं, नाना विधि संचरे पाप दुख नाशनं।
सो तुम नाशत शाश्वत ध्रुवपदपाइयो, नमूं अचलगुणसहित सिद्ध मन भाइयो॥

ॐ ह्रीं नानुमोदितवचनलोभसंरम्भ-अचलाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥८८॥

(सोरठा)

समारम्भ के बैन, लोभ सहित पर आसरैं।
तज निरलम्बी ऐन, नमूँ, सिद्ध उर धारिकैं॥८९॥

ॐ ह्रीं अकृतवचनलोभसमारम्भ-निरालंबाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

समारंभ उपदेश, लोभ उदै थिति मेटिकें।
पायो अचल स्वदेश, नमूँ निराश्रय सिद्ध गुण॥९०॥

ॐ ह्रीं अकारितवचनलोभसमारम्भ-निराश्रयाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नानुमोद वच लोभ, समारंभ परवृत्त में।
नमूँ तिन्हैं तजि क्षोभ, नित्य अखण्ड विराजतें॥९१॥

ॐ ह्रीं नानुमोदितवचनलोभसमारम्भ-अखण्डाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(दोहा)

लोभ सहित आरम्भ को, करत नहीं व्याख्यान।
नूतन पंचम गति लहो, नमूँ सिद्ध भगवान॥९२॥

ॐ ह्रीं अकृतवचनलोभारंभ-परीतावस्थाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

लोभ वचन आरम्भ को, कहत न पर के हेत।
समयसार परमातमा, नमत सदा सुख देत॥९३॥

ॐ ह्रीं अकारितवचनलोभारम्भ-समयसाराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(सोरठा)

नानुमोद वच द्वार, लोभ सहित आरम्भमय।
अजर अमर सुखदाय, नमूँ निरन्तर सिद्धपद॥९४॥

ॐ ह्रीं नानुमोदितवचनलोभारम्भ-निरंतराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(अडिल्ल)

क्रोधित रूप भयंकर हस्तादिक तनी,
करत समस्या सो संरम्भ प्रकाशनी।
सो तुम नाशो काय गुप्ति करि यह तदा,
दृष्टि अगोचर काय गुप्ति प्रणमूँ सदा॥९५॥

ॐ ह्रीं अकृतकायक्रोधसंरम्भ-कायगुप्तये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(सोरठा)

पर प्रेरण निज काय, क्रोध सहित संरम्भ तज।
चेतन मूरति पाय, शुद्ध काय प्रणमूँ सदा॥९६॥

ॐ ह्रीं अकारितकायक्रोधसंरम्भ-शुद्धकायाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

हर्षित शीश हिलाय, क्रोध उदय सरंभ में।
त्यागत भये अकाय, नमूँ सिद्ध पद भावयुत॥९७॥

ॐ ह्रीं नानुमोदितकायक्रोधसंरम्भ-अकायाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

समारम्भ विधि मेटि, कायिक चेष्टा क्रोध की।
स्वै गुणपर्य समेट, भक्ति सहित प्रणमूँ सदा॥९८॥

ॐ ह्रीं अकृतकायक्रोधसमारम्भ-स्वान्वयगुणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(दोहा)

समारम्भ विधि क्रोध युत, तनसों नहीं कराय।
नित-प्रति रति निजभाव में, बंदूँ तिनके पांय॥९९॥

ॐ ह्रीं अकारितकायक्रोधसमारम्भ भावरतये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

समारम्भ सो कायसों, क्रोध सहित परसंस।
स्वै अभिन्न पद पाइयो, नमूँ त्याग सरवंस॥१००॥

ॐ ह्रीं नानुमोदितकायक्रोधसमारम्भ-स्वान्वयधर्माय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

क्रोधित कायारम्भ तजि, परसों रहित स्वभाव।
शुद्ध द्रव्य में रत नमूँ, निज सुख सहज उपाव॥१०१॥

ॐ ह्रीं अकृतकायक्रोधारम्भ-शुद्धद्रव्यरताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

क्रोधित कायारम्भ नहिं, रंच प्रंपच कराय।
पंचरूप संसार नाहिं, नमूँ पंचमगति राय॥१०२॥

ॐ ह्रीं अकारितकायक्रोधारम्भसंसार-छेदकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

क्रोधित कायारम्भ में, हर्ष-विषाद विडार।
अनेकांत वस्तुत्व गुण, धरै नमों पद सार॥१०३॥

ॐ ह्रीं नानुमोदितकायक्रोधारम्भ-जैनधर्माय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मान सहित संरंभ की, तनसों रचना त्याग।
पर प्रवेश बिन रूप जिन, लियो नमूँ बड़भाग॥१०४॥

ॐ ह्रीं अकृतकायमानसंरम्भस्वरूपगुप्तये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मान उदय संरम्भ विधि, तनसों नहीं कराय।
निज कृत पर उपकार बिन, लियो नमूँ तिन पाय॥१०५॥

ॐ ह्रीं अकारितकायमानसंरम्भ-निजकृतये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मान सहित संरंभ में, तनसों हर्ष न लेश।
ध्यान योग निज ध्येय पद, भावित नमूँ अशेष॥१०६॥

ॐ ह्रीं नानुमोदितकायमानसंरम्भ-ध्येयभावाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मदयुत तनसों रंच भी, समारंभ विधि नाहिं।
परमाराधन योगपद, पायो प्रणमूँ ताहिं॥१०७॥

ॐ ह्रीं अकृतकायमानसमारम्भ-परमाराधनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

समारम्भ निज कायसों, मदयुत नहीं कराय।
ज्ञानानन्द सुभाव युत, प्रणमूँ शीश नवाय॥१०८॥

ॐ ह्रीं अकारितकायमानसमारम्भा-आनंदगुणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

समारम्भ मन विधि सहित, तनसों हर्ष न होय।
निजानंद नन्दित तिन्हैं, नमूँ सदा मद खोय॥१०९॥

ॐ ह्रीं नानुमोदितकायमानसमारम्भ-स्वानंदानन्दिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति०।

(अर्द्ध चौपाई)

अकृत मानारंभ शरीर, पर अनिंद्य बन्दूँ धर धीर॥११०॥

ॐ ह्रीं अकृतकायमानारम्भसंतोषाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कायारंभ अकारित मान, स्वस्वरूप-रत बन्दूँ तान॥१११॥

ॐ ह्रीं अकारितकायमानारम्भस्वरूपरताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मानारंभ अनन्दित काय, प्रणमूँ विमल शुद्ध पर्याय॥

ॐ ह्रीं नानुमोदितकायमानारम्भशुद्धपर्यायाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(दोहा)

मायायुत संरम्भ विधि, तनसों करत न आप।
गुप्त निजामृत रस लहैं, नमूँ तिन्हैं तज पाप॥११२॥

ॐ ह्रीं अकृतकायमायासंरम्भ-अमृतगर्भाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मायायुत संरम्भ विधि, तनसों नहीं कराय।
मुख्य धर्म चैतन्यता, विलसे प्रणमूँ पाय॥११३॥

ॐ ह्रीं अकारितकायमायासंरम्भचैतन्याय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मायायुत संरम्भ मय, नानुमोदयुत काय।
वीतराग आनन्द पद, समरस भावन भाय॥११४॥

ॐ ह्रीं नानुमोदितकायमायासंरम्भ-समरसीभावाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति०।

समारम्भ माया सहित, अकृत तन विच्छेद।
बन्ध दशा निज पर द्विविध, नमत नसै भव खेद॥११५॥

ॐ ह्रीं अकृतकायमायासमारम्भबंधच्छेदकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

समारम्भ तन कुटिलसों, भये अकारित स्वामि।
निज परिणति परिणमन बिन, गुण स्वातंत्र नमामि॥११६॥

ॐ ह्रीं अकारितकायमायासमारम्भस्वातंत्र्यधर्माय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नानुमोदित तन कुटिलता, समारम्भ विधि देव।
गुण अनन्त युत परिणमूँ, धर्म समूही एव॥११७॥

ॐ ह्रीं नानुमोदितकायमायासमारम्भ-धर्मसमूहाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति०।

मायायुत निज देहसों, नहीं आरम्भ करेह।
परमातम सुख अक्ष-बिन, पायो बन्दूँ तेह॥११८॥

ॐ ह्रीं अकृतकायमायारम्भपरमात्मसुखाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मायारम्भ शरीर करि, परसों नहीं करान।
निष्ठातम स्वस्थित नमूँ, सिद्धराज गुणखान॥११९॥

ॐ ह्रीं अकारितकायमायारम्भनिष्ठात्मने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मायारम्भ शरीरसों, नानुमोद भगवन्त।
दर्शज्ञानमय चेतना, सहित नमें नित 'सन्त'॥१२०॥

ॐ ह्रीं नानुमोदितकायमायारम्भचेतनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(अर्द्ध पद्धरी)

संरम्भ चाह नहिं काययोग, चित परिणति नमि शुद्धोपयोग॥१२१॥

ॐ ह्रीं अकृतकायलोभसंरम्भपरमचित्परिणताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

संरम्भ अकारित लोभ देह, निज आतम रत स्वसमेय तेह॥१२२॥

ॐ ह्रीं अकारितकायलोभसंरम्भ-स्वसमयरताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

संरम्भ लोभ तन हर्ष नाश, नमि व्यक्त धर्म केवल प्रकाश॥१२३॥

ॐ ह्रीं नानुमोदितकायलोभसंरम्भ-व्यक्तधर्माय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(सोरठा)

लोभी योग शरीर, समारम्भ विधि नाशके।
ध्रुव आनन्द अतीव, पायो पूजूँ सिद्धपद॥१२४॥

ॐ ह्रीं अकृतकायलोभसमारम्भ-नित्यसुखाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

लोभ अकारित काय, समारम्भ निज कर्म हनि।
पायो पद अकषाय, सिद्ध वर्ग पूजूँ सदा॥१२५॥

ॐ ह्रीं अकारितकायलोभसमारम्भ-अकषायाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्ववर्तनानन्द, परिग्रह इच्छा मेटिकें।
पायो शौच स्वछन्द, नमूँ सिद्ध पद भक्ति युत॥१२६॥

ॐ ह्रीं नानुमोदितकायलोभसमारम्भ-शौचगुणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति०।

(दोहा)

काय द्वार आरम्भ की, लोभ उदय विधि नाश।
नमों चिदातम पद लियो, शुद्ध ज्ञान परकाश॥१२७॥

ॐ ह्रीं अकृतकायलोभारम्भ-चिदात्मने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

काय द्वार आरम्भ विधि, लोभ उदय न कराय।
निज अवलम्बित पद लियो, नमूँ सदा तिन पाय॥१२८॥

ॐ ह्रीं अकारितकायलोभारम्भ-निरालंबाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

लोभी तन आरम्भ में, आनन्द रीति मेंट।
नमूँ सिद्ध पद पाइयो, निज आतम गुण श्रेष्ठ॥१२९॥

ॐ ह्रीं नानुमोदितकायलोभारम्भात्मने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(सवैया)

जेते कछु पुद्गल परमाणु शब्दरूप,
भये हैं, अतीत काल आगे होनहार हैं।
तिनको अनंत गुण करत अनंतबार,
ऐसे महाराशि रूप धरैं विसतार हैं॥

सब ही एकत्र होय सिद्ध परमातमके,
मानो गुण गण उचरन अर्थधार हैं।
तौ भी इक समयके अनंत भाग अनंदको,
कहत न कहैं हम कौन परकार हैं॥

ॐ ह्रीं अष्टाविंशत्यधिकशतगुणयुक्तसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

(दोहा)

शिवगुण सरधा धार उर, भक्ति भाव है सार।
केवल निज आनन्द करि, करूँ सुजस उच्चार॥

(पद्धरी)

जय मदन कदन मन करण नाश, जय शांतिरूप निज सुख विलास।
जय कपट सुभट पट करन सूर, जय लोभ क्षोभ मद दम्भ चूर॥१॥
पर-परिणतिसों अत्यन्त भिन्न, निज परिणतिसों अति ही अभिन्न।
अत्यन्त विमल सब ही विशेष, मल लेश शोध राखो न शेष॥२॥
मणि दीप सार निर्विघन ज्योत, स्वाभाविक नित्य उद्योत होत।
त्रैलोक्य शिखर राजत अखण्ड, सम्पूरण द्युति प्रगटी प्रचण्ड॥३॥
मुनि-मन-मन्दिर को अन्धकार, तिस ही प्रकाशसौं नशत सार।
सो सुलभ रूप पावै निजार्थ, जिस कारण भव-भव भ्रमे व्यर्थ॥४॥
जो कल्प-काल में होत सिद्ध, तुम छिन ध्यावत लहिये प्रसिद्ध।
भवि पतितन को उद्धार हेत, हस्तावलम्ब तुम नाम देत॥५॥
तुम गुण सुमिरण सागर अथाह, गणधर सरीख नहीं पार पाह।
जो भवदधि पार अभव्य रास, पावे न वृथा उद्यम प्रयास॥६॥
जिन-मुख द्रहसों निकसी अभंग, अति वेग रूप सिद्धान्त गंग।
नय-सप्त-भंग-कल्लोल मान, तिहुँ लोक वही धारा प्रमान॥७॥
सो द्वादशांग वाणी विशाल, ता सुनत पढ़त आनन्द रसाल।
यातें जग में तीरथ सुधाम, कहिलायो है सत्यार्थ नाम॥८॥

सो तुम ही सों है शोभनीक, नातर जल सम जु वहै सु ठीक।
निज पर आतमहित आत्म-भूत, जबसे है जब उतपत्ति सूत॥९॥
ज्यों महाशीत ही हिम प्रवाह, है मेटन समरथ अगनि दाह।
त्यों आप महा मंगलस्वरूप, पर विघन विनाशन सहज रूप॥१०॥
है 'सन्त' दीन तुम भक्ति लीन, सो निश्चय पावै पद प्रवीण।
तातैं मन-वच-तन भाव धार, तुम सिद्धनकूँ मम नमस्कार॥११॥

ॐ ह्रीं अर्हं अष्टाविंशत्यधिकशतदलोपरिस्थितसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(दोहा)

जो तुम ध्यावें भावसों, ते पावें निज भाव।
अगनि पाक संयोग करि, शुद्ध सुवर्ण उपाव॥१२॥

ॐ ह्रीं अर्हं अष्टाविंशत्यधिकशतगुणसंयुक्तविराजमानाय श्रीसिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(यहाँ १०८ बार 'ॐ ह्रीं अर्हं असिआउसा नमः' मंत्र का जाप करें।)

॥ इत्याशीर्वादः ॥

षष्ठम पूजा

(दो सौ छप्पन गुण सहित)

(छप्पय)

ऊरध अधो सु रेफ सबिंदु हकार विराजै,
अकारादि स्वर लिप्त कर्णिका अन्त सु छाजै।
वर्गनिपूरित वसुदल अम्बुज तत्त्व संधिधर,
अग्रभागमें मंत्र अनाहत सोहत अतिवर॥
पुनि अंत ह्रीं बेढ्यो परम, सुर ध्यावत अरि नागको।
ह्वै केहरि सम पूजन निमित, सिद्धचक्र मंगल करो॥

ॐ ह्रीं श्री सिद्धचक्राधिपतये नमः, षड्पंचाशदधिकद्विशतगुणसंयुक्ताय श्रीसिद्धपरमेष्ठिन् ! अत्रावतरावतर संवौषट् आह्वाननम्। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम्। (पुष्पांजलिं क्षिपेत्)

(दोहा)

सूक्ष्मादिक गुण सहित हैं, कर्म रहित निरोग।
सकल सिद्ध सो थापहूँ, मिटे उपद्रव योग॥

(इति यंत्रस्थापनार्थं पुष्पांजलिं क्षिपेत्)

अथाष्टकं

(गीता)

अति नम्रता तिहुँ योगमें निज भक्ति निर्मल भावहीं।
यह गुप्त जल प्रत्यक्ष निर्मल सलिल तीरथ लावहीं॥
यह उभय द्रव्य संयोग त्रिभुवन पूज्य पूज रचावहीं।
द्वै अर्द्धशत षट अधिक नाम उचार विरद सु गावहीं॥

ॐ ह्रीं षड्पंचाशदधिकद्विशतगुणसंयुक्ताय श्रीसिद्धपरमेष्ठिने जन्मजरारोग-विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ॥१॥

अति वास विषय न वासनायुत मलय शील सुभावहीं।
अरु चंदनादि सुगन्ध द्रव्य मनोज्ञ प्राशुक लावहीं॥यह उभय०॥

ॐ ह्रीं श्री षड्पंचाशदधिकद्विशतगुणसहिताय श्रीसिद्धपरमेष्ठिने संसारताप-विनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा ॥२॥

परिणाम धवल सुवर्ण अक्षत मलिन मन न लगावहीं।
तिस सार अक्षय अखय स्वच्छ सुवास पुंज बनावहीं॥
यह उभय द्रव्य संयोग त्रिभुवन पूज्य पूज रचावहीं।
द्वै अर्द्धशत षट अधिक नाम उचार विरद सु गावहीं॥

ॐ ह्रीं षड्पंचाशदधिकद्विशतगुणसहिताय श्रीसिद्धपरमेष्ठिने अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा ॥३॥

मन पाग भक्त्यनुराग आनंद तान माल पुरावही।
तिस भाग कुसुम सुहाग अर सुर नागबास सु लावही॥यह उभय० ॥

ॐ ह्रीं षड्पंचाशदधिकद्विशतगुणसहिताय श्रीसिद्धपरमेष्ठिने कामबाणविनाशनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ॥४॥

जिनभक्तिरस में तृप्तता मन आन स्वाद न चावहीं।
अंतर चरू बाहिज मनोहर रसिक नेवज लावहीं॥यह उभय० ॥

ॐ ह्रीं षड्पंचाशदधिकद्विशतगुणसहिताय श्रीसिद्धपरमेष्ठिने क्षुधारोग-विनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥५॥

सरधान दीप प्रदीप्त अंतर मोह तिमिर नशावहीं।
मणिदीप जगमग ज्योति तेज सुभास भेंट धरावहीं॥यह उभय० ॥

ॐ ह्रीं षड्पंचाशदधिकद्विशतगुणसहिताय श्रीसिद्धपरमेष्ठिने मोहांधकार-विनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा ॥६॥

आनन्द धर्म प्रभावना मन घटा धूम्र सु छावहीं।
गंधित दरव शुभ घ्राण प्रिय अति अग्नि संग जरावहीं॥यह उभय० ॥

ॐ ह्रीं षड्पंचाशदधिकद्विशतगुणसहिताय श्रीसिद्धपरमेष्ठिने अष्टकर्मदहनाय धूपं०।७।

शुभ चिंतवन फल विविध रस युत भक्ति तरु उपजावहीं।
रसना लुभावन कल्पतरु के सुर असुर मन भावहीं॥यह अभय० ॥

ॐ ह्रीं षड्पंचाशदधिकद्विशतगुणसहिताय श्रीसिद्धपरमेष्ठिने मोक्षफलप्राप्तये फलं०।८।

समकित विमल वसु अंग युत करि अर्घ अन्तर भावहीं।
वसु दरब अर्घ बनाय उत्तम देहु हर्ष उपावहीं॥यह उभय० ॥

ॐ ह्रीं षड्पंचाशदधिकद्विशतगुणसंयुक्ताय श्रीसिद्धपरमेष्ठिने अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥९॥

(गीता)

निर्मल सलिल शुभ वास चन्दन, धवल अक्षत युत अनी।
शुभ पुष्प मधुकर नित रमें, चरु प्रचुर स्वाद सुविधि घनी॥
वर दीपमाल उजाल धूपायन, रसायन फल भले।
करि अर्घ सिद्ध-समूह पूजत, कर्मदल सब दलमले॥
ते क्रमावर्त नशाय युगपत, ज्ञान निर्मल रूप हैं।
दुख जन्म टाल अपार गुण, सूक्षम स्वरूप अनूप हैं॥
कर्माष्ट बिन त्रैलोक्य पूज्य, अदूज शिव कमलापती।
मुनि ध्येय सेय अमेय, चहुँ गुण गेह, द्यो हम शुभमती॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं षड्पंचाशदधिकद्विशतगुणसंयुक्ताय श्रीसिद्धचक्राधिपतये पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दो सौ छप्पन गुण सहित अर्घ्यं

(चौपाई)

मिथ्यातम कारण दुखकारा, नित्य निरंजन विधि संसारा।
तिस हनि समरथ अतिशयरूपा, केवल पाय नमूँ शिव भूपा॥१॥

ॐ ह्रीं चिरन्तरसंसारकारण-ज्ञाननिर्द्धूतोद्भूतकेवलज्ञानातिशयसंपन्नाय सिद्धाधिपतये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मन-इन्द्रिय निमित मतिज्ञाना, योग देश तिष्ठत पद जाना।
क्षय उपशम आवर्ण विनाशो, नमों सिद्ध स्वज्ञान प्रकाशो॥२॥

ॐ ह्रीं अभिनिबोधवारकविनाशकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

द्वादश अंगरूप अज्ञाना, श्रुत आवरणी भेद बखाना।
क्षय उपशम आवर्ण विनाशो, नमों सिद्ध स्वज्ञान प्रकाशो॥३॥

ॐ ह्रीं द्वादशांगश्रुतावरणीकर्मविमुक्ताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

है असंख्य लोकावधि जेते, अवधिज्ञान के भेद सु तेते।
क्षय उपशम आवर्ण विनाशो, नमों सिद्ध स्वज्ञान प्रकाशो॥४॥

ॐ ह्रीं असंख्यभेदलोक-अवधिज्ञानावरणविमुक्ताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति०।

है असंख्य परमान प्रमाना, मनपर्यय के भेद बखाना।
क्षय उपशम आवर्ण विनाशो, नमों सिद्ध स्वज्ञान प्रकाशो॥५॥

ॐ ह्रीं असंख्यप्रकारमनः पर्ययज्ञानावरणकर्मविमुक्ताय नमः अर्घ्यं निर्व०।

निखिल रूप गुणपर्यय ज्ञानं, सत स्वरूप प्रत्यक्ष प्रमानं।
केवल आवर्णी विधि नाशो, नमों सिद्ध स्वज्ञान प्रकाशो॥६॥

ॐ ह्रीं निखिलरूप-गुणपर्याय-बोधककेवलज्ञानावरणविमुक्ताय नमः अर्घ्यं०।

द्वारपती भूपति के ताईं, रोक रहै देखन दे नाहीं।
सोई दर्शनावरण विनाशो, नमों सिद्ध स्वज्ञान प्रकाशो॥७॥

ॐ ह्रीं सकलदर्शनावरणकर्मविनाशकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मूर्तीक पदको प्रतिभासन, नेत्र द्वार होवै परकाशन।
चक्षु-दर्शनावरण विनाशो, नमों सिद्ध स्वज्ञान प्रकाशो॥८॥

ॐ ह्रीं चक्षुदर्शनावरणकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दृग बिन अन्य इन्द्री मन द्वारे, वस्तुरूप सामान्य उघारे।
अदृग-दर्शनावरण विनाशो, नमों सिद्ध स्वज्ञान प्रकाशो॥९॥

ॐ ह्रीं अचक्षुदर्शनावरणरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश-काल-द्रव-भाव प्रमानं, अवधि दर्श होवे सब ठानं।
अवधि-दर्श-आवरण विनाशो, नमों सिद्ध स्वज्ञान प्रकाशो॥१०॥

ॐ ह्रीं अवधिदर्शनावरणरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

बिन मर्यादा सकल तिंहु काल, होंय प्रकट घटपट तिंह हाल।
केवल दर्शनावरण विनाशो, नमों सिद्ध स्वज्ञान प्रकाशो॥११॥

ॐ ह्रीं केवलदर्शनावरणरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

बैठे खड़े पड़ै घुम्मरिया, देखे नहीं निद्रा की विरिया।
निद्रा दर्शनावरण विनाशो, नमों सिद्ध स्वज्ञान प्रकाशो॥१२॥

ॐ ह्रीं निद्राकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सावधानि कितनी की जावे, रंच नेत्र उघड़न नहीं पावे।
निद्रा निद्रा कर्म विनाशो, नमों सिद्ध स्वज्ञान प्रकाशो॥१३॥

ॐ ह्रीं निद्रानिद्राकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मंदरूप निद्रा का आना, अवलोकै जाग्रतहि समाना।
प्रचला दर्शनावरण विनाशो, नमों सिद्ध स्वज्ञान प्रकाशो॥१४॥

ॐ ह्रीं प्रचलाकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मुखसों लार बहै अति भारी, हस्त पाद कंपत दुखकारी।
प्रचला-प्रचला वर्ण विनाशो, नमों सिद्ध स्वज्ञान प्रकाशो॥१५॥

ॐ ह्रीं प्रचलाप्रचलाकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सोता हुआ करै सब काजा, प्रगटावै प्राकर्म समाजा।
यह स्त्यानगृद्धि विधि नाशो, नमों सिद्ध स्वज्ञान प्रकाशो॥१६॥

ॐ ह्रीं स्त्यानगृद्धिकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जे पदार्थ हैं इन्द्रिय योग, ते सब वेदे जिय निज जोग।
सोई नाम वेदनी होई, नमूँ सिद्ध तुम नासो सोई॥१७॥

ॐ ह्रीं वेदनीयकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

रति के उदय भोग सुखकार, भोगै जिय शुभ विविध प्रकार।
साता भेद वेदनी होय, नमूँ सिद्ध तुम नाशो सोय॥१८॥

ॐ ह्रीं सातावेदनीयकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अरति उदय जिय इन्द्री द्वार, विषयभोग वेदे दुखकार।
एही भेद असाता होय, नमूँ सिद्ध तुम नाशो सोय॥१९॥

ॐ ह्रीं असातावेदनीयकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ज्यों असावधानी मदपान, करत मोह विधितैं सो जान।
ता विधि करि निज लाभ न होय, नमूँ सिद्ध तुम नाशो सोय॥२०॥

ॐ ह्रीं मोहकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जाके उदय तत्त्व परतीत, सत्य रूप नहीं हो विपरीत।
पंच भेद मिथ्यात निवार, भये सिद्ध प्रणमूँ सुखकार॥२१॥

ॐ ह्रीं मिथ्यात्वकर्मविनाशनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रथमोपशम समकित जब गले, मिथ्या समकित दोनों मिले।
मिश्र भेद मिथ्यात निवार, भये सिद्ध प्रणमूँ सुखकार॥२२॥

ॐ ह्रीं सम्यक्मिथ्यात्वकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दर्शन में कुछ मल उपजाय, करै समल नहिं मूल नसाय।
सम्यक्-प्रकृति मिथ्यात निवार, भये सिद्ध प्रणमूँ सुखकार॥२३॥
ॐ ह्रीं सम्यक्त्वप्रकृतिमिथ्यात्वरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

धर्म-मार्ग में उपजे रोष, उदय भये मिथ्यात सदोष।
यह अनन्त-अनुबंध निवार, भये सिद्ध प्रणमूँ सुखकार॥२४॥
ॐ ह्रीं अनन्तानुबन्धीक्रोधकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देव-धर्म-गुरुसों अभिमान, उदय भये मिथ्या सरधान।
यह अनन्त-अनुबंध निवार, भये सिद्ध प्रणमूँ सुखकार॥२५॥
ॐ ह्रीं अनन्तानुबन्धीमानकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

छलसों धर्म रीति दलमलै, उदय होय मिथ्या जब चलै।
यह अनन्त-अनुबंध निवार, प्रणमूँ सिद्ध महासुखकार॥२६॥
ॐ ह्रीं अनन्तानुबन्धीमायाकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

लोभ उदय निर्मालय दर्ब, भक्षे महानिंद मति सर्व।
यह अनन्त अनुबंध निवार, भये सिद्ध प्रणमूँ सुखकार॥२७॥
ॐ ह्रीं अनन्तानुबन्धीलोभकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(सुन्दरी)

क्रोध करि अणुव्रत नहिं लीजिये, चारितमोह प्रकृति सु भनीजिए।
है अप्रत्याख्यानी कर्म सो, भये सिद्ध नमूँ तिन नासियो॥२८॥
ॐ ह्रीं अप्रत्याख्यानावरणक्रोधकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मान करि अणुव्रत न हो कदा, रहै अव्रत युत दर्शन सदा।
है अप्रत्याख्यानी कर्म सो, भये सिद्ध नमूँ तिन नासियो॥२९॥
ॐ ह्रीं अप्रत्याख्यानावरणमानकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देशव्रती श्रावक नहीं होत है, वक्रताको जहँ उद्योत है।
है अप्रत्याख्यानी कर्म सो, भये सिद्ध नमूँ तिन नासियो॥३०॥
ॐ ह्रीं अप्रत्याख्यानावरणमायाविमुक्ताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मोह लोभ चरित जे जिय बसे, देशव्रत श्रावक नहीं ते लसे।
है अप्रत्याख्यानी कर्म सो, भये सिद्ध नमूँ तिन नासियो॥३१॥
ॐ ह्रीं अप्रत्याख्यानावरणलोभविमुक्ताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(अडिल्ल)

प्रत्याख्यानी क्रोध सहित जे आचरे,
देशव्रती सो सकल व्रत नाहीं धरे।
चारितमोह सु प्रकृति रूप तिह नाम है,
नाश कियो मैं नमूँ सिद्ध शिवधाम है।।३२।।

ॐ ह्रीं प्रत्याख्यानावरणक्रोधविमुक्ताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रत्याख्यानभिमान महान न शक्ति है,
जास उदय पूरणसंयम अव्यक्त है।
चारितमोह सु प्रकृति रूप तिह नाम है,
नाश कियो मैं नमूँ सिद्ध शिवधाम है।।३३।।

ॐ ह्रीं प्रत्याख्यानावरणमानरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रत्याख्यानी माया मुनि-पदकों हतै,
श्रावकव्रत पूरण नहीं खंडे जासतैं।
चारितमोह सु प्रकृति रूप तिह नाम है,
नाश कियो मैं नमूँ सिद्ध शिवधाम है,।।३४।।

ॐ ह्रीं प्रत्याख्यानावरणमायारहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्रावक पदमें जास लोभको वास है,
प्रत्याख्यानी श्रुतमें संज्ञा त्रास है।
चारितमोह सु प्रकृति रूप तिह नाम है,
नाश कियो मैं नमूँ सिद्ध शिवधाम है।।३५।।

ॐ ह्रीं प्रत्याख्यानावरणलोभरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(भुजंगप्रयात)

यथाख्यात चारित्रको नाश कारा,
महाव्रतको जास में हो उजारा।
यही संज्वलन क्रोध सिद्धान्त गाया,
नमूँ सिद्धके चरण ताको नसाया।।३६।।

ॐ ह्रीं संज्वलनक्रोधरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

रहै संज्वलन रूप उद्योत जेते,
न हो सर्वथा शुद्धता भाव तेते।
यही संज्वलन मान सिद्धान्त गाया,
नमूँ सिद्धके चरण ताको नसाया॥३७॥

ॐ ह्रीं संज्वलनमानरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वहै संज्वलन की जहाँ मंद धारा,
लहै है तहाँ शुक्लध्यानी उभारा।
यही संज्वलन माया सिद्धान्त गाया,
नमूँ सिद्ध के चरण ताको नसाया॥३८॥

ॐ ह्रीं संज्वलनमायारहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जहाँ संज्वलन लोभ है रंच नाहीं,
निजानंद को वास होवे तहाँ ही।
यही संज्वल लोभ सिद्धान्त गाया,
नमूँ सिद्ध के चरण ताको नसाया॥३९॥

ॐ ह्रीं संज्वलनलोभरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(मोदक)

जा किर हास्य भाव जुत होतहिं, हास्य किये परकी यह पातहिं।
सो तुम नाश कियो जगनाथहिं, शीश नमूँ तुमको धरि हाथहिं॥४०॥

ॐ ह्रीं हास्यकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥

प्रीत करै पर सों रति मानहिं, सो रति भेद विधी तिज जानहिं।
सो तुम नाश कियो जगनाथहिं, शीश नमूँ तुमको धरि हाथहिं॥४१॥

ॐ ह्रीं रतिकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जो परसों परसन्न न हो मन, आरति रूप रहै निज आनन।
सो तुम नाश कियो जगनाथहिं, शीश नमूँ तुमको धरि हाथहिं॥४२॥

ॐ ह्रीं अरतिकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जा करि पावत इष्ट वियोगहिं, खेदमई परिणाम सु शोकहिं।
सो तुम नाश कियो जगनाथहिं, शीश नमूँ तुमको धरि हाथहिं॥४३॥

ॐ ह्रीं शोककर्मरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

हो उद्वेग उच्चाटन रूपहिं, मन तन कंपित होत अरूपहिं।
सो तुम नाश कियो जगनाथहिं, शीस नमूँ तुमको धरि हाथहिं॥४४॥

ॐ ह्रीं भयकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(सवैया)

जो परको अपराध उघारत, जो अपनो कछु दोष न जाने।
जो परके गुण औगुण जानत, जो अपने गुण को प्रगटाने॥
सो जिनराज बखान जुगुप्सित, है जियनो विधि के वश ऐसो।
हे भगवंत! नमूँ तुमको तुम, जीति लियो छिन में अरि तैसो॥४५॥

ॐ ह्रीं जुगुप्साकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जो नर नारि रमावन की, निजसों अभिलाष धरै मनमाहीं।
सो अति ही परकाश हिये नित, काम की दाह मिटै छिन माहीं॥
सो जिनराज बखान नपुंसक, वेद हनो विधिके वश ऐसो।
हे भगवंत! नमूँ तुमको, तुम जीति लियो छिन में अरि तैसो॥४६॥

ॐ ह्रीं नपुंसकवेदरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जो तिय संग रमें विधि यो मन, औरन से कछु आनन्द माने।
किंचित काम जगै उर में नित, शांति सुभावन की शुधि ठाने॥
सो जिनराज, बखानत है, नर-वेद हनो विधि के वश ऐसो।
हे भगवन्त! नमूँ तुमको, तुम जीत लियो छिन में अरि तैसो॥४७॥

ॐ ह्रीं पुरुषवेदरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जो नर संग रमें सुख मानत, अन्तर गूढ़ न जानत कोई।
हाव विलास हि लाज धरै मन, आतुरता करि तृप्त न होई॥
सो जिनराज बखानत है, तिय-वेद हनो विधि के वश ऐसो।
हे भगवन्त! नमूँ तुमको, तुम जीत लियो छिन में अरि तैसो॥४८॥

ॐ ह्रीं स्त्रीवेदरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(वसन्ततिलका)

आयु प्रमाण दृढ़ बंधन और नाहीं,
गत्यानुसार थिति पूरण कर्ण नाहीं।

सोई विनाश कीनो तुम देव नाथा,
वंदूँ तुम्हें तरणकारण जोर हाथा॥४९॥

ॐ ह्रीं आयुकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जो है कलेश अवधि सब होत जासों,
तेतीस सागर रहे थिति नर्क तासों।
सोई विनाश कीनों तुम देव नाथा,
वंदूँ तुम्हें तरणकारण जोर हाथा॥५०॥

ॐ ह्रीं नरकायुरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

याही प्रकार जितने दिन देव देही,
नासै अकाल नहिं जे सुर आयु से ही।
सोई विनाश कीनों तुम देव नाथा,
वंदूँ तुम्हें तरणकारण जोर हाथा॥५१॥

ॐ ह्रीं देवायुरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जासों करैं त्रिर्यग की थिति आउ पूरी,
सोई कहो त्रिजग आयु महालघूरी।
सोई विनाश कीनों तुम देव नाथा,
वंदूँ तुम्हें तरणकारण जोर हाथा॥५२॥

ॐ ह्रीं तिर्यंचायुरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जेते नरायु विधि दे रस आप जाको,
तेते प्रजाय नर रूप भुगाय ताको।
सोई विनाश कीनों तुम देव नाथा,
वंदूँ तुम्हें तरणकारण जोर हाथा॥५३॥

ॐ ह्रीं मनुष्यायुरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(पद्धड़ी)

जो करे जीवको बहु प्रकार, ज्यों चित्रकार चित्राम सार।
सो नामकर्म तुम नाश कीन, मैं नमूँ सदा उर भक्तिलीन॥५४॥

ॐ ह्रीं नामकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जासों उपजे तिर्यंच जीव, रहै ज्ञानहीन निर्बल सदीव।
सो तिर्यग्गति तुम नाश कीन, मैं नमूँ सदा उर भक्तिलीन॥५५॥

ॐ ह्रीं तिर्यंचगतिरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जा उदय नारकी देह पाय, नाना दुख भोगे नर्क जाय।
सो नरकगती तुम नाश कीन, मैं नमूँ सदा उर भक्तिलीन॥५६॥

ॐ ह्रीं नरकगतिरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चउ विधि सुरपद जासों लहाय, विषयातुर नित भोगे उपाय।
सो देवगती तुम नाश कीन, मैं नमूँ सदा उर भक्तिलीन॥५७॥

ॐ ह्रीं देवगतिकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जा उदय भये मानुष्य होत, लहै नीच ऊँच ताको उद्योत।
सो मानुष गति तुम नाश कीन, मैं नमूँ सदा उर भक्तिलीन॥५८॥

ॐ ह्रीं मनुष्यगतिरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(कामिनी-मोहन)

एक ही भाव सामान्यका पावना, जीवकी जातिका भेद सो गावना।
होत जो थावरा एक इन्द्री कहो, पूजहूँ सिद्धके चरण ताको दहो॥५९॥

ॐ ह्रीं एकेन्द्रिय-जातिरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

फसकि साथमें जीभ जो आ मिले, पांयसों आपने आप भूपर चले।
गामिनी कर्म सो दोय इन्द्री कहो, पूजहूँ सिद्ध के चरण ताको दहो॥६०॥

ॐ ह्रीं द्वीन्द्रिय-जातिरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नाक हो और दो आदि के जोड़ में हो उदय चालना योगसों दोल में।
गामिनी कर्म सो तीन इन्द्री कहों, पूजहूँ सिद्ध के चरण ताको दहो॥६१॥

ॐ ह्रीं त्रीन्द्रिय-जातिरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

आँख हो नाक हो जीभ हो फर्श हो, कान के शब्द का ज्ञान जामें न हो।
गामिनी कर्मसों चार इन्द्री कहो, पूजहूँ सिद्ध के चरण ताको दहो॥६२॥

ॐ ह्रीं चतुरिन्द्रिय-जातिरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कान भी आ मिले जीव जा जाति में, हो असंज्ञी सुसंज्ञी दो भाँति में।
गामिनी कर्म की पंच इन्द्री कहो, पूजहूँ सिद्ध के चरण ताको दहो॥६३॥

ॐ ह्रीं पंचेन्द्रिय-जातिरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

लावनी

हो उदार जो प्रगट उदारिक, नाम कर्म की प्रकृति भनी।
लहै औदारिक देह जीव तिस, कर्म प्रकृति के उदय तनी॥
भये अकाय अमूरति आनंद, पुंज चिदातम ज्योति बनी।
नमूँ तुम्हें कर जोर युगल तुम सकल रोगथल काय हनी॥६४॥

ॐ ह्रीं औदारिकशरीरविमुक्ताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

निज शरीर को अणिमादिक करि, बहु प्रकार प्रणमाय वरे।
वैक्रिय तन कहलावे है यह, देव नारकी मूल धरे॥भये०॥६५॥

ॐ ह्रीं वैक्रियिकशरीरविमुक्ताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

धवल वर्ण शुभ योगी संशय-हरण अहारक का पुतला।
जो प्रमत्त गुणथानक मुनि के, देह औदारिकसों निकला॥भये०॥६६॥

ॐ ह्रीं आहारकशरीररहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पुद्गलीक तन कर्म वर्गणा, कारमाण परदीप्त करण।
तैजस नाम शरीर शास्त्र में, गावत हैं नहिं तेज वरण॥भये०॥६७॥

ॐ ह्रीं तैजसशरीररहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पुद्गलीक वरगणा जीवसों, एक क्षेत्र अवगाही है।
नूतन कारण करण मूल तन, कारमाण तिस नाम कहै॥भये०॥६८॥

ॐ ह्रीं कार्माणशरीररहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(इन्द्रवज्रा)

जेते प्रदेशा तन बीच आवैं, सारे मिलैं जोड़ न छिद्र पावें।
संघात नामा जिय देह जानो, पूजूँ तुम्हैं सिद्ध यह कर्म हानो॥६९॥

ॐ ह्रीं औदारिकसंघातरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ऐसे प्रकारा तनमें अहारा, संधी मिलाया कर वेतसारा।
संघात नामा जिय देह जानो, पूजूँ तुम्हैं सिद्ध यह कर्म हानो॥७०॥

ॐ ह्रीं आहारकसंघातरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वैक्रिय के जोड़ जो होत ताही, संघातनामा जिन वैन माहीं।
संघात नामा जिय देह जानो, पूजूँ तुम्हैं सिद्ध यह कर्म भानो॥७१॥

ॐ ह्रीं वैक्रियकसंघातरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तेजस्सके अंग उपंग सारे, संधी मिलाया तिस माँहि धारे।
संघात नामा जिय देह जानो, पूजूँ तुम्हें सिद्ध यह कर्म हानो॥७२॥

ॐ ह्रीं तैजससंघातरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ज्ञानादि आवर्ण वो कर्म-काया, ताको मिलाया श्रुत माँहि गाया।
संघात नामा जिय देह जानो, पूजूँ तुम्हें सिद्ध यह कर्म हानो॥७३॥

ॐ ह्रीं कार्माणसंघातरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(चौबोला)

पुद्गलीक वर्गणा जोग तैं, जब जिय करत अहारा।
प्रणवावे तिनको एकत्र करि, बंध उदय अनुसारा॥
यही औदारिक बन्धन तुमने, छेद किये निरधारा।
भये अबंध अकाय अनूपम, जजूँ भक्ति उर धारा॥७४॥

ॐ ह्रीं औदारिकबन्धनरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वैक्रियक तन परमाणु मिल, परम्परा अनिवारा।
हो स्कन्ध रूप पर्याई, यह बन्धन परकारा॥
वैक्रियिक तनु बन्धन तुमने, छेद कियो निरधारा।
भये अबंध अकाय अनूपम, जजूँ भक्ति उर धारा॥७५॥

ॐ ह्रीं वैक्रियिकबन्धनच्छेदकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मुनि शरीरसों बाहिज निसरे, संशय नाशनहारा।
ताको मिले प्रदेश परस्पर, हो सम्बन्ध अवारा॥
यही अहारक बन्धन तुमने, छेद कियो निरधारा।
भये अबंध अकाय अनूपम, जजूँ भक्ति उरधारा॥७६॥

ॐ ह्रीं आहारकबन्धनच्छेदकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दीप्त जोति जो कारमाणकी, रहै निरन्तर लारा।
जहाँ तहाँ नहिं बिखरैं किन ज्यों, बहै एक ही धारा॥
तैजस नामा बंधन तुमने, छेद कियो निरधारा।
भये अबंध अकाय अनूपम, जजूँ भक्ति उरधारा॥७७॥

ॐ ह्रीं तैजसबन्धनरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

द्रव्य कर्म ज्ञानावरणादिक, पुद्गल जाति पसारा।
एक क्षेत्र अवगाही जियको, दुविधि भाव करतारा॥
कारमाण यह बंधन तुमने, छेद कियो निरधारा।
भये अबंध अकाय अनूपम, जजूँ भक्ति उरधारा॥७८॥

ॐ ह्रीं कार्माणबन्धनरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(रोला)

तन आकृत संस्थान आदि, समचतुरस्र बखानो,
ऊपर तले समान यथाविधि सुन्दर जानो।
यह विपरीत स्वरूप त्याग पायो निजात्म पद,
बीजभूत कल्याण नमूँ, भव्यनि प्रति सुखप्रद॥७९॥

ॐ ह्रीं समचतुस्रसंस्थानविमुक्ताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ऊपर से हो थूल तले हो न्यून देह जिस,
परिमण्डलनिग्रोध नाम वरणो सिद्धांत तिस॥यह विपरीत०॥८०॥

ॐ ह्रीं न्यग्रोधपरिमण्डलसंस्थानरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नीचे से हो थूल न्यून होवे उपराही,
बमई सम वामीक देह जिन आज्ञा माही॥यह विपरीत०॥८१॥

ॐ ह्रीं वामीकसंस्थानरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जो कूबड़ आकार रूप पावे तन प्राणी,
कुब्ज नाम संस्थान ताहि बरणैं जिन वानी॥यह विपरीत०॥८२॥

ॐ ह्रीं कुब्जकनामसंस्थानरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

लघुसों लघु ठिगना रूप एम तन होवे जाको,
वामन है परसिद्ध लोक में कहिये ताको॥यह विपरीत०॥८३॥

ॐ ह्रीं वामनसंस्थानरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जित तित बहु आकार कहीं नहिं हो यकसारू,
हुँडक अति असुहावन पाप फल प्रगट उघारू ॥यह विपरीत०॥८४॥

ॐ ह्रीं हुँडकसंस्थानरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(लक्ष्मीधरा)

जीव आपभावसों जु कर्म की क्रिया करते,
अंग वा अपंग सो शरीर के उदय समेत।

सो औदारिकी शरीर अंग वा उपंग नाश,
सिद्धरूप हो नमों सु पाइयो अबाध वास॥८५॥॥

ॐ ह्रीं औदारिकांगोपांगरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देव नारकी शरीर माँस रक्त से न होत,
तास को अनेक भाँति आप देसकै उद्योत।
वैक्रियिक सो शरीर अंग वा उपंग नाश,
सिद्धरूप हो नमों सु पाइयो अबाध वास॥८६॥

ॐ ह्रीं वैक्रियिकांगोपांगरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

साधु के शरीर मूल-तें कढ़े प्रशंसयोग,
संशय को विध्वंसकार केवली सु लेत भोग।
आहारक सो शरीर अंग वा उपंग नाश,
सिद्धरूप हो नमों सु पाइयो अबाध वास॥८७॥

ॐ ह्रीं आहारकांगोपांगरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(गीता)

संहनन बन्धन हाड़ होय अभेद वज्र सो नाम है,
नाराच कीली वृषभ डोरी बाँधने की ठाम है।
है आदि को जो संहनन जिम वज्र सब परकार हो,
यह त्याग बंध-अबंध निवसौ परम आनन्दधार हो॥८८॥

ॐ ह्रीं वज्रर्षभनाराचसंहननरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ज्यों वज्र की कीली ठुकी हो हाड़ संधी में जहाँ,
सामान्य वृषभ जु जेवरी ताकरि बंधाई हो तहाँ।
है दूसरा संहनन यह नाराच वज्र प्रकार हो,
यह त्याग बंध-अबंध निवसौ परम आनंदधार हो॥८९॥

ॐ ह्रीं वज्रनाराचसंहननरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नहिं वज्रकी हो वृषभ अरु, नाराच भी नहीं वज्र हो,
सामान्य कीली करि ठुकी, सब हाड़ वज्र समान हो।
है तीसरा संहनन जो, नाराच ही परकार हो,
यह त्याग बंध-अबंध निवसौ, परम आनंदधार हो॥९०॥

ॐ ह्रीं नाराचसंहननरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

हो जड़ित छोटी कीलिका, सो संधि हाड़ों की जबै,
कछु ना विशेषण वज्र के, सामान्य ही होवे सबै।
है चौथवाँ संहनन जो, नाराच अर्द्ध प्रकार हो,
यह त्याग बंध-अबंध निवसौ, परम आनंदधार हो॥९१॥

ॐ ह्रीं अर्द्धनाराचसंहननरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जो परस्पर जड़ित होवे, संधि हाड़न की जहाँ,
नहिं कीलिका सो ठुकी होवे, साल संधी के तहाँ।
है पाँचवाँ संहनन जो, कीलक नाम कहाय हो,
यह त्याग बंध-अबंध निवसौ, परम आनंदधार हो॥९२॥

ॐ ह्रीं कीलिकसंहननरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कछु छिद्र कछुक मिलाप होवे, संधि हाड़ोमय सही,
केवल नसासों होय बेढी, मांससों लतपत रही।
अंतिम स्फाटिक संहनन यह, हीन शक्ति असार हो,
यह त्याग बंध-अबंध निवसौ, परम आनंदधार हो॥९३॥

ॐ ह्रीं स्फाटिकसंहननरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(दोहा)

वर्ण विशेष न स्वेत है, नामकर्म तन धार।
स्वच्छ स्वरूपी हो नमूँ ताहि कर्मरज टार॥९४॥

ॐ ह्रीं स्वेतनामकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वर्ण विशेष न पीत है, नामकर्म तन धार॥स्वच्छ...॥

ॐ ह्रीं पीतनामकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥९५॥

वर्ण विशेष न रक्त है, नामकर्म तन धार॥स्वच्छ...॥

ॐ ह्रीं रक्तनामकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥९६॥

वर्ण विशेष न हरित है, नामकर्म तन धार॥स्वच्छ...॥

ॐ ह्रीं हरितनामकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥९७॥

वर्ण विशेष न कृष्ण है, नामकर्म तन धार॥स्वच्छ...॥

ॐ ह्रीं कृष्णनामकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा...॥९८॥

गंध विशेष न शुभ कहो, नामकर्म तन धार॥स्वच्छ...॥
ॐ ह्रीं सुगन्धनामकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥९९॥
गंध विशेष न अशुभ है, नामकर्म तन धार॥स्वच्छ...॥
ॐ ह्रीं दुर्गन्धनामकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥१००॥
स्वाद विशेष न तिक्त है, नामकर्म तन धार॥स्वच्छ...॥
ॐ ह्रीं तिक्तरसरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥१०१॥
स्वाद विशेष न कटुक है, नामकर्म तन धार॥स्वच्छ...॥
ॐ ह्रीं कटुकरसरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥१०२॥
स्वाद विशेष न आम्ल है, नामकर्म तन धार॥स्वच्छ...॥
ॐ ह्रीं आम्लरसरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥१०३॥
स्वाद विशेष न मधुर है, नामकर्म तन धार॥स्वच्छ...॥
ॐ ह्रीं मधुरसरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥१०४॥
स्वाद विशेष न कषाय है, नामकर्म तन धार॥स्वच्छ...॥
ॐ ह्रीं कषायरसरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥१०५॥
फर्स विशेष न नर्म है, नामकर्म तन धार॥स्वच्छ...॥
ॐ ह्रीं मृदुत्वस्पर्शरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥१०६॥
फर्स विशेष न कठिन है, नामकर्म तन धार॥स्वच्छ...॥
ॐ ह्रीं कठिनस्पर्शरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥१०७॥
फर्स विशेष न भार है, नामकर्म तन धार॥स्वच्छ...॥
ॐ ह्रीं गुरुस्पर्शरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥१०८॥
फर्स विशेष न अगुरु है, नामकर्म तन धार॥स्वच्छ...॥
ॐ ह्रीं लघुस्पर्शरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥१०९॥
फर्स विशेष न शीत है, नामकर्म तन धार॥स्वच्छ...॥
ॐ ह्रीं शीतस्पर्शरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥११०॥
फर्स विशेष न उष्ण है, नामकर्म तन धार॥स्वच्छ...॥
ॐ ह्रीं उष्णस्पर्शरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥१११॥

फर्स विशेष न चिकण है, नामकर्म तन धार॥स्वच्छ...॥

ॐ ह्रीं स्निग्धस्पर्शरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥११२॥

फर्स विशेष न रूक्ष है, नामकर्म तन धार॥स्वच्छ...॥

ॐ ह्रीं रूक्षस्पर्शरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥११३॥

(मरहठा)

हो जो प्रजाप्त वर, पणइन्द्रीधर, जाय नर्क निरधार।
विग्रहसु चाल में, अंतराल में, धरै पूर्व आकार॥
सो नर्क नामकरि, गावत गणधर, आनुपूर्वी सार।
तुम ताहि नशायो, शिवगति पायो, नमित लहूँ भवपार॥११४॥

ॐ ह्रीं नरकगत्यानुपूर्वीछेदकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

निजकाय छांडकरि, अंत समय मरि, होय पशू अवतार।
विग्रहसु चाल में, अन्तराल में, धरैं पूर्व आकार॥
सो तिर्यंच नामकरि, गावत गणधर, आनुपूर्वी सार।
तुम ताहि नशायो, शिवगति पायो, नमित लहूँ भवपार॥११५॥

ॐ ह्रीं तिर्यंचगत्यानुपूर्वीविमुक्ताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

समकितसों मर वा कलेश करि, धरहिं देवगति चार।
विग्रहसु चाल में, अन्तराल में, धरै पूर्व आकार॥
सो देव नामकरि, गावत गणधर, आनुपूर्वी सार।
तुम ताहि नशायो, शिवगति पायो, नमित लहूँ भवपार॥११६॥

ॐ ह्रीं देवगत्यानुपूर्वीविमुक्ताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

हो मिश्र प्रणामी वा शिवगामी वरै मनुजगति सार।
विग्रहसु चाल में अन्तराल में धरै पूर्व आकार॥
सो मनुष्य नामकरि गावत गणधर, आनूपूर्वी सार।
तुम ताहि नशायो शिवगति पायो, नमित लहूँ भवपार॥११७॥

ॐ ह्रीं मनुष्यगत्यानुपूर्वीविमुक्ताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(त्रोटक)

तनभार भए निज घात ठने, तिसकी कछु विधि ऐसी जु बने।
अपघात सुकर्म सिद्धांत भनो, जग पूज्य भए तसु मूल हनो॥११८॥

ॐ ह्रीं अपघातकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

विष आदि अनेक उपाधि धरै, पर प्राणनिको निर्मूल करै।
परघाति सु कर्म सिद्धांत भनो, जग पूज्य भए तिस मूल हनो॥११९॥

ॐ ह्रीं परघातनामकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अति तेजमई परदीप्त महा, रवि-बिंब विषै जिय भूमि लहा।
यह आतप कर्म सिद्धांत भनो, जग पूज्य भये तिस मूल हनो॥१२०॥

ॐ ह्रीं अतितेजमयी आतप-नामकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

परकासमई जिम बिंब शशी, पृथिवी जिय पावत देह इसी।
द्युति नाम सुकर्म सिद्धांत भनो, जग पूज्य भये तिस मूल हनो॥१२१॥

ॐ ह्रीं उद्योतनामकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तन की थिति कारण स्वास गहै, स्वर अन्तर बाहर भेद वहै।
यह स्वास सुकर्म सिद्धांत भनो, जग पूज्य भये तिस मूल हनो॥१२२॥

ॐ ह्रीं स्वासकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शुभ चाल चलैं अपनी जिसमें, शशि ज्यों नभ सोहत है तिसमें।
नभमें गति कर्म सिद्धांत भनो, जग पूज्य भये तिस मूल हनो॥१२३॥

ॐ ह्रीं विहायोगतिनामकर्मविमुक्ताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

इक इन्द्रिय जात विरोध मई, चतुरांति सुभावक प्राप्त भई।
त्रस नाम सुकर्म सिद्धांत भनो, जग पूज्य भये तिस मूल हनो॥१२४॥

ॐ ह्रीं त्रसनामकर्मविमुक्ताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

इक इन्द्रिय जातहिं पावत है, अरु शेष न ताहि धरावत है।
यह थावर कर्म सिद्धांत भनो, जग पूज्य भये तिस मूल हनो॥१२५॥

ॐ ह्रीं स्थावरनामकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पर में परवेश न आप करैं, पर को निज में नहिं थाप धरैं।
यह बादर कर्म सिद्धांत भनो, जग पूज्य भये तिस मूल हनो॥१२६॥

ॐ ह्रीं बादरनामकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जलसों दवसों नहीं आप मरै, सब ठौर रहै पर को नम हरै।
यह सूक्षम कर्म सिद्धांत भनो, जग पूज्य भये तिस मूल हनो॥१२७॥

ॐ ह्रीं सूक्ष्मनामकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जिसतें परिपूरणता करि है, जिन शक्ति समान उदय धरि है।
पर्याप्त सुकर्म सिद्धांत भनो, जग पूज्य भये तिस मूल हनो॥१२८॥

ॐ ह्रीं पर्याप्तकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

परिपूरणता नहिं धार सके, यह होत सभी साधारण के।
अपरयापति कर्म सिद्धांत भनो, जग पूज्य भये तसु मूल हनो॥१२९॥

ॐ ह्रीं अपर्याप्तकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जिम लोहन भार धरै तन में, जिम आकन फूल उड़े वन में।
है अगुरुलघु यह भेद भनो, जग पूज्य भये तसु मूल हनो॥१३०॥

ॐ ह्रीं अगुरुलघुकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

इक देह विषैं इक जीव रहै, इकलो तिसको सब भोग लहै।
परतेक सुकर्म सिद्धांत भनो, जग पूज्य भय तसु मूल हनो॥१३१॥

ॐ ह्रीं प्रत्येककर्मरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

इक देह विषैं बहु जीव रहैं, इक साथ सभी तिस भोग लहैं।
यह भेद निगोद सिद्धांत भनो, जग पूज्य भये तसु मूल हनो॥१३२॥

ॐ ह्रीं साधारणनामकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(उपेन्द्रवज्रा)

चलै न जो धातु तजै न वासा, यथाविधि आप धरै निवासा।
यही प्रकारा थिर नाम भासो, नमामि देवं तिस देह नासो॥१३६॥

ॐ ह्रीं स्थिरनामकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अनेक थानं मुख गौण धातं, चलंति धारं निजवासघातं।
यही प्रकाराऽथिर नाम भासो, नमामि देवं तिस देह नासो॥१३४॥

ॐ ह्रीं अस्थिरनामकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

यथाविधी देह विशाल सोहै, मुखारविंदादिक सर्व मोहै।
यही प्रकारा शुभ नाम भासो, नमामि देवं तिस देह नासो॥१३५॥

ॐ ह्रीं शुभनामकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

असुन्दराकार शरीर माँहीं, लखों जहाँसों विडरूप ताहीं।
यहै प्रकाराऽशुभ नाम भासो, नमामि देवं तिस देह नासो॥१३६॥

ॐ ह्रीं अशुभनामकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अनेक लोकोत्तम भावधारी, करैं सभी तापर प्रीति भारी।
सुभगता को यह भेद भासो, नमामि देवं तिस देह नासो॥१३७॥

ॐ ह्रीं सुभगनामकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

धरै अनेका गुण तो न जासों, करैं कभी प्रीति न कोई तासों।
दुर्भग ताको यह भेद भासो, नमामि देवं तिस देह नासो॥१३८॥

ॐ ह्रीं दुर्भगनामकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(पद्धड़ी)

ध्वनि बीन भाँति ज्यों मधुर बैन, निसरै पिक आदिक सुरस दैन।
यह सुस्वर नाम प्रकृति कहाय, तुम हनी नमूँ निज शीस लाय॥१३९॥

ॐ ह्रीं सुस्वरनामकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

गर्दभस्वर जैसो कहो भास, तैसो रव अशुभ कहो सु भास।
यह दुस्वर नाम प्रकृति कहाय, तुम हनी नमूँ निज शीस लाय॥१४०॥

ॐ ह्रीं दुस्वरनामकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(अडिल्ल)

होत प्रभामई कांति महा रमणीक जू।
जग जन मन भावन माने यह ठीक जू॥
यह आदेय सुप्रकृति नाश निजपद लहो।
ध्यावत हैं जगनाथ तुम्हैं हम अघ दहो॥१४१॥

ॐ ह्रीं आदेयनामकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

रूखो मुखको वरण लेश नहिं कांतिको।
रूखे केश नखाकृति तन बढ़ भांतिको॥
अनादेय यह प्रकृति नाश निजपद लहो।
ध्यावत हैं जगनाथ तुम्हैं हम अघ दहो॥१४२॥

ॐ ह्रीं अनादेयनामकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

होत गुप्त गुण तौ भी जगमें विस्तरैं।
जगजन सुजस उचारत ताकी थुति करैं॥

यह जस प्रकृति विनाश सुभावी यश लहो।
ध्यावत हैं जगनाथ तुम्हें हम अघ दहो॥१४३॥

ॐ ह्रीं यशः प्रकृतिछेदकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जासु गुणनको औगुण कर सब ही ग्रहैं।
करत काज परशंसित पण निंदित कहैं॥
अपयश प्रकृति विनाश सुभावी यश लहो।
ध्यावत हैं जगनाथ तुम्हें हम अघ दहो॥१४४॥

ॐ ह्रीं अपयशः नामकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

योग थान नेत्रादिक ज्यों के त्यों बनों।
रचित चतुर कारीगर करते हैं तनो॥
यह निर्माण विनाश सुभावी पद लहो।
ध्यावत हैं जगनाथ तुम्हें हम अघ दहो॥१४५॥

ॐ ह्रीं निर्माणनामकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पंचकल्याणक चौंतिस अतिशय राजही।
प्रातिहार्य अठ समोसरण द्युति छाजही॥
तीर्थंकर विधि विभव नाश निजपद लहो।
ध्यावत हैं जगनाथ तुम्हें हम अघ दहो॥१४६॥

ॐ ह्रीं तीर्थंकरप्रकृतिरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(चाल छंद)

जो कुम्भकार की नाई, छिन घट छिन करत सुराई।
सो गोत कर्म परजारा, हम पूज रचो सुखकारा॥१४७॥

ॐ ह्रीं गोत्रकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

लोकनिमें पूज्य प्रधाना, सब करत विनय सनमाना।
यह ऊँच गोत्र परजारा, हम पूज रचो सुखकारा॥१४८॥

ॐ ह्रीं उच्चगोत्रकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जिसको सब कहत कमीना, आचरण धरे अति हीना।
यह नीच गोत्र परजारा, हम पूज रचो सुखकारा॥१४९॥

ॐ ह्रीं नीचगोत्रकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ज्यों दे न सके भण्डारी, परधन को हो रखवारी।
यह अन्तराय परजारा, हम पूज रचो सुखकारा॥१५०॥

ॐ ह्रीं अन्तरायकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

हो दान देन को भावा, दे सके न कोटि उपावा।
दानांतराय परजारा, हम पूज रचो सुखकारा॥१५१॥

ॐ ह्रीं दानांतरायकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मन दान लेन को भावे, दातार प्रसंग न पावै।
लाभांतराय परजारा, हम पूज रचो सुखकारा॥१५२॥

ॐ ह्रीं लाभांतरायकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पुष्पादिक चाहै भोगा, पर पाय न अवसर योगा।
भोगांतराय परजारा, हम पूज रचो सुखकारा॥१५३॥

ॐ ह्रीं भोगांतरायकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तिय आदिक बारम्बारा, नहिं भोग सके हितकारा।
उपभोगांतराय परजारा, हम पूज रचो सुखकारा॥१५४॥

ॐ ह्रीं उपभोगांतरायकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चेतन निज बल प्रकटावे, यह योग कबहुँ नहिं पावे।
वीर्यान्तराय परजारा, हम पूज रचो सुखकारा॥१५५॥

ॐ ह्री वीर्यान्तरायकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ज्ञानावरणादिक नामी, निज काज उदय परिणामी।
अठ भेद कर्म परजारा, हम पूज रचो सुखकारा॥१५६॥

ॐ ह्रीं अष्टकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

इकसौ अड़ताल प्रकारी, उत्तर विधि सत्ता धारी।
सब प्रकृति कर्म परजारा, हम पूज रचो सुखकारा॥१५७॥

ॐ ह्रीं एकशताष्टचत्वारिंशत् कर्मप्रकृतिरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

परणाम भेद संख्याता, जो वचन योग में आता।
संख्यात कर्म परजारा, हम पूज रचो सुखकारा॥१५८॥

ॐ ह्रीं संख्यातकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

है वचननसों अधिकाई, परिणाम भेद दुखदाई।
विधि असंख्यात परजारा, हम पूज रचो सुखकारा॥१५९॥

ॐ ह्रीं असंख्यातकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अविभाग प्रछेद अनन्ता, जो केवलज्ञान लहन्ता।
यह कर्म अनन्त परजारा, हम पूज रचो सुखकारा॥१६०॥

ॐ ह्रीं अनन्तकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सब भाग अनन्तानन्ता, यह सूक्ष्मभाव धरंता।
विधि नन्तानन्ता परजारा, हम पूज रचो सुखकारा॥१६१॥

ॐ ह्रीं अनन्तानन्तकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(मोतियादाम)

न हो परिणाम विषैं कछु खेद, सदा इकसा प्रणवै बिन भेद।
निजाश्रित भाव रमैं सुखधाम, करूँ तिस आनन्दकों पिरणाम॥१६२॥

ॐ ह्रीं आनन्दस्वभावाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥

धरैं जितने परिणामन भेद, विशेषनि तैं सब ही बिन खेद।
पराश्रितता बिन आनन्द धर्म, नमूँ तिन पाय लहूँ पद शर्म॥१६३॥

ॐ ह्रीं आनन्दधर्माय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥

न हो परयोग निमित्त विभाव, सदा निवसै निज आनन्द भाव।
यहीं वरणो परमानन्द धर्म, नमूँ तिन पाय लहूँ पद पर्म॥१६४॥

ॐ ह्रीं परमानन्दधर्माय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥

कबहुँ परसों कछु द्वेष न होत, कबहुँ पुनि हर्ष विशेष न होत।
रहैं निज ही निज भावन लीन, नमूँ पद साम्य सुभाव सु लीन॥१६५॥

ॐ ह्रीं साम्यस्वभावाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥१६५॥

निजाकृति में नहिं लेश कषाय, अमूरति शांतिमई सुखदाय।
आकुलता बिन साम्य स्वरूप, नमूँ तिनको निज आनन्द रूप॥१६६॥

ॐ ह्रीं साम्यस्वरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अनन्त गुणातम द्रव्य पर्याय, यही विधि आप धरैं बहु भाय।
सभी कुमति करि हो अलखाय, नमूँ जिनवैन भली विधि गाय॥१६७॥

ॐ ह्रीं अनन्तगुणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अनन्त गुणातम रूप कहाय, गुणी-गुण भेद सहा प्रणमाय।
महागुण स्वच्छमयी तुम रूप, नमूँ तिनको पद पाइ अनूप॥१६८॥

ॐ ह्रीं अनन्तगुणस्वरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अभेद सुभेद अनेक सु एक, धरो इन आदिक धर्म अनेक।
विरोधित भावनसों अविरुद्ध, नमूँ जिन आगम की विधि शुद्ध॥१६९॥

ॐ ह्रीं अनन्तधर्माय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

रहै धर्मी निज धर्म सरूप, न हो परदेशनसों अन्यरूप।
चिदातम धर्म सभी निजरूप, धरो प्रणमूँ मन भक्ति स्वरूप॥१७०॥

ॐ ह्रीं अनन्तधर्मस्वरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(चौपाई)

हीनाधिक नहीं भाव विशेष, आतमीक आनन्द हमेश।
सम स्वभाव सोई सुखराज, प्रणमूँ सिद्ध मिटै भववास॥१७१॥

ॐ ह्रीं समस्वभावाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

इष्टानिष्ट मिटो भ्रम जाल, पायो निज आनन्द विशाल।
साम्य सुधारसको निज भोग, नमूँ सिद्ध सन्तुष्ट मनोग॥१७२॥

ॐ ह्रीं संतुष्टाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पर पदार्थ को इच्छुक नाहिं, सदा सुखी स्वातम पद माहिं।
मेटो सकल राग अरु दोष, प्रणमूँ राजत सम सन्तोष॥१७३॥

ॐ ह्रीं समसंतोषाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मोह उदय सब भाव नसाय, मेटो पुद्गलीक पर्याय।
शुद्ध निरंजन समगुण लहो, नमूँ सिद्ध परकृत दुख दहो॥१७४॥

ॐ ह्रीं साम्यगुणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

निजपदसों थिरता नहिं तजैं, स्वानुभूत अनुभव निज भजैं।
निराबाध तिष्ठैं अविकार, साम्यस्थाई गुण भण्डार॥१७५॥

ॐ ह्रीं साम्यस्थाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

भव सम्बन्धी काज निवार, अचल रूप तिष्ठैं समधार।
कृत्याकृत्य साम्य गुण पाइयो, भक्ति सहित हम शीश नाइयो॥१७६॥

ॐ ह्रीं साम्यकृत्याकृत्यगुणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(झूलना)

भूल नहीं भय करैं, छोभ नाहीं धरैं, गैरकी आसको त्रास नाहीं धरैं।
शरण काकी चहै, सबनको शरण है, अन्य की शरण बिन नमूँ ताही वरैं॥

ॐ ह्रीं अनन्यशरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥१७७॥

द्रव्य षट्में नहीं, आप गुण आप ही, आपमें राजते सहज नीको सही।
स्वगुण अस्तित्वता, वस्तुकी वस्तुता, धरत हो मैं नमूँ आपही को स्वता॥

ॐ ह्रीं अनन्यगुणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥१७८॥

गैरसे गैर हो आपमें रमाइयो, स्व चतुर खेत में वास तिन पाइयो।
धर्म समुदाय हो परमपद पाइयो, मैं तुम्हें भक्तियुत शीश निज नाइयो॥

ॐ ह्रीं अनन्यधर्माय नंः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥१७९॥

साधना जबतई, होत है तबतई, दोऊ परिणामको काज जामें नहीं।
आप निजपद लियो, तिन जलांजलि दियो,
अन्य नहीं चहत निज शुद्धता में लियो॥

ॐ ह्रीं परिणामविमुक्ताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥१८०।।

(तोमर)

दृग ज्ञान पूरणचन्द्र, अकलंक ज्योति अमन्द।
निद्वन्द ब्रह्मस्वरूप, नित पूजहूँ चिद्रूप॥१८१॥

ॐ ह्रीं ब्रह्मस्वरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सब ज्ञानमयी परिणाम, वर्णादिको नहिं काम।
निरद्वन्द ब्रह्मस्वरूप, नित पूजहूँ चिद्रूप॥१८२॥

ॐ ह्रीं ब्रह्मगुणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

निज चेतनागुण धार, बिन रूप हो अविकार।
निरद्वन्द ब्रह्मस्वरूप, नित पूजहूँ चिद्रूप॥१८३॥

ॐ ह्रीं ब्रह्मचेतनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(सुन्दरी)

अन्य रूप सु अन्य रहै सदा, पर निमित्त विभाव न हो कदा।
कहत हैं मुनि शुद्ध सुभावजी, नमूँ सिद्ध सदा तिन पायजी॥१८४॥

ॐ ह्रीं शुद्धस्वभावाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पर परिणामनसों नहिं मिलत हैं, निज परिणामनसों नहिं चलत हैं।
परिणामी शुद्ध स्वरूप एह, नमूँ सिद्ध सदा नित पाँय तेह॥१८५॥

ॐ ह्रीं शुद्धपारिणामिकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वस्तुता व्यवहार नहीं ग्रहै, उपस्वरूप असत्यारथ कहै।
शुद्ध स्वरूप न ताकरि साध्य है, निर्विकल्प समाधि अराध्य है॥१८६॥

ॐ ह्रीं अशुद्धरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

द्रव्य पर्यायार्थिक नय दोऊ, स्वानुभव में विकलप नहिं कोई।
सिद्ध शुद्धाशुद्ध अतीत हो, नमत तुम निज पद परतीत हो॥१८७॥

ॐ ह्रीं शुद्धाशुद्धरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(चौपाई)

क्षय उपशम अवलोकन टारो, निज गुण क्षाइक रूप उघारो।
युगपत सकल चराचर देखा, ध्यावत हूँ मन हर्ष विशेषा॥१८८॥

ॐ ह्रीं अनन्तदृगस्वरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जब पूरण अवलोकन पायो, तब पूरण आनन्द उपायो।
अविनाभाव स्वयं पद देखा, ध्यावत हूँ मन हर्ष विशेषा॥१८९॥

ॐ ह्रीं अनन्तदृगानन्दस्वभावाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नाश सु पूर्वक हो उतपादा, सत लक्षण परिणति मरजादा।
क्षय उपशम तन क्षायक पेखा, ध्यावत हूँ मन हर्ष विशेषा॥१९०॥

ॐ ह्रीं अनन्तदृगुत्पादकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नित्य रूप निज चित पद माहीं, अन्य रूप पलटन को नाहीं।
द्रव्य-दृष्टि में यह गुण देखा, ध्यावत हूँ मन हर्ष विशेषा॥१९१।

ॐ ह्रीं अनन्तध्रुवाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कर्म नाश जो स्व-पाद पावै, रञ्च मात्र फिर अन्त न आवै।
यह अव्यय गुण तुममें देखा, ध्यावत हूँ मन हर्ष विशेषा॥१९२॥

ॐ ह्रीं अव्ययभावाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पर नहिं व्यापै तुम पद माँहीं, पर में रमण भाव तुम नाहीं।
निज करि निज में निज लय देखा, ध्यावत हूँ मन हर्ष विशेषा॥१९३॥

ॐ ह्रीं अनन्तनिलयाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(शंखनारी)

अनंताभिधानो गुणकार जानो। धरो आप सोई, नमूँ मान खोई॥१९४॥

ॐ ह्रीं अनन्ताकाराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अनंता स्वभावा विशेषन उपावा। धरो आप सोई, नमूँ मान खोई॥१९५॥

ॐ ह्रीं अनन्तस्वभावाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

विनाकाररूपा यह चिन्मयस्वरूपा। धरो आप सोई, नमूँ मान खोई॥१९६॥

ॐ ह्रीं चिन्मयस्वरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सदा चेतना में, न हो अन्यतामें। धरो आप सोई, नमूँ मान खोई॥१९७॥

ॐ ह्रीं चिद्रूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(दोहा)

जो कुछ भाव विशेष हैं, सब चिद्रूपी धर्म।
असाधारण पूरण भये, नमत नशें सब कर्म॥१९८॥

ॐ ह्रीं चिद्रूपधर्माय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

परकृति व्याधि विनाशके, निज अनुभव की प्राप्त।
भई नमूँ तिनको लहूँ, यह जगवास समाप्त॥१९९॥

ॐ ह्रीं स्वानुभवोपलब्धिरमाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

निरावरण निज ज्ञान करि, निज अनुभव की डोर।
गहो लहो थिरता रहो, रमण ठोर नहीं और॥२००॥

ॐ ह्रीं स्वानुभूतिरताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सरवोत्तम लौकीक रस-सुधा कुरस सब त्याग।
निज पद परमामृत रसिक, नमूँ चरण बड़भाग॥२०१॥

ॐ ह्रीं परमामृतरताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

विषयामृत विषसम अरुचि, अरस अशुभ असुहान।
जान निजानन्द परमरस, तुष्ट सिद्ध भगवान॥२०२॥

ॐ ह्रीं परमामृततुष्टाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शंकातीत अतीतसों, धरैं प्रीति निज माँहि।
अमल हिये संतनि प्रिये, परम प्रीति नमूँ ताहि॥२०३॥

ॐ ह्रीं परमप्रीताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अक्षय आनन्द भाव युत, नित हितकार मनोग।
सज्जन चित वल्लभ परम, दुर्जन दुर्लभ योग॥२०४॥

ॐ ह्रीं परमवल्लभयोगाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शब्द गन्ध रस फरस नहिं नहीं वरण आकार।
बुद्धि गहै नहिं पार तुम, गुप्त भाव निरधार॥२०५॥

ॐ ह्रीं अव्यक्तभावाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सर्व दर्वसों भिन्न हैं, नहिं अभिन्न तिहुँ काल।
नमूँ सदा परकाश धर, एकहि रूप विशाल॥२०६॥

ॐ ह्रीं एकत्वस्वरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सर्व दर्वसों भिन्नता, निज गुण निज में वास।
नमूँ अखंड परमातमा, सदा सुगुण की राश॥२०७॥

ॐ ह्रीं एकत्वगुणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सर्व दर्व परिणामसों, मिलै न निज परिणाम।
नमूँ निजानंद ज्योति घन, नित्य उदय अभिराम॥२०८॥

ॐ ह्रीं एकत्वभावाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(चौपाई)

पर संयोग तथा समवाय, यह संवाद न हो द्वै भाय।
नित्य अभेद एकता धरो, प्रणमूँ द्वैत भाव तुम हरो॥२०९॥

ॐ ह्रीं द्वैतभावविनाशकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूरव पर्याय नासियो सोई, जाको फिरत उतपात न होई।
अव्यय अविनाशी अभिराम, शाश्वत रूप नमूँ सुखधाम॥२१०॥

ॐ ह्रीं शाश्वताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

निर्विकार निर्मल निजभाव, नित्य प्रकाश अमन्द प्रभाव।
अव्यय अविनाशी अभिराम, शाश्वत रूप नमूँ सुखधाम॥२११॥

ॐ ह्रीं शाश्वतप्रकाशाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

निरावरण रवि बिम्ब समान, नित्य उद्योत धरो निज ज्ञान।
अव्यय अविनाशी, अभिराम, शाश्वत रूप नमूँ सुखधाम॥२१२॥

ॐ ह्रीं शाश्वतोद्योताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ज्ञानानंद सुधाकर चन्द्र, सोहत पूरण ज्योति अमन्द।
अव्यय अविनाशी अभिराम, शाश्वत रूप नमूँ सुखधाम॥२१३॥

ॐ ह्रीं शाश्वतामृतचन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ज्ञानानन्द सुधारस धार, निरविच्छेद अभेद अपार।
अव्यय अविनाशी अभिराम, शाश्वत रूप नमूँ सुखधाम॥२१४॥

ॐ ह्रीं शाश्वतामूर्तये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(पद्धड़ी)

मन-इन्द्रिय ज्ञान न पाय जेह, है सूक्षम नाम सरूप तेह।
मनपर्यय जाकूँ नाहिं पाय, सो सूक्षम परम सुगुण नमाय॥२१५॥

ॐ ह्रीं परमसूक्ष्माय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

बहु राशि नभोदर में समाय, प्रत्यक्ष स्थूल ताकों न पाय।
इकसों इककों बाधा न होहि, सूक्षम अविकाशी नमों सोहि॥२१६॥

ॐ ह्रीं सूक्ष्मावकाशाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नभ गुण ध्वनि हो यह जोग नाँहिं,
हो जिसो गुणी गुण तिसो ताहिं।
सो राजत हो सूक्षम स्वरूप,
नमहूँ तुम सूक्षम गुण अनूप॥२१७॥

ॐ ह्रीं सूक्ष्मगुणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तुम त्याग द्वैतताको प्रसंग, पायौ एकाकी छबि अभंग।
जाको कबहूँ अनुभव न होय, नमूँ परमरूप है गुप्त सोय॥२१८॥

ॐ ह्रीं परमरूपगुप्ताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(त्रोटक)

सर्वार्थविमानिक देव तथा, मन इन्द्रिय भोगन शक्ति यथा।
इनके सुखको एक सीम सही, तुम आनंदको पर अन्त नहीं॥२१९॥

ॐ ह्रीं निरवधिसुखाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जगजीवनिको नहिं भाग्य यहै, निज शक्ति उदय करि व्यक्ति लहै।
तुम पूरण क्षायक भाव लहो, इम अन्त बिना गुणरास गहो॥२२०॥

ॐ ह्रीं निरवधिगुणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

भवि-जीव सदा यह रीति धरें, नित नूतन पर्य विभाव धरें।
तिस कारण को सब व्याधि दहो, तुम पाइ सुरूप जु अन्त न हो॥२२१॥

ॐ ह्रीं निरवधिस्वरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अवधि मनपर्य सु ज्ञान महा, द्रव्यादि विषैं मरजाद लहा।
तुम ताहि उलंघ सुभावमई, निजबोध लहो जिस अन्त नहीं॥२२२॥

ॐ ह्रीं अतुलज्ञानाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तिहुं काल तिहूं जग के सुख को, कर वार अनंत गुणा इनको।
तुम एक समय सुख की समता, नहीं पाय नमूँ मन आनंदता॥२२३॥

ॐ ह्रीं अतुलसुखाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(नाराच)

सर्व जीव राशके, सुभाव आप जान हो।
आपके सुभाव अंश, औरकौ न ज्ञान हो॥
सो विशुद्ध भाव पाय, जासकौ न अन्त हो।
राजहो सदीव देव, चरणदास 'सन्त' हो॥२२४॥

ॐ ह्रीं अतुलभावाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

आपकी गुणौघ वेलि फैलि है अलोकलों।
शेष से भ्रमाय पत्रकी न पाय नोंकलों॥
सो विशुद्ध भाव पाय जासकौ न अन्त हो।
राजहो सदीव देव चरणदास 'सन्त' हो॥२२५॥

ॐ ह्रीं अतुलगुणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सूर्यको प्रकाश एक-देश वस्तु भास ही।
आपको सुज्ञान भान सर्वथा प्रकाश ही॥
सो विशुद्ध भाव पाय जासको न अन्त हो।
राजहो सदीव देव चरणदास 'सन्त' हो॥२२६॥

ॐ ह्रीं अतुलप्रकाशाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तास रूप को गहो न फेरि जास नाश हो।
स्वात्मवास में विलास आस त्रास नाश हो॥
सो विशुद्ध भाव पाय जासको न अन्त हो।
राजहो सदीव देव चरणदास 'सन्त' हो॥२२७॥

ॐ ह्रीं अचलाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(सोरठा)

मोहादिक रिपु जीति, निजगुण निधि सहजे लहो।
विलसो सदा पुनीति, अचल रूप बन्दों सदा॥२२८॥

ॐ ह्रीं अचलगुणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

उत्तम क्षाइक भाव, क्षय उपशम सब गये विनशि।
पायो सहज सुभाव, अचल रूप बन्दों सदा॥२२९॥

ॐ ह्रीं अचलगुणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अथिर रूप संसार, त्याग सुथिर निजरूप गहि।
रहो सदा अविकार, अचल रूप बन्दों सदा॥२३०॥

ॐ ह्रीं अचलस्वरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(मोतियादाम)

निराश्रित स्वाश्रित आनंदधाम, परै परसो न परै कछु काम।
अबिन्दु अबंधु अबंध अमंद, करूँ पद-वंद रहूँ सुखवृन्द॥२३१॥

ॐ ह्रीं निरालम्बाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अराग अदोष अशोक अभोग, अनिष्ट संयोग न इष्ट वियोग।
अबिन्दु अबंधु अबंध अमंद, करूँ पद-बंद रहूँ सुखवृन्द॥२३२॥

ॐ ह्रीं आलम्बरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अजीव न जीव न धर्म-अधर्म, न काल अकाश लहै तिस धर्म।
अबिन्दु अबंधु अबंध अमंद, करूँ पद-वंद रहूँ सुखवृन्द॥२३३॥

ॐ ह्रीं निर्लेपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अवर्ण अकर्ण अरूप अकाय, अयोग असंयमता अकषाय।
अबिन्दु अबंधु अबंध अमंद, करूँ पद-वंद रहूँ सुखवृन्द॥२३४॥

ॐ ह्रीं निष्कषाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

न हो परसों रुष-राग विभाव, निजातम में अवलीन स्वभाव।
अबिन्दु अबंधु अबंध अमंद, करूँ पद-वंद रहूँ सुखवृन्द॥२३५॥

ॐ ह्रीं आत्मरतये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(दोहा)

निज स्वरूप में लीनता, ज्यों जल पुतली खार।
गुप्त-स्वरूप नमूँ सदा, लहूँ भवार्णव पार॥२३६॥

ॐ ह्रीं स्वरूपगुप्ताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जो हैं सो हैं और नहिं, कछु निश्चय-व्यवहार।
शुद्ध द्रव्य परमातमा, नमूँ शुद्धता धार॥२३७॥

ॐ ह्रीं शुद्धद्रव्याय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्वोत्तर सन्तति तनी, भव-भव छेद कराय।
असंसार पदको नमूँ यह भव वास नशाय॥२३८॥

ॐ ह्रीं असंसाराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नागरूपिणी तथा अर्धनाराच

हरो सहाय कर्णको, सुभोगता विवर्ण को।
निजातमीक एक ही लहो अनन्द तास ही॥२३९॥

ॐ ह्रीं स्वानन्दाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

न हो विभावता कदा, स्वभाव में सुखी सदा।
निजातमीक एक ही लहो अनन्द तास ही॥२४०॥

ॐ ह्रीं स्वानन्दभावाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अछेद रूप सर्वथा, उपाधि की नहीं व्यथा।
निजातमीक एक ही, लहो अनन्द तास ही॥२४१॥

ॐ ह्रीं स्वानन्दस्वरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दुभेदता न वेद हो, सचेतना अभेद ही।
निजातमीक एक ही, लहो आनन्द तास ही॥२४२॥

ॐ ह्रीं स्वानन्दगुणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

न अन्यकी परवाह है, अचाह है, न चाह है।
निजातमीक एक ही, लहो अनन्द तास ही॥२४३॥

ॐ ह्रीं स्वानन्दसंतोषाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(सोरठा)

रागादिक परिणाम, हैं कारण संसार के।
नाश लियो सुखधाम, नमत सदा भव-भय हरूँ॥२४४॥

ॐ ह्रीं शुद्धभावपर्यायाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

उदइक भाव विनाश, प्रगट कियो निज धर्मको।
स्वातम गुण परकाश, नमत सदा भव-भय हरूँ॥२४५॥

ॐ ह्रीं स्वतंत्रधर्माय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

निजगुण पर्ययरूप, स्वयं-सिद्ध परमात्मा।
राजत हैं शिवभूप, नमत सदा भव-भय हरूँ॥२४६॥

ॐ ह्रीं आत्मस्वभावाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

विमल विशद निज ज्ञान, है स्वभाव परिणतिमई।
राजे हैं सुखखानि, नमत सदा भव-भय हरूँ॥२४७॥

ॐ ह्रीं परमचित्परिणामाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दर्श-ज्ञानमय धर्म, चेतन धर्म प्रगट कहो।
भेदाभेद सुपर्म, नमत सदा भव-भय हरूँ॥२४८॥

ॐ ह्रीं चिद्रूपधर्माय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दर्श-ज्ञान-गुणसार, जीवभूत परमातमा।
राजत सब परकार, नमत सदा भव-भय हरूँ॥२४९॥

ॐ ह्रीं चिद्रूपगुणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अष्ट कर्ममल जार, दीप्तरूप निज पद लहो।
स्वच्छ हेम उनहार, नमत सदा भव-भय हरूँ॥२५०॥

ॐ ह्रीं परमस्नातकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

रागादिक मल सोध, दोऊ विविध विधान विन।
लहो शुद्ध प्रतिबोध, नमत सदा भव-भय हरूँ॥२५१॥

ॐ ह्रीं स्नातकधर्माय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

विधि आवरण विनाश, दर्श-ज्ञान परिपूर्ण हो।
लोकालोक प्रकाश, नमत सदा भव-भय हरूँ॥२५२॥

ॐ ह्रीं सर्वावलोकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

निजकर निज में वास, सर्व लोकसों भिन्नता।
पायो शिव सुख-रास, नमत सदा भव-भय हरूँ॥२५३॥

ॐ ह्रीं लोकाग्रस्थिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ज्ञान-भानकी जोति, व्यापक लोकालोक में।
दर्शन बिन उद्योग, नमत सदा भव-भय हरूँ॥२५४॥

ॐ ह्रीं लोकालोकव्यापकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जो कछु धरत विशेष, सब ही सब आनन्दमय।
लेश न भाव कलेश, नमूँ सदा भव-भय हरूँ॥२५५॥

ॐ ह्रीं आनन्दविधानाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जिस आनन्दको पार, पावत नहिं यह जगतजन।
सो पायो हितकार, नमत सदा भव-भय हरूँ॥२५६॥

(दोहा)

इत्यादिक आनन्द गुण, धारत सिद्ध अनन्त।
तिन पद आठों दरवसों, पूजत हैं नित 'सन्त'॥

ॐ ह्रीं आनन्दपूर्णाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

(दोहा)

थावर शब्द विषय धरै, त्रस थावर पर्याय।
यों न होय तो तुम सुगुण, हम किहविधि वर्णाय॥१॥
तिसपर जो कछु कहत हैं, केवल भक्ति प्रमान।
बालक जल शशि-बिंबको, चहत ग्रहण निज पान॥२॥

(पद्धड़ी)

जय पर-निमित्त व्यवहार त्याग, पायो निज शुद्ध-स्वरूप भाग।
जय जगपालन बिन जगत देव, जय दयाभाव बिन शांतिभेव॥३॥

पर सुख-दुखकरण कुरीति टार, पर सुख-दुख-कारण शक्ति धार।
पुनि पुनि नव नव नित जन्मरीत, बिन सर्वलोक व्यापी पुनीत॥४॥

जय लीला रास विलास नाश, स्वाभाविक निजपद रमण वास।
शयनासन आदि क्रिया-कलाप, तज सुखी सदा शिवरूप आप॥५॥

बिन कामदाह नहिं नार भोग, निरद्वन्द निजानंद मगन योग।
वरमाल आदि श्रृंगार रूप, बिन शुद्ध निरंजन पद अनूप॥६॥

जय धर्म भर्म वन हन कुठार, परकाश पुंज चिद्रूपसार।
उपकरण हरण दव सलिलधार, निज शक्ति प्रभाव उदय अपार॥७॥

नभ सीम नहीं अरु होत होउ, नहीं काल अन्त, लहो अन्त सोउ।
पर तुम गुण रास अनंत भाग, अक्षय विधि राजत अवधि त्याग॥८॥

आनन्द जलधि धारा-प्रवाह, विज्ञानसुरी मुखद्रह अथाह।
निज शांति सुधारस पर खान, समभाव बीज उत्पत्ति थान॥९॥

निज आत्मलीन विकलप विनाश, शुद्धोपयोग परिणति प्रकाश।
दृग ज्ञान असाधारण स्वभाव, स्पर्श आदि परगुण अभाव॥१०॥

निज गुणपर्यय समुदाय स्वामि, पायो अखण्ड पद परम धाम।
अव्यय अबाध पद स्वयं सिद्ध, उपलब्धि रूप धर्मी प्रसिद्ध॥११॥

एकाग्ररूप चिन्ता निरोध, जे ध्यावैं पावैं स्वयं बोध।
गुणमात्र 'सन्त' अनुराग रूप, यह भाव देहु तुम पद अनूप॥१२॥

(दोहा)

सिद्ध सुगुण सुमरण महा, मंत्रराज है सार।
सर्व सिद्धि दातार है, सर्व विघन हर्तार॥१३॥

ॐ ह्रीं अर्हं षड्पंचाशदधिकद्विशतदलोपरिस्थितसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तीन लोक चूड़ामणी, सदा रहो जयवन्त।
विघन हरण मंगल करण, तुम्हैं नमैं नित 'सन्त'॥१४॥

इत्याशीर्वादः।

(यहाँ पर १०८ बार 'ॐ ह्रीं अर्हं असिआउसा नमः' मंत्र का जाप करें।)

सप्तम पूजा

(पाँच सौ बारह गुण सहित)

(छप्पय)

ऊरध अधो सु रेफ सबिंदु हकार विराजे,
अकारादि स्वर लिप्त कर्णिका अन्त सु छाजे।
वर्गनिपूरित वसुदल अम्बुज तत्त्व संधिधर,
अग्रभाग में मंत्र अनाहत सोहत अतिवर॥
पुनि अंत ह्रीं बेढ्यो परम, सुर ध्यावत अरि नाग को।
ह्वै केहरि सम पूजन निमित, सिद्धचक्र मंगल करो॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं द्वादशाधिकपंचशतगुणसंयुक्तविराजमान श्रीसिद्धपरमेष्ठिन् अत्रावतरावतर संवौषट् आह्वाननम्, अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्। अत्र मम् सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम्। (पुष्पांजलिं क्षिपेत्)

(दोहा)

सूक्ष्मादिक गुण सहित हैं, कर्म रहित नीरोग।
सिद्धचक्र सो थापहूँ, मिटै उपद्रव योग॥

(इति यंत्र स्थापनार्थं पुष्पांजलिं क्षिपेत्)

अथाष्टकं

(चाल बारहमासा)

सुर मणि-कुम्भ क्षीर भर धारत, मुनि मन-शुद्धप्रवाह बहावहिं।
हम दोऊ विधि लाइक नाहीं, कृपा करहु लहि भवतट भावहिं॥
शक्ति सारु सामान्य नीरसों, पूजूँ हूँ शिव-तियके स्वामी।
द्वादश अधिक पंचशत संख्यक, नाम उचारत हूँ सुखधामी॥१॥

ॐ ह्रीं द्वादशाधिकपंचशत-(५१२) गुणसहिताय श्रीसिद्धपरमेष्ठिने जन्मजरारोग-विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

नतु कोऊ चन्दन नतु कोऊ केसरि, भेंट किये भावपार भयो है।
केवल आप कृपा-दृग ही सों, यह अथाह दधि पार लयो है॥

रीति सनातन भक्तन की लख, चन्दनकी यह भेंट धरामी।
द्वादश अधिक पंचशत संख्यक, नाम उचारत हूँ सुखधामी॥२॥

ॐ ह्रीं द्वादशाधिकपंचशतगुणसंयुक्ताय श्रीसिद्धपरमेष्ठिने संसारताप विनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

इन्द्रादिक पद हूँ अनवस्थित, दीखत अन्तर रूचि न करैं हैं।
केवल एकहि स्वच्छ अखण्डित, अक्षयपद की चाह धरैं हैं॥
तातैं अक्षतसों अनुरागी, हूँ सो तुम पद पूज करामी।
द्वादश अधिक पंचशत संख्यक, नाम उचारत हूँ सुखधामी॥३॥

ॐ ह्रीं द्वादशाधिकपंचशतगुणसंयुक्ताय श्रीसिद्धपरमेष्ठिने अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

पुष्प-बाण सो ही मन्मथ-जग, विजई जगमें नाम धरावे।
देखहु अद्भुत रीति भक्त की, तिस ही भेंट धर काम हनावे॥
शरणागत की चूक न देखी, तातैं पूज्य भये शिरनामी।
द्वादश अधिक पंचशत संख्यक, नाम उचारत हूँ सुखधामी॥४॥

ॐ ह्रीं द्वादशाधिकपंचशतगुणसंयुक्ताय श्रीसिद्धपरमेष्ठिने कामबाणविनाशनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

हनन असाता पीर नहीं यह, भीर परै चरु भेंटन लायो।
भक्त अभिमान मेंट हो स्वामी, यह भवकारण भाव सतायो।
मम उद्यम करि कहा आप ही, सो एकाकी अर्थ लहामी।
द्वादश अधिक पंचशत संख्यक, नाम उचारत हूँ सुखधामी॥५॥

ॐ ह्रीं द्वादशाधिकपंचशतगुणसंयुक्ताय श्रीसिद्धपरमेष्ठिने क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूरण ज्ञानानन्द ज्योति घन, विमल गुणातम शुद्ध स्वरूपी।
हो तुम पूज्य भये हम पूजक, पाय विवेक प्रकाश अनूपी॥
मोह अन्ध विनसो तिह कारण, दीपन सों अर्चूं अभिरामी।
द्वादश अधिक पंचशत संख्यक, नाम उचारत हूँ सुखधामी॥६॥

ॐ ह्रीं द्वादशाधिकपंचशतगुणसंयुक्ताय श्रीसिद्धपरमेष्ठिने मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

धूप भरैं उघरें प्रजरें मणि, हेम धरें तुम पद पर वारूँ।
बार बार आवर्त जोरि करि, धार धार निज शीश न हारूँ॥
धूम्र धार समतन रोमांचित, हर्ष सहित अष्टांग नमामी।
द्वादश अधिक पंचशत संख्यक, नाम उचारत हूँ सुखधामी॥७॥

ॐ ह्रीं द्वादशाधिकपंचशतगुणसंयुक्ताय श्रीसिद्धपरमेष्ठिने अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

तुम हो वीतराग निज पूजन, बन्दन थुति परवाह नहीं है।
अरु अपने समभाव वहै कछु, पूजा फलकी चाह नहीं है॥
तौभी यह फल पूजि फलद, अनिवार निजानन्द कर इच्छामी।
द्वादश अधिक पंचशत संख्यक, नाम उचारत हूँ सुखधामी॥८॥

ॐ ह्रीं द्वादशाधिकपंचशतगुणसंयुक्ताय श्रीसिद्धपरमेष्ठिने मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

तुमसे स्वामी के पद सेवत, यह विधि दुष्ट रंक कहा कर है।
ज्यों मयूरध्वनि सुनि अहि निज बिल, विलय जाय छिन बिलम न धर है॥
तातैं तुम पद अर्घ उतारण, विरद उचारण करहुँ मुदामी।
द्वादश अधिक पंचशत संख्यक, नाम उचारत हूँ सुखधामी॥९॥

ॐ ह्रीं द्वादशाधिकपंचशतगुणसंयुक्ताय श्रीसिद्धपरमेष्ठिने सर्वसुखप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(गीता)

निर्मल सलिल शुभ वास चन्दन, धवल अक्षत युत अनी।
शुभ पुष्प मधुकर नित रमें, चरु प्रचुर स्वाद सुविधि घनी॥
वर दीपमाल उजाल धूपायन, रसायन फल भले।
करि अर्घ सिद्ध-समूह पूजत, कर्मदल सब दलमले॥
ते क्रमावर्त नसाय युगपत, ज्ञान निर्मल रूप है।
दुख जन्म टाल अपार गुण, सूक्षम स्वरूप अनूप है॥
कर्माष्ट बिन त्रैलोक्य पूज्य, अदूज शिव कमलापती।
मुनि ध्येय सेय अमेय, चहुँगुण गेह, द्यो हम शुभ मती॥१०॥

ॐ ह्रीं द्वादशाधिकपंचशतगुणसंयुक्ताय श्रीसिद्धपरमेष्ठिने पूर्णपदप्राप्तये महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अथ पाँच सौ बारह गुण अर्घ्य

(अर्द्ध जोगीरसा)

लोकत्रय करि पूज्य प्रधाना, केवल ज्योति प्रकाशी।
भव्यन मन तम मोह विनाशक, बन्दूँ शिव-थल वासी॥१॥

ॐ ह्रीं अरहंताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सुरनर मुनिमन कुमुदन मोदन, पूरण चन्द्र समाना।
हो अर्हंत जात जन्मोत्सव, बन्दूँ श्री भगवाना॥२॥

ॐ ह्रीं अर्हज्जाताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

केवल-दर्श-ज्ञान-किरणावलि, मंडित तिहुँ जग चन्दा।
मिथ्यातप हर जल आदिक करि, बन्दूँ पद अरविन्दा॥३॥

ॐ ह्रीं अर्हच्चिद्रूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

घातिकर्म रिपु जारि छारकर, स्वचतुष्टय पद पायो।
निजस्वरूप चिद्रूप गुणातम, हम तिन पद शिर नायो॥४॥

ॐ ह्रीं अर्हच्चिद्रूपगुणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ज्ञानावरणी पटल उघारत, केवल-भान उगायो।
भव्यन को प्रतिबोध उधारे, बहुरि मुक्ति पद पायो॥५॥

ॐ ह्रीं अर्हज्ज्ञानाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

धर्म-अधर्म तास फल दोनों, देखो जिम कर-रेखा।
बतलायो परतीत विषय करि, यह गुण जिनमें देखा॥६॥

ॐ ह्रीं अर्हंद्दर्शनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मोह महा दृढ़ बंध उघारो, कर विषतन्तु समाना।
अतुल बली अरहंत कहायो, पाय नमूँ शिवथाना॥७॥

ॐ ह्रीं अर्हद्वीर्याय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

युगपति लोकालोक विलोकन, है अनन्त दृगधारी।
गुप्त रूप शिवमग दरसायो, तिनपद धोक हमारी॥८॥

ॐ ह्रीं अर्हद्दर्शनगुणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

घटपटादि सब परकाशत जद, हो रवि-किरण पसारा।
तैसो ज्ञान-भान अरहत को, ज्ञेय अनन्त उघारा॥९॥

ॐ ह्रीं अर्हज्ज्ञानगुणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

आसन शयन पान भोजन बिन, दीप्त देह अरहंता।
ध्यान वान कर तान हान विधि, भए सिद्ध भगवंता॥१०॥

ॐ ह्रीं अर्हद्वीर्यगुणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सप्त तत्त्व षट् द्रव्य भेद सब, जानत संशय खोई।
ताकरि भव्य जीव संबोधे, नमूँ भये सिद्ध सोई॥११॥

ॐ ह्रीं अर्हत्सम्यक्त्वगुणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ध्यान सलिलसों धोय लोभमल, शुद्ध निजातम कीनो।
परम शौच अरहंत स्वरूपी, पाय नमूँ शिव लीनो॥१२॥

ॐ ह्रीं अरहंतशौचगुणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नय-प्रणाम श्रुतज्ञान प्रकारा, द्वादशांग जिनवानी।
प्रगटायो परतक्ष ज्ञान में, नमूँ भये शिव-थानी॥१३॥

ॐ ह्रीं अर्हद्द्वादशांगाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मन-इन्द्रिय बिन सकल चराचर, जुगपद करि प्रकटायो।
यह अरहंत मती कहलायो, बन्दूँ तिन शिव पायो॥१४॥

ॐ ह्रीं अर्हद्भिन्नबोधकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अनुभव सम नहीं होत दिव्यध्वनि, ताको भाग अनन्ता।
जानो गणधर यह श्रुत अवधी, पाई नमूँ अरहंता॥१५॥

ॐ ह्रीं अर्हत्श्रुतावधिगुणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सर्वावधि निधि वृद्धि प्रवाही, केवल-सागर माँही।
एक भयो अरहंत अवधि यह, मुक्त भए नमि ताही॥१६॥

ॐ ह्रीं अर्हदवधिगुणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अति विशुद्ध मय विपुलमती लहि, हो पूर्वोक्त प्रकारा।
यह अरहंत पाय मन-पर्यय, नमूँ भए भवपारा॥१७॥

ॐ ह्रीं अर्हच्छुद्धमनःपर्ययभावाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मोह मलिनता जग जिय नाशैं, केवलता गुण पावैं।
सर्व शुद्धता पाइ, नमत हैं हम, अरहंत कहावैं॥१८॥

ॐ ह्रीं अर्हत्केवलगुणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मोह-जनित सो रूप विरूपी, तिस बिन केवलरूपा।
श्री अरहन्त रूप सर्वोत्तम, बन्दूँ हो शिवभूपा॥१९॥

ॐ ह्रीं अर्हत्केवलस्वरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तास विरोधी कर्म जीति करि, केवल-दरशन पायो।
इस गुण सहित नमत तुम पद प्रति, भावसहित शिरनायो॥२०॥

ॐ ह्रीं अर्हत्केवलदर्शनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

निर-आवरण करण बिन जाको, शरण हरण नहीं कोई।
केवल-ज्ञान पाय शिव पायो, पूजत हैं हम सोई॥२१॥

ॐ ह्रीं अर्हत्केवलज्ञानाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अगम अतीर भवोदधि उतरे, सहज ही गोखुर मानो।
केवल बल अरहन्त नमें हम, शिव थल बास करानो॥२२॥

ॐ ह्रीं अर्हत्केवलवीर्याय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सब विधि अपने विघ्न निवारण, औरन विघ्न विडारी।
मंगलमय अर्हंत सर्वदा, नमूँ मुक्ति पदधारी॥२३॥

ॐ ह्रीं अर्हन्मंगलाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चक्षु आदि सब विघन विदूरित, छाइक मंगलकारी।
यह अर्हंत दर्श पायो मैं, नमूँ भये शिवकारी॥२४॥

ॐ ह्रीं अर्हन्मंगलदर्शनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

निजपर संशय आदि पाय बिन, निरावरण विकसानो।
मंगलमय अरहंत ज्ञान है, बन्दूँ शिव सुख थानो॥२५॥

ॐ ह्रीं अर्हन्मंगलज्ञानाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

परकृत जरा आदि संकट बिन, अतुल बली अर्हंता।
नमूँ सदा शिवनारी के संग, सुखसों केलि करंता॥२६॥

ॐ ह्रीं अर्हन्मंगलवीर्याय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पापरूप एकान्त पक्ष बिन, सर्व तत्त्वपरकाशी।
द्वादशांग अरहन्त कहो मैं, नमूँ भये शिववासी॥२७॥

ॐ ह्रीं अर्हन्मंगलद्वादशांगाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

बिन प्रतक्ष अनुमान सुबाधित, सुमतिरूप परिणामा।
मंगलमय अर्हंतमती मैं, नमूँ देउ शिवधामा॥२८॥

ॐ ह्रीं अर्हन्मंगल-अभिनिबोधकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नय-विकलप श्रुत-अंग पक्ष के, त्यागी हैं भगवन्ता।
ज्ञाता दृष्टा वीतराग, विख्यात नमूँ अरहंता॥२९॥

ॐ ह्रीं अर्हन्मंगलश्रुतात्मकजिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मंगलमय सर्वावधि जाकिर, पावैं पद अरहंता।
बन्दूँ ज्ञान प्रकाश नाश भव, शिव थल वास करंता॥३०॥

ॐ ह्रीं अर्हन्मंगलावधिज्ञानाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वर्धमान मनपर्यय ज्ञान करि, केवल-भानु उगायो।
भव्यनि प्रति शुभ मार्ग बतायो, नमूँ सिद्ध पद पायो॥३१॥

ॐ ह्रीं अर्हन्मंगलनमःपर्यायज्ञानाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ता बिन और अज्ञान सकल, जगकारण बंध प्रधाना।
नमूँ पाय अरहंत मुक्ति पद, मंगल केवलज्ञाना॥३२॥

ॐ ह्रीं अर्हन्मंगलकेवलज्ञानाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

निरावरण निरखेद निरन्तर, निराबाधमई राजैं।
केवलरूप नमूँ सब अघहर, श्री अरहन्त विराजैं॥३३॥

ॐ ह्रीं अर्हन्मंगलकेवलस्वरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चक्षु आदि सब भेद विघन हर, क्षायक दर्शन पाया।
श्री अरहन्त नमूँ शिववासी, इह जग पाप नशाया॥३४॥

ॐ ह्रीं अर्हन्मंगलकेवलदर्शनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जग मंगल सब विघन रूप है, इक केवल अरहन्ता।
मंगलमय सब मंगलदायक, नमूँ कियो जग अन्ता॥३५॥

ॐ ह्रीं अर्हन्मंगलकेवलज्ञानाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

केवलरूप महामंगलमय, परम शत्रु छयकारा।
सो अरहन्त सिद्ध पद पायो, नमूँ पाय भवपारा॥३६॥

ॐ ह्रीं अर्हन्मंगलकेवलरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शुद्धातम निजधर्म प्रकाशी, परमानन्द विराजैं।
सो अरहन्त परम मंगलमय, नमूँ शिवालय राजैं॥३७॥

ॐ ह्रीं अर्हन्मंगलधर्माय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सब विभावमय विघन नाशकर, मंगल धर्मस्वरूपा।
सो अरहन्त भये परमातम, नमूँ त्रियोग निरूपा॥३८॥

ॐ ह्रीं अर्हन्मंगलधर्मस्वरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सर्व जगत सम्बन्ध विघन नहीं, उत्तम मंगल सोई।
सो अरहन्त भये शिववासी, पूजत शिवसुख होई॥३९॥

ॐ ह्रीं अर्हन्मंगलोत्तमाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

लोकातीत विलोक पूज्य जिन, लोकोत्तम गुणधारी।
लोकशिखर सुखरूप विराजैं, तिनपद धोक हमारी॥४०॥

ॐ ह्रीं अर्हल्लोकोत्तमाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

लोकाश्रित गुण सब विभाव हैं, श्रीजिनपदसों न्यारे।
तिनको त्याग भये शिव बन्दूँ, काटो बन्ध हमारे॥४१॥

ॐ ह्रीं अर्हल्लोकोत्तमगुणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मिथ्या मतिकर सहित ज्ञान, अज्ञान जगत में सारो।
ता विनाशि अरहन्त कहो, लोकोत्तम पूज हमारो॥४२॥

ॐ ह्रीं अर्हल्लोकोत्तमज्ञानाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

क्षायक दरशन है अरहन्ता, और लोक में नाहीं।
सो अरहन्त भये शिववासी, लोकोत्तम सुखदाई॥४३॥

ॐ ह्रीं अर्हल्लोकोत्तमदर्शनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कर्मबली ने सब जग बांध्यों, ताहि हनो अरहन्ता।
यह अरहन्त वीर्य लोकोत्तम, पायो सिद्ध अनन्ता॥४४॥

ॐ ह्रीं अर्हल्लोकोत्तमवीर्याय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अक्षातीत ज्ञान लोकोत्तम, परमातम पद मूला।
यह अरहन्त नमूँ शिवनायक, पाऊँ भवदधि कूला॥४५॥

ॐ ह्रीं अर्हल्लोकोत्तमाभिनिबोधकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

परमावधि ज्ञान सुखखानी, केवलज्ञान प्रकाशी।
यहै अवधि अरहन्त नमूँ मैं, संशय तुमको नाशी॥४६॥

ॐ ह्रीं अर्हल्लोकोत्तमावधिज्ञानाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जो अरहन्त धरै मनपर्यय, सो केवल के माँहीं।
साक्षात् शिवरूप नमों मैं, अन्य लोक में नाहीं॥४७॥

ॐ ह्रीं अर्हल्लोकोत्तममनःपर्ययज्ञानाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तीन लोक में सार सु श्री-अरहन्त स्वयंभू ज्ञानी।
नमूँ सदा शिवरूप आप हो, भविजन प्रति सुखदानी॥४८॥

ॐ ह्रीं अर्हल्लोकोत्तमकेवलज्ञानस्वरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सर्वोत्तम तिहुँ लोक प्रकाशित, केवल ज्ञान स्वरूपी।
सो अरहन्त नमूँ शिवनायक, सुखप्रद सार अनूपी॥४९॥

ॐ ह्रीं अर्हल्लोकोत्तमकेवलज्ञानाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ज्ञान तरंग अभंग वहै, लोकोत्तम धार अरूपी।
सो अरहन्त नमूँ शिवनायक, सुखप्रद सार अनूपी॥५०॥

ॐ ह्रीं अर्हल्लोकोत्तमकेवलपर्यायाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सहित असाधारण गुण-पर्याय, केवलज्ञान सरूपी।
सो अरहन्त नमूँ शिवनायक, सुखप्रद सार अनूपी॥५१॥

ॐ ह्रीं अर्हल्लोकोत्तमकेवलद्रव्याय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जगजिय सर्व अशुद्ध कहो, इक केवल शुद्ध सरूपी ।
सो अरहन्त नमूँ शिवनायक, सुखप्रद सार अनूपी॥५२॥

ॐ ह्रीं अर्हल्लोकोत्तमकेवलाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

विविध कुरूप सर्व जगवासी, केवल स्वयं सरूपी।
सो अरहंत नमूँ शिवनायक, सुखप्रद सार अनूपी॥५३॥

ॐ ह्रीं अर्हल्लोकोत्तमकेवलस्वरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

हीनाधिक धिक् धिक् जग प्राणी, धन्य एक ध्रुवरूपी।
सो अरहंत नमूँ शिवनायक, सुखप्रद सार अनूपी॥५४॥

ॐ ह्रीं अर्हल्लोकोत्तमध्रुवभावाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(दोहा)

संसारिन के भाव सब, बन्ध हेत वरणाय।
मुक्तिरूप अरहंत के, भाव नमूँ सुखदाय॥५५॥

ॐ ह्रीं अर्हल्लोकोत्तमभावाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कबहुँ न होय विभावमय, सो थिर भाव जिनेश।
मुक्तिरूप प्रणमूँ सदा, नाशे विघन विशेष॥५६॥

ॐ ह्रीं अर्हल्लोकोत्तमस्थिरभावाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जा सेवत वेवत स्वसुख, सो सर्वोत्तम देव।
शिववासी नाशी त्रिजग-फाँसी नमहूँ एव॥५७॥

ॐ ह्रीं अर्हच्छरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जिन ध्यायो तिन पाइयो, निश्चै सो सुखरास।
शरण स्वरूपी जिन नमूँ, करैं सदा शिववास॥५८॥

ॐ ह्रीं अर्हच्छरणस्वरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(पद्धड़ी)

स्वाभाविक गुण अरहंत गाय, जासों पूरण शिवसुख लहाय।
हम शरण गही मन वचन काय, नित नमैं 'संत' आनंद पाय॥५९॥

ॐ ह्रीं अर्हद्गुणशरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

बिन केवलज्ञान न मुक्ति होय, पायो है श्री अरहन्त जोय।
हम शरण गही मन वचन काय, नित नमैं 'संत' आनंद पाय॥६०॥

ॐ ह्रीं अर्हज्ज्ञानशरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रत्यक्ष देख सर्वज्ञ देव, भाख्यो है शिव-मारग असेव।
हम शरण गही मन वचन काय, नित नमैं 'संत' आनंद पाय॥६१॥

ॐ ह्रीं अर्हद्दर्शनशरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

संसार विषम बन्धन उछेद, अरहन्त वीर्य पायो अखेद।
हम शरण गही मन वचन काय, नित नमैं 'संत' आनंद पाय॥६२॥

ॐ ह्रीं अर्हद्वीर्यशरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सब कुमति विगत मत जिन प्रतीत, हो जिसतें शिवसुख दे अभीत।
हम शरण गही मन वचन काय, नित नमैं 'संत' आनंद पाय॥६३॥

ॐ ह्रीं अर्हद्द्वादशांगायश्रुतगणशरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अनुमानादिक साधित विज्ञान, अरहन्त मती प्रत्यक्ष जान।
हम शरण गही मन वचन काय, नित नमैं 'संत' आनंद पाय॥६४॥

ॐ ह्रीं अर्हदभिनिबोधकाय शरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जिन भाषित श्रुत सुनि भव्य जीव, पायो शिव अविनाशी सदीव।
हम शरण गही मन वचन काय, नित नमैं 'संत' आनंद पाय॥६५॥

ॐ ह्रीं अर्हत्श्रुतशरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रतिपक्षी सब जीते कषाय, पायो अवधी शिवसुख कराय।
हम शरण गही मन वचन काय, नित नमैं 'संत' आनंद पाय॥६६॥

ॐ ह्रीं अर्हद्वधिबोधशरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मुनि लहैं गहैं परिणाम श्वेत, जिन मनपर्यय शिव वास देत।
हम शरण गही मन वचन काय, नित नमैं 'संत' आनंद पाय॥६७॥

ॐ ह्रीं अर्हन्मनःपर्ययशरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

आवरण रहित प्रत्यक्ष ज्ञान, शिवरूप केवल जिन सुजान।
हम शरण गही मन वचन काय, नित नमैं 'संत' आनंद पाय॥६८॥

ॐ ह्रीं अर्हत्केवलशरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मुनि केवलज्ञानी जिन अराध, पावैं शिव-सुख निश्चय अबाध।
हम शरण गही मन वचन काय, नित नमैं 'संत' आनंद पाय॥६९॥

ॐ ह्रीं अर्हत्केवलशरणस्वरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शिव-सुखदायक निज आत्म-ज्ञान, सो केवल पावै जिन महान।
हम शरण गही मन वचन काय, नित नमैं 'संत' आनंद पाय॥७०॥

ॐ ह्रीं अर्हत्केवलधर्मशरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

यह केवलगुण आतम स्वभाव, अरहन्तन प्रति शिव-सुख उपाय।
हम शरण गही मन वचन काय, नित नमैं 'संत' आनंद पाय॥७१॥
ॐ ह्रीं अर्हत्केवलगुणशरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

संसाररूप सब विघन टार, मंगल गुण श्री जिन मुक्तिकार।
हम शरण गही मन वचन काय, नित नमैं 'संत' आनंद पाय॥७२॥
ॐ ह्रीं अर्हन्मंगलज्ञानशरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

छय उपशम ज्ञानी विघन रूप, ता बिन जिन ज्ञानी शिव सरूप।
हम शरण गही मन वचन काय, नित नमैं 'संत' आनंद पाय॥७३॥
ॐ ह्रीं अर्हन्मंगलज्ञानशरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अरहंत दर्श मंगल स्वरूप, तासो दरशै शिव-सुख अनूप।
हम शरण गही मन वचन काय, नित नमैं 'संत' आनंद पाय॥७४॥
ॐ ह्रीं अर्हन्मंगलदर्शनशरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अरहंत बोध है मंगलीक, शिव-मारग प्रति वरते अलीक।
हम शरण गही मन वचन काय, नित नमैं 'संत' आनंद पाय॥७५॥
ॐ ह्रीं अर्हन्मंगलबोधशरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

निज ज्ञानानन्द प्रवाह धार, वरते अखण्ड अव्यय अपार।
हम शरण गही मन वचन काय, नित नमैं 'संत' आनंद पाय॥७६॥
ॐ ह्रीं अर्हन्मंगलकेवलशरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जा बिन तिहुँ लोक न और मान, भव सिंधु तरण तारण महान।
हम शरण गही मन वचन काय, नित नमैं 'संत' आनंद पाय॥७७॥
ॐ ह्रीं अर्हल्लोकोत्तमशरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

स्वाभाविक भव्यन प्रति दयाल, विच्छेद करण संसार जाल।
हम शरण गही मन वचन काय, नित नमैं 'संत' आनंद पाय॥७८॥
ॐ ह्रीं अर्हल्लोकोत्तमशरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तुम बिन समरथ तिहुँ लोकमाँहि, भवसिंधु उतारण और नाहिं।
हम शरण गही मन वचन काय, नित नमैं 'संत' आनंद पाय॥७९॥
ॐ ह्रीं अर्हल्लोकोत्तमवीर्यशरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

बिन परिश्रम तारणतरण होय, लोकोत्तम अद्भुत शक्ति सोय।
हम शरण गही मन वचन काय, नित नमैं 'संत' आनंद पाय॥८०॥
ॐ ह्रीं अर्हल्लोकोत्तमवीर्यगुणशरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अप्रसिद्ध कुनय अल्पज्ञ भास, ताको विनाश शिवमग प्रकाश।
हम शरण गही मन वचन काय, नित नमैं 'संत' आनंद पाय॥८१॥
ॐ ह्रीं अर्हल्लोकोत्तमद्वादशांगशरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सब कुनय कुपक्ष कुसाध्य नाश, सत्यारथ–मत करण प्रकाश।
हम शरण गही मन वचन काय, नित नमैं 'संत' आनंद पाय॥८२॥
ॐ ह्रीं अर्हल्लोकोत्तमाभिनिबोधकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मिथ्यारत प्रकृति अवधि विनाश, लोकोत्तम अवधी को प्रकाश।
हम शरण गही मन वचन काय, नित नमैं 'संत' आनंद पाय॥८३॥
ॐ ह्रीं अर्हल्लोकोत्तमावधिशरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मनपर्यय शिव मंगल लहाय, लोकोत्तम श्रीगुरु सो कहाय।
हम शरण गही मन वचन काय, नित नमैं 'संत' आनंद पाय॥८४॥
ॐ ह्रीं अर्हल्लोकोत्तममनःपर्ययशरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

आवरणतीत प्रत्यक्ष ज्ञान, है सेवनीक जग में प्रधान।
हम शरण गही मन वचन काय, नित नमैं 'संत' आनंद पाय॥८५॥
ॐ ह्रीं अर्हल्लोकोत्तमकेवलज्ञानशरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

हो बाह्य विभव सुरकृत अनूप, अन्तर लोकोत्तम ज्ञानरूप।
हम शरण गही मन वचन काय, नित नमैं 'संत' आनंद पाय॥८६॥
ॐ ह्रीं अर्हल्लोकोत्तमविभूतिप्रधानशरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

रतनत्रय निमित मिलो अबाध, पाया निज आनन्द धर्म साध।
हम शरण गही मन वचन काय, नित नमैं 'संत' आनंद पाय॥८७॥
ॐ ह्रीं अर्हल्लोकोत्तमविभूतिधर्मशरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सुख ज्ञान वीर्य दर्शन सुभाव, पायो सब कर प्रकृति अभाव।
हम शरण गही मन वचन काय, नित नमैं 'संत' आनंद पाय॥८८॥
ॐ ह्रीं अर्हल्लोकोत्तमअनन्तचतुष्टयशरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(अडिल्ल)

दर्श ज्ञान सुख बल निजगुण ये चार हैं,
आतमीक परधान विशेष अपार हैं।
इनहीं सों हैं पूज्य सिद्ध परमेश्वरा,
हम हूँ यह गुण पायें नमन यातैं करा॥८९॥

ॐ ह्रीं अर्हदनन्तगुणचतुष्टयाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

क्षयोपशम सम्बाधित ज्ञानकला हरी,
पूरण ज्ञायक स्वयं बुद्धि श्रीजिनवरी।
इनहीं सों हैं पूज्य सिद्ध परमेश्वरा,
हम हूँ यह गुण पायें नमन यातैं करा॥९०॥

ॐ ह्रीं अर्हन्निजज्ञानस्वयंभुवे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जनमत ही दश अतिशय शासन में कही,
स्वयं शक्ति भगवान आप तिन को लही।
इनहीं सों हैं पूज्य सिद्ध परमेश्वरा,
हम हूँ यह गुण पायें नमन यातैं करा॥९१॥

ॐ ह्रीं अर्हद्दशातिशयस्वयंभुवे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ये दश अतिशय घातिकर्म छयको करैं,
महा विभव को पाय मोक्ष नारी वरैं।
इनहीं सों हैं पूज्य सिद्ध परमेश्वरा,
हमहूँ यह गुण पायें नमन यातैं करा॥९२॥

ॐ ह्रीं अर्हद्दशातिशयाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

केवल विभव उपाय प्रभू जिन पद लहो,
चौदह अतिशय देवनकरि सेवन कियो।
इनहीं सों हैं पूज्य सिद्ध परमेश्वरा,
हमहूँ यह गुण पायें नमन यातैं करा॥९३॥

ॐ ह्रीं अर्हच्चतुर्दशातिशयाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चौंतिस अतिशय जे पुराण बरणे महा,
मुक्ति समाज अनूपम श्री गुरु ने कहा।

इनहीं सों हैं पूज्य सिद्ध परमेश्वरा,
हमहूँ यह गुण पायें नमन यातैं करा॥९४॥

ॐ ह्रीं अर्हच्चतुस्त्रिंशत-अतिशयविराजमानाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(डालर)

लोकालोक अणु सम जानो, ज्ञानानंत सुगुण पहिचानो।
सो अरहंत सिद्धपद पायो, भाव सहित हम शीश नवायो॥९५॥

ॐ ह्रीं अर्हज्ज्ञानानन्तगुणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

समरस सुस्थिर भाव उघारा, युगपत लोकालोक निहारा।
सो अरहंत सिद्धपद पायो, भाव सहित हम शीश नवायो॥९६॥

ॐ ह्रीं अर्हद्ध्यानानन्तध्येयाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

इक इक गुण का भाव अनन्ता, पर्ययरूप सो है अरहन्ता।
सो अरहंत सिद्धपद पायो, भाव सहित हम शीश नवायो॥९७॥

ॐ ह्रीं अर्हदनंतगुणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

उत्तर गुण सब लख चौरासी, पूरण चारित भेद प्रकाशी।
सो अरहंत सिद्धपद पायो, भाव सहित हम शीश नवायो॥९८॥

ॐ ह्रीं अर्हत्तप-अनन्तगुणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

आतमशक्ति जास करि छीनी, तास नाश प्रभुताई लीनी।
सो अरहंत सिद्धपद पायो, भाव सहित हम शीश नवायो॥९९॥

ॐ ह्रीं अर्हत्परमात्मने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

निज गुण निज ही माँहि समाया, गणधरादि वरनन न कराया।
सो अरहंत सिद्धपद पायो, भाव सहित हम शीश नवायो॥१००॥

ॐ ह्रीं अर्हत्स्वरूपगुप्ताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(दोधक)

जो निज आतम साधु सुखाई, सो जगतेश्वर सिद्ध कहाई।
लोक शिरोमणि हैं शिवस्वामी, भाव सहित तुम को प्रणमामी॥१०१॥

ॐ ह्रीं सिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सर्व विशुद्ध विरूप सरूपी, स्वातम-रूप विशुद्ध अनूपी।
लोकशिरोमणि हैं शिवस्वामी, भावसहित तुम को प्रणमामी॥१०२॥

ॐ ह्रीं सिद्धस्वरूपेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पराश्रित सर्व विभाव निवारा, स्वाश्रित सर्व अबाध अपारा।
लोकशिरोमणि हैं शिवस्वामी, भावसहित तुम को प्रणमामी॥१०३॥

ॐ ह्रीं सिद्धगुणेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

आकुलता सब ही विधि नाशी, ज्ञायक लोकालोक प्रकाशी।
लोकशिरोमणि हैं शिवस्वामी, भावसहित तुम को प्रणमामी॥१०४॥

ॐ ह्रीं सिद्धज्ञानेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जीव अजीव लखे अविचारा, हो नहीं अन्तर एक प्रकारा।
लोकशिरोमणि हैं शिवस्वामी, भावसहित तुम को प्रणमामी॥१०५॥

ॐ ह्रीं सिद्धदर्शनेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अन्तर बाहिर भेद उघारी, दर्श विशुद्ध सदा सुखकारी।
लोकशिरोमणि हैं शिवस्वामी, भावसहित तुम को प्रणमामी॥१०६॥

ॐ ह्रीं सिद्धशुद्धसम्यक्त्वेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

एक अणू मल कर्म लजावै, सोय निरंजनता नहिं पावै।
लोकशिरोमणि हैं शिवस्वामी, भावसहित तुम को प्रणमामी॥१०७॥

ॐ ह्रीं सिद्धनिरंजनेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(अर्द्धरोला)

चारों गति को भ्रमण नाशकर थिरता पाई।
निजस्वरूप में लीन, अन्य सों मोह नशाई॥१०८॥

ॐ ह्रीं सिद्धाचलपदप्राप्ताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

रत्नत्रय आराधि साधि, निज शिवपद पायो।
संख्या भेद उलंघि, शिवालय वास करायो॥१०९॥

ॐ ह्रीं संख्यातीतसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

असंख्यात मरजाद, एक ताहू सो बीते।
विजयी लक्ष्मीनाथ, महाबल सब विधि जीते॥११०॥

ॐ ह्रीं असंख्यातसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

काल आदि मर्याद अनादि-सों इह विधि जारी।
भए अनन्त दिगम्बर साधु, जे शिवपद धारी॥१११॥
ॐ ह्रीं अनन्तसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पुष्करार्द्ध सागर लों, जे जल थान बखानो।
देव सहाइ उपाइ, ऊर्ध्व-गति गमन करानो॥११२॥
ॐ ह्रीं जलसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वन गिरि नगर गुफादि, सर्व थलसों शिव पाई।
सिद्धक्षेत्र सब ठौर बखानत, श्री जिनराई॥११३॥
ॐ ह्रीं स्थलसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नभ ही में जिन शुक्लध्यान–बल कर्म नाश किये।
आउ पूर्ण वश ततछिन, ही शिववास जाय लिये॥११४॥
ॐ ह्रीं गगनसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

आयु स्थिति सम अन्य कर्म-कारण परदेशा।
परसैं पूरण लोक, आत्म केवली जिनेशा॥११५॥
ॐ ह्रीं समुद्घातसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

केवलि जिन बिन समुद्घात, शिववास लिया है।
स्वते स्वभाव समान, अघाति कर्म किया है॥११६॥
ॐ ह्रीं असमुद्घातसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(उल्लाला)

तिन विशेष अतिशय रहित, सामान्य केवली नाम है।
सिद्ध भये तिहुँ योगतैं, तिनके पद प्रणाम है॥११७॥
ॐ ह्रीं साधारणसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

त्रिभुवन में नहीं पावतो, जो जिन गुण अभिराम हैं।
सिद्ध भये तिहुँ योगतैं, तिनके पद प्रणाम है॥११८॥
ॐ ह्रीं असाधारणसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

गर्भ कल्याण आदि युत, तीर्थंकर सुखधाम हैं।
सिद्ध भये तिहुँ योगतैं, तिनके पद प्रणाम है॥११९॥
ॐ ह्रीं तीर्थंकरसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तीर्थंकर के समय में, केवली जिन अभिराम हैं।
सिद्ध भये तिहुँ योगतैं, तिनके पद प्रणाम है॥१२०॥

ॐ ह्रीं तीर्थंकरअन्तरसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पंच शतक पच्चीस पुनि, धनुष काय अभिराम है।
सिद्ध भये तिहुँ योगतैं, तिनके पद प्रणाम है॥१२१॥

ॐ ह्रीं उत्कृष्टावगाहनसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

आदि अन्त अन्तर विषैं, मध्यवगाहन नाम है।
सिद्ध भये तिहुँ योगतैं, तिनके पद प्रणाम है॥१२२॥

ॐ ह्रीं मध्यमावगाहनसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तीन अर्ध तन केवली, हस्त प्रमाण कहाय हैं।
सिद्ध भये तिहुँ योगतैं, तिनके पद प्रणाम हैं॥१२३॥

ॐ ह्रीं जघन्यावगाहनसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देव निमित्त मिलो जहाँ, त्रिजग केवली धाम है।
सिद्ध भये तिहुँ योगतैं, तिनके पद प्रणाम है॥१२४॥

ॐ ह्रीं त्रिजगलोकसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

षट्विध परिणति काल की, तिन अपेक्ष यह नाम है।
सिद्ध भये तिहुँ योगतैं, तिनके पद प्रणाम है॥१२५॥

ॐ ह्रीं षड्विधकालसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अन्त समय उपसर्गतैं, शकलध्यान अभिराम है।
सिद्ध भये तिहुँ योगतैं, तिनके पद प्रणाम है॥१२६॥

ॐ ह्रीं उपसर्गसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पर-उपसर्ग मिलै नहीं, स्वतः शक्ल सुखधाम है।
सिद्ध भये तिहुँ योगतैं, तिनके पद प्रणाम है॥१२७॥

ॐ ह्रीं निरूपसर्गसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अन्तर द्वीप मही जहाँ, देवन के अभिराम है।
सिद्ध भये तिहुँ योगतैं, तिनके पद प्रणाम है॥१२८॥

ॐ ह्रीं अन्तरद्वीपसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देव गये ले सिंधु जब, कर्म छयो तिंह ठाम है।
सिद्ध भये तिहुँ योगतैं, तिनके पद प्रणाम है॥१२९॥

ॐ ह्रीं उदधिसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(भुजंगप्रयात)

धरैं जोग आसन गहे शुद्धताई,
न हो खेद ध्यानाग्नि सो कर्म छाई।
भये सिद्ध राजा निजानंद साजा,
यही मोक्ष नाजा नमः सिद्ध काजा॥१३०॥

ॐ ह्रीं स्वस्थित्यासनसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

महा शांति मुद्रा पलौथी लगाये,
कियो कर्म को नाश ज्ञानी कहाये।
भये सिद्ध राजा निजानंद साजा,
यही मोक्ष नाजा नमः सिद्ध काजा॥१३१॥

ॐ ह्रीं पर्यंकासनसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

लहै आदि को संहनन पुरुष देही,
लखायो परारंभ में भाव ते ही।
भये सिद्ध राजा निजानंद साजा,
यही मोक्ष नाजा नमः सिद्ध काजा॥१३२॥

ॐ ह्रीं पुरुषवेदसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

खपायो प्रथम सात प्रकृति विमोहा,
गहो शुद्ध श्रेणी क्षयो कर्ममोहा।
भये सिद्ध राजा निजानंद साजा,
यही मोक्ष नाजा नमः सिद्ध काजा॥१३३॥

ॐ ह्रीं क्षपकश्रेणीसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

समय एक में एक वासौ अनंता,
धरो आठ तापं यही भेद अन्ता।
भये सिद्ध राजा निजानंद साजा,
यही मोक्ष नाजा नमः सिद्ध काजा॥१३४॥

ॐ ह्रीं एकसमयसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

किसी देश में वा किसी काल माहीं,
गिने दो समय में तथा अन्तराई।
भये सिद्ध राजा निजानंद साजा,
यही मोक्ष नाजा नमः सिद्ध काजा॥१३५॥

ॐ ह्रीं द्विसमयसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

समय एक दो तीन धाराप्रवाही,
कियो कर्म छय अन्तराय होय नाहीं।
भये सिद्ध राजा निजानंद साजा,
यही मोक्ष नाजा नमः सिद्ध काजा॥१३६॥

ॐ ह्रीं त्रिसमयसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

हुवे हों सु होंगे सु हो हैं अबारी,
त्रिकालं सदा मोक्ष पंथा विहारी।
भये सिद्ध राजा निजानंद साजा,
यही मोक्ष नाजा नमः सिद्ध काजा॥१३७॥

ॐ ह्रीं त्रिकालसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तिहूँ लोक के शुद्ध सम्यक्त्व धारी,
महा भार संजम धरै हैं अबारी।
भये सिद्ध राजा निजानंद साजा,
यही मोक्ष नाजा नमः सिद्ध काजा॥१३८॥

ॐ ह्रीं त्रिलोकसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(मरहठा)

तिहुँ लोक निहारा, सब दुखकारा, पापरूप संसार।
ताको परिहारा सुलभ सुखारा, भये सिद्ध अविकार॥
हे जगत्रय नायक मंगलदायक, मंगलमय सुखकार।
मैं नमूँ त्रिकाला हो अघ टाला, तप हर शशि उनहारा॥१३९॥

ॐ ह्रीं सिद्धमंगलेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥१३९॥

तिहुँ कर्म-कालिमा, लगी जालिमा, करै रूप दुखदाय।
तुम ताको नाशो, स्वयं प्रकाशो, स्वातम रूप सुभाय॥
हे जगत्रय-नायक मंगलदायक, मंगलमय सुखकार।
मैं नमूँ त्रिकाला, हो अघ टाला, तप हर शशि उनहार॥१४०॥

ॐ ह्रीं सिद्धमंगलस्वरूपेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥१४०॥

तिहुँ जग के प्राणी, सब अज्ञानी, फँसे मोह जंजाल।
हो तिहुँ जगत्राता, पूरण ज्ञाता, तुम ही एक खुशहाल॥हे जगत्रय०॥

ॐ ह्रीं सिद्धमंगलज्ञानेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥१४१॥

यह मोह अंधेरी, छाई घनेरी, प्रबल पटल रहो छाय।
तुम ताहि उघारो, सकल निहारो, युगपत आनंददाय॥हे जगत्रय०॥

ॐ ह्रीं सिद्धमंगलदर्शनेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥१४२॥

निजबंधन डोरी, छिन में तोरी, स्वयं शक्ति परकाश।
निरभय निरमोही, पर अछोही, अन्तरायविधि नाश॥हे जगत्रय०॥

ॐ ह्रीं सिद्धमंगलवीर्येभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥१४३॥

जाके प्रसादकर, सकल चराचर, निजसों भिन्न लखाय।
रुष-राग निवारा, सुख विस्तारा, आकुलता विनशाय॥हे जगत्रय०॥

ॐ ह्रीं सिद्धमंगलसम्यक्त्वेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥१४४॥

अस्पर्श अमूरति, चिनमय मूरति, अरस अलिंग अनूप।
मन अक्ष अलक्षं, ज्ञान प्रत्यक्षं, शुभ अवगाह स्वरूप॥हे जगत्रय०॥

ॐ ह्रीं सिद्धमंगलावगाहनेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥१४५॥

अव्यक्त स्वरूपं, अमल अनूपं, अलख अगम असमान।
अवगाह उदर धर, वास परस्पर, भिन्न भिन्न परनाम॥हे जगत्रय०॥

ॐ ह्रीं सिद्धमंगलसूक्ष्मत्वेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥१४६॥

अनुभूति विलासी समरस रासी, हीनाधिक विधि नाश।
विधि गोत्र नाशकर, पूरण पदधर, असंबाध परकाश॥हे जगत्रय०॥

ॐ ह्रीं सिद्धमंगलअगुरुलघुभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥१४७॥

पुद्गल कृत सारी, विविधि प्रकारी, द्वैतभाव अधिकार।
सब भाँति निवारी, निज सुखकारी, पायो पद अविकार॥
हे जगत्रय नायक मंगलदायक, मंगलमय सुखकार।
मैं नमूँ त्रिकाला, हो अघ टाला, तप हर शशि उनहारा॥

ॐ ह्रीं सिद्धमंगलाव्याबाधितेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥१४८॥

अवगाह प्रणामी, ज्ञानारामी, दर्शन-वीर्य अपार।
सूक्षम अवकाशं, अज अविनाशं, अगुरुलघू सुखकार॥हे जगत्रय०॥

ॐ ह्रीं सिद्धमंगलाष्टगुणेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥१४९॥

शुद्धातम सारं, अष्ट प्रकारं, शिव स्वरूप अनिवार।
निज गुणपरधानं, सम्यकज्ञानं, आदि अन्त अविकार॥हे जगत्रय०॥

ॐ ह्रीं सिद्धमंगल-अष्टरूपेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥१५०॥

मंगल अरहन्तं, अष्टम भन्तं, सिद्ध अष्टगुण भास।
ये ही बिलसावैं, अन्य न पावैं, असाधारण परकाश॥हे जगत्रय०॥

ॐ ह्रीं सिद्धमंगल-अष्टप्रकाशकेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥१५१॥

निर आकुलताई, सुख अधिकाई, परम शुद्ध परिणाम।
संसार निवारण, बन्ध विडारन, यही धर्म सुखधाम॥हे जगत्रय०॥

ॐ ह्रीं सिद्धमंगलधर्मेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥१५२॥

(चूलिका)

तीनकाल तिहुँ लोक में, तुम गुण और न माहिं लखाने।
लोकोत्तम परसिद्ध हो, सिद्धराज सुख साज बखाने॥१५३॥

ॐ ह्रीं सिद्धलोकोत्तमगुणेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

लोकत्रय शिर छत्र मणि, लोकत्रय वर पूज्य प्रधाने।
लोकोत्तम परसिद्ध हो, परसिद्धराज सुखसाज बखाने॥१५४॥

ॐ ह्रीं सिद्धलोकोत्तमेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अमल अनूप तेजघन, निरावरण निजरूप प्रमाने।
लोकोत्तम परसिद्ध हो, सिद्धराज सुख साज बखाने॥१५५॥

ॐ ह्रीं सिद्धलोकोत्तमस्वरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

लोकालोक प्रकाश कर, लोकातीत प्रत्यक्ष प्रमाने।
लोकोत्तम परसिद्ध हो, सिद्धराज सुख साज बखाने॥१५६॥

ॐ ह्रीं सिद्धलोकोत्तमज्ञानाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सकल दर्शनावरण बिन, पूरन-दरसन जोत उगाने।
लोकोत्तम परसिद्ध हो, सिद्धराज सुख साज बखाने॥१५७॥

ॐ ह्रीं सिद्धलोकोत्तमदर्शनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अतुल अतीन्द्रिय वीरजकर, भोग तिनैं शिवनारि अघाने।
लोकोत्तम परसिद्ध हो, सिद्धराज सुख साज बखाने॥१५८॥

ॐ ह्रीं सिद्धलोकोत्तमवीर्याय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(त्रोटक)

बिन कारण ही सबके मितु हो, सर्वोत्तम लोकविषैं हितु हो।
इनहीं गुण में मन पागत हैं, शिववास करो शरणागत हैं॥१५९॥

ॐ ह्रीं लोकोत्तमशरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तुम रूप अनूपम ध्यान किये, निज रूप दिखावत स्वच्छ हिये।
इनहीं गुण में मन पागत है, शिववास करो शरणागत हैं॥१६०॥

ॐ ह्रीं सिद्धस्वरूपशरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

निरभेद अछेद विकासित हैं, सब लोक अलोक विभासित हैं।
इनहीं गुण में मन पागत है, शिववास करो शरणागत हैं॥१६१॥

ॐ ह्रीं सिद्धदर्शनशरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

निरबाध अगाध प्रकाशमई, निरद्वन्द अबंध अभय अजई।
इनहीं गुण में मन पागत है, शिववास करो शरणागत हैं॥१६२॥

ॐ ह्रीं सिद्धज्ञानशरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

हितकारण तारण-तरण कहै, अप्रमाद प्रमाद प्रकाशन है।
इनहीं गुण में मन पागत है, शिववास करो शरणागत हैं॥१६३॥

ॐ ह्रीं सिद्धवीर्यशरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अविरुद्ध विशुद्ध प्रसिद्ध महा, निज आतम-तत्त्व प्रबोध लहा।
इनहीं गुण में मन पागत है, शिववास करो शरणागत हैं॥१६४॥

ॐ ह्रीं सिद्धसम्यक्त्वशरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जिनको पूर्वापर अन्त नहीं, नित धार-प्रवाह बहै अति ही।
इनहीं गुण में मन पागत है, शिववास करो शरणागत हैं॥१६५॥
ॐ ह्रीं सिद्ध-अनन्तशरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कबहूँ नहीं अन्त समावत है, सु अनन्त-अनन्त कहावत है।
इनहीं गुण में मन पागत है, शिववास करो शरणागत हैं॥१६६॥
ॐ ह्रीं सिद्ध-अनन्तानन्तशरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तिहुँ काल सु सिद्ध महा सुखदा, निजरूप विषैं थिर भाव सदा।
इनहीं गुण में मन पागत है, शिववास करो शरणागत हैं॥१६७॥
ॐ ह्रीं सिद्धत्रिकालशरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तिहुँ लोक शिरोमणि पूजि महा, तिहुँ लोक प्रकाशक तेज कहा।
इनहीं गुण में मन पागत है, शिववास करो शरणागत हैं॥१६८॥
ॐ ह्रीं सिद्धत्रिलोकशरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

गिनती परमाण जु लोक धरे, परदेश समूह प्रकाश करे।
इनहीं गुण में मन पागत है, शिववास करो शरणागत हैं॥१६९॥
ॐ ह्रीं सिद्धासंख्यातशरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्वापर एकहि रूप लसे, नित लोक सिंहासन वास बसे।
इनहीं गुण में मन पागत है, शिववास करो शरणागत हैं॥१७०॥
ॐ ह्रीं सिद्धध्रौव्यगुणशरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जगवास पर्याय विनाश कियो, अब निश्चय रूप विशुद्ध भयो।
इनहीं गुण में मन पागत है, शिववास करो शरणागत हैं॥१७१॥
ॐ ह्रीं सिद्धोत्पादगुणशरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

परद्रव्य थकी रुष-राग नहीं, निज भाव बिना कहुँ लाग नहीं।
इनहीं गुण में मन पागत है, शिववास करो शरणागत हैं॥१७२॥
ॐ ह्रीं सिद्धसाम्यगुणशरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

बिन कर्म-कलंक विराजत हैं, अति स्वच्छ महागुण राजत हैं।
इनहीं गुण में मन पागत है, शिववास करो शरणागत हैं॥१७३॥
ॐ ह्रीं सिद्धस्वच्छगुणशरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मन इन्द्रिय आदि न व्याधि तहाँ, रुष-राग कलेश प्रवेश न ह्वां।
इनहीं गुण में मन पागत है, शिववास करो शरणागत हैं॥१७४॥

ॐ ह्रीं सिद्धस्वस्थितगुणशरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

निजरूप विषैं नित मगन रहैं, पर योग-वियोग न दाह लहैं।
इनहीं गुण में मन पागत है, शिववास करो शरणागत हैं॥१७५॥

ॐ ह्रीं सिद्धसमाधिगुणशरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्रुतज्ञान तथा मतिज्ञान दऊ, परकाशत हैं यह व्यक्त सऊ।
इनहीं गुण में मन पागत है, शिववास करो शरणागत हैं॥१७६॥

ॐ ह्रीं सिद्धव्यक्तगुणशरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

परतक्ष अतीन्द्रिय भाव महा, मन इन्द्रिय बोध न गुह्य कहा।
इनहीं गुण में मन पागत है, शिववास करो शरणागत हैं॥१७७॥

ॐ ह्रीं सिद्ध-अव्यक्तगुणशरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(मालिनी)

निजगुणवर स्वामी शुद्धसंबोधनामी।
परगुण नहिं लेशा एक ही भाव शेषा॥
मनवचतन लाई पूजहों भक्ति भाई।
भवि भवभय चूरं शाश्वतं सुक्खपूरं॥१७८॥

ॐ ह्रीं सिद्धगुणस्वरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सब विधि-मल जारा बन्ध-संसार टारा।
जगजिय हितकारी उच्चता पाय सारी॥
मनवचतन लाई पूजहों भक्ति भाई।
भवि भवभय चूरं शाश्वतं सुक्खपूरं॥१७९॥

ॐ ह्रीं सिद्धपरमात्मस्वरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पर-परणति-खण्डं भेदबाधा-विहण्डं।
शिवसदन निवासी नित्य स्वानंदरासी॥
मनवचतन लाई पूजहों भक्ति भाई।
भवि भवभय चूरं शाश्वतं सुक्खपूरं॥१८०॥

ॐ ह्रीं सिद्धखण्डस्वरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चितसुखविलसानं आकुलं भावहानं।
निज अनुभवसारं द्वैतसंकल्पटारं॥
मनवचतन लाई पूजहों भक्ति भाई।
भवि भवभय चूरं शाश्वतं सुक्खपूरं॥१८१॥

ॐ ह्रीं सिद्धचिदानन्दस्वरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

परकरणनिवारं भाव संभाव धारं।
निज अनुपम ज्ञानं सुक्खरूपं निधानं॥
मनवचतन लाई पूजहों भक्ति भाई।
भवि भवभय चूरं शाश्वतं सुक्खपूरं॥१८२॥

ॐ ह्रीं सिद्धसहजानंदाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

विधिवश सब प्रानी हीन-आधिक्य ठानी।
तिसकरण निमूलापाय रूपाधरूला॥
मनवचतन लाई पूजहों भक्ति भाई।
भवि भवभय चूरं शाश्वतं सुक्खपूरं॥१८३॥

ॐ ह्रीं सिद्धाच्छेदरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जब लग परजाया भेद नाना धराया।
इक शिवपद माहीं भेद आभास नाहीं॥
मनवचतन लाई पूजहों भक्ति भाई।
भवि भवभय चूरं शाश्वतं सुक्खपूरं॥१८४॥

ॐ ह्रीं सिद्धाभेदगुणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अनुपम गुणधारी लोक संभावटारी।
सुरनरमुनि ध्यावै सो नहीं पार पावैं॥
मनवचतन लाई पूजहों भक्ति भाई।
भवि भवभय चूरं शाश्वतं सुक्खपूरं॥१८५॥

ॐ ह्रीं सिद्धानुपमगुणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जिस अनुभव सरसै धार आनंद वरसै।
अनुपम रस सोई स्वाद जासो न कोई॥

मनवचतन लाई पूजहों भक्ति भाई।
भवि भवभय चूरं शाश्वतं सुक्खपूरं॥१८६॥

ॐ ह्रीं सिद्ध-अमृततत्त्वाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सब श्रुत विस्तारा जास माहीं उजारा।
यह निजपद जानो आत्म संभावमानो॥
मनवचतन लाई पूजहों भक्ति भाई।
भवि भवभय चूरं शाश्वतं सुक्खपूरं॥१८७॥

ॐ ह्रीं सिद्धश्रुतप्राप्ताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(दोधक)

जीव-अजीव सबै प्रतिभासी, केवल जोति लहो सम नाशी।
सिद्ध-समूह नमूँ शिरनाई, पाप कलाप सबै खिर जाई॥१८८॥

ॐ ह्रीं सिद्धकेवलप्राप्ताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चेतनरूप प्रदेश बिराजै, आकृतिरूप अलिंग सु छाजै।
सिद्ध-समूह नमूँ शिरनाई, पाप कलाप सबै खिर जाई॥१८९॥

ॐ ह्रीं सिद्धसाकारनिराकाराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नाहिं गहैं पर आश्रित जानो, जो अवलम्ब बिना पद मानो।
सिद्ध-समूह जजों मन लाई, पाप कलाप सबै खिर जाई॥१९०॥

ॐ ह्रीं निरालम्बाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

राग-विषाद बसै नहिं जामें, जोग वियोग भोग नहिं तामैं।
सिद्ध-समूह जजों मन लाई, पाप कलाप सबै खिर जाई॥१९१॥

ॐ ह्रीं सिद्धनिष्कलंकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ज्ञान प्रभाव प्रकाश भयो है, कर्म-समूह विनाश भयो है।
सिद्ध-समूह जजों मन लाई, पाप कलाप सबै खिर जाई॥१९२॥

ॐ ह्रीं सिद्धतेजःसंपन्नाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

आतमलाभ निजाश्रित पाया, द्वैत विभाव समूल नसाया।
सिद्ध-समूह जजों मन लाई, पाप कलाप सबै खिर जाई॥१९३॥

ॐ ह्रीं सिद्ध-आत्मसंपन्नाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(मोतियादाम)

चहूँ गति काय-स्वरूप प्रत्यक्ष, शिवालय वास अनूप अलक्ष।
भजो मन आनन्दसों शिवनाथ, धरो चरणांबुज को निज माथ॥१९४॥

ॐ ह्रीं सिद्धगर्भवासाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

निजानन्द श्रीयुत् ज्ञान अथाह, सुशोभित तृप्त भयो सुख पाय।
भजो मन आनन्दसों शिवनाथ, धरो चरणांबुज को निज माथ॥१९५॥

ॐ ह्रीं सिद्धलक्ष्मीसंतृप्ताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सुभाव निजातम अन्तर लीन, विभाव परातम आपद कीन।
भजो मन आनन्दसों शिवनाथ, धरो चरणांबुज को निज माथ॥१९६॥

ॐ ह्रीं सिद्धान्तराकाराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जहाँ लग द्वेष प्रवेश न होय, तहाँ लग सार रसायन होय।
भजो मन आनन्दसों शिवनाथ, धरो चरणांबुज को निज माथ॥१९७॥

ॐ ह्रीं सिद्धसाररसाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जिसो निरलेप हुए विषतुंव्य, तिसो जग अग्र निराश्रय लुंब्य।
भजो मन आनन्दसों शिवनाथ, धरो चरणांबुज को निज माथ॥१९८॥

ॐ ह्रीं सिद्धशिखरमण्डनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तिहूँ जग शीश बिराजित नित्य, शिरोमणि सर्व समाज अनित्य।
भजो मन आनन्दसों शिवनाथ, धरो चरणांबुज को निज माथ॥१९९॥

ॐ ह्रीं सिद्धत्रिलोकाग्रनिवासिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अकाय अरूप अलक्ष अवेद, निजातम लीन सदा अविछेद।
भजो मन आनन्दसों शिवनाथ, धरो चरणांबुज को निज माथ॥२००॥

ॐ ह्रीं सिद्धस्वरूपगुप्तेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(अडिल्ल)

ऋषभ आदि चितधारि प्रथम दीक्षा धरी,
केवलज्ञान उपाय धर्मविधि उच्चरी।
निजस्वरूप थितिकरण हरण विधि चार हैं,
परमारथ आचार्य सिद्ध सुखकार हैं॥२०१॥

ॐ ह्रीं सूरिभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

निज ही निज उर धार हेत सामर्थ है,
आत्मशक्ति कर व्यक्ति करण विधि व्यर्थ है।
निजस्वरूप थितिकरण हरण विधि चार है,
परमारथ आचार्य सिद्ध सुखकार है॥२०२॥

ॐ ह्रीं सूरिगुणेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

साधन साधक साध्य भाव सबही गयो,
भेद अगोचर रूप महासुख संचयो।
निजस्वरूप थितिकरण हरण विधि चार है,
परमारथ आचार्य सिद्ध सुखकार है॥२०३॥

ॐ ह्रीं सूरिस्वरूपगुणेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तत्त्वप्रतीत निजातमरूप अनुभव कला,
पायो सत्यानंद कुमारग दलमला।
निजस्वरूप थितिकरण हरण विधि चार है,
परमारथ आचार्य सिद्ध सुखकार है॥२०४॥

ॐ ह्रीं सूरिसम्यक्त्वगुणेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वस्तु अनंत धर्म प्रकाशक ज्ञान है,
एकपक्ष हट गृहित निपट असुहान है।
निजस्वरूप थितिकरण हरण विधि चार है,
परमारथ आचार्य सिद्ध सुखकार है॥२०५॥

ॐ ह्रीं सूरिज्ञानगुणेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वस्तुधर्म समान ताहि अवलोकना,
शुद्ध निजातमधर्म ताहि नहीं लोपना।
निजस्वरूप थितिकरण हरण विधि चार है,
परमारथ आचार्य सिद्ध सुखकार है॥२०६॥

ॐ ह्रीं सूरिदर्शनगुणेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अतुल अकम्प अखेद शुद्ध परिणति धरैं,
जगतरूप व्यापार न इक छिन आदरैं।

निजस्वरूप थितिकरण हरण विधि चार है,
परमारथ आचार्य सिद्ध सुखकार है॥२०७॥

ॐ ह्रीं सूरिवीर्यगुणेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

षट्त्रिंशति गुण सूरि मोक्षफल पाइयो,
तातैं हम इन गुणकर ही जश गाइयो।
निजस्वरूप थितिकरण हरण विधि चार है,
परमारथ आचार्य सिद्ध सुखकार है॥२०८॥

ॐ ह्रीं सूरिषट्त्रिंशत्गुणेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पंचाचार आचार साध शिवपद लियो,
वास्तव में ये गुण निज में परगट कियो।
निजस्वरूप थितिकरण हरण विधि चार है,
परमारथ आचार्य सिद्ध सुखकार है॥२०९॥

ॐ ह्रीं सूरिपंचाचारगुणेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

गुण समुदाय सरूप द्रव्य आतम महा,
परसों भिन्न अभेद निजातम पद लहा।
निजस्वरूप थितिकरण हरण विधि चार है,
परमारथ आचार्य सिद्ध सुखकार है॥२१०॥

ॐ ह्रीं सूरिद्रव्यगुणेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वीतराग परणति रचही सुखकार जू,
परम शुद्ध स्वयं सिद्ध भयो अनिवार जू।
निजस्वरूप थितिकरण हरण विधि चार है,
परमारथ आचार्य सिद्ध सुखकार है॥२११॥

ॐ ह्रीं सूरिपर्यायगुणेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(चंचला)

आप सुक्खरूप हो सु, और सौख्यकार होत,
ज्यूँ घटादिको प्रकाशकार है सुदीप जोत।
सूरि धर्म को प्रकाश, सिद्ध-धर्म-रूप जान,
मैं नमूँ त्रिकाल एक ही अभेद पक्षमान॥२१२॥

ॐ ह्रीं सूरिमंगलेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

संस अंश भान, वस्तु भाव को प्रकाशमान,
ज्ञान इन्द्रिया-निन्द्रिया कहै उभै प्रमाण।
सूरि धर्म को प्रकाश, सिद्ध-धर्म-रूप जान,
मैं नमूँ त्रिकाल एक ही अभेद पक्षमान॥२१३॥

ॐ ह्रीं सूरिज्ञानमंगलेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

लोक उत्तमा सु वसु कर्म को प्रसंग टार,
शुद्ध बुद्ध रिद्ध पाय लोक वेदना निवार।
सूरि धर्म को प्रकाश, सिद्ध-धर्म-रूप जान,
मैं नमूँ त्रिकाल एक ही अभेद पक्षमान॥२१४॥

ॐ ह्रीं सूरिलोकोत्तमेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

लोकभीत सों अतीत आदि अन्त एक रूप,
लोक में प्रसिद्ध सर्व भाव को अनूप भूप।
सूरि धर्म को प्रकाश, सिद्ध-धर्म-रूप जान,
मैं नमूँ त्रिकाल एक ही अभेद पक्षमान॥२१५॥

ॐ ह्रीं सूरिज्ञानलोकोत्तमेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

बीच में न अन्तराय, आप ही सुखाय धाय,
या अबाध धर्म को प्रकाश में करै सहाय।
सूरि धर्म को प्रकाश, सिद्ध-धर्म-रूप जान,
मैं नमूँ त्रिकाल एक ही अभेद पक्षमान॥२१६॥

ॐ ह्रीं सूरिदर्शनलोकोत्तमेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मोह भार को निवार, शुद्ध चेतना सुधार,
यह वीर्यता अपार लोक में प्रशंसकार।
सूरि धर्म को प्रकाश, सिद्ध-धर्म-रूप जान,
मैं नमूँ त्रिकाल एक ही अभेद पक्षमान॥२१७॥

ॐ ह्रीं सूरिवीर्यलोकोत्तमेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

धर्म केवली महान, मोह अन्ध तेज भान,
सप्त तत्व को बखानि, मोक्षमार्ग को निधान।
सूरि धर्म को प्रकाश, सिद्ध-धर्म-रूप जान,
मैं नमूँ त्रिकाल एक ही अभेद पक्षमान॥२१८॥

ॐ ह्रीं सूरिकेवलधर्माय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शील आदि पूर भेद, कर्म के कलाप छेद,
आत्म-शक्ति को प्रकाश शुद्ध चेतना विलास।
सूरि धर्म को प्रकाश, सिद्ध-धर्म-रूप जान,
मैं नमूँ त्रिकाल एक ही अभेद पक्षमान॥२१९॥

ॐ ह्रीं सूरितपेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

लोक चाह की न दाह, द्वेष को प्रवेश नाह,
शुद्ध चेतना प्रवाह, वृद्धता धरै अथाह।
सूरि धर्म को प्रकाश, सिद्ध-धर्म-रूप जान,
मैं नमूँ त्रिकाल एक ही अभेद पक्षमान॥२२०॥

ॐ ह्रीं सूरिपरमतपेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मोह को न जोर जाय, घोर आपदा नसाय,
घोरतें तपो सु लोक-शीश जाय मुक्ति पाय।
सूरि धर्म को प्रकाश, सिद्ध-धर्म-रूप जान,
मैं नमूँ त्रिकाल एक ही अभेद पक्षमान॥२२१॥

ॐ ह्रीं सूरितपोघोरगुणेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(कामिनी-मोहन)

वृद्ध पर वृद्ध गुण गहन नित हो जहाँ,
शाश्वतं पूर्णता सातिशय गुण तहाँ।
सूरि सिद्धांत के पारगामी भये,
मैं नमूँ जोर कर मोक्षधामी भये॥२२२॥

ॐ ह्रीं सूरिघोरगुणपराक्रमेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

एक सम-भाव सम और नहीं ऋद्धि है,
सर्व ही ऋद्धि जाके भये सिद्ध है।
सूरि सिद्धांत के पारगामी भये,
मैं नमूँ जोर कर मोक्षधामी भये॥२२३॥

ॐ ह्रीं सूरिऋद्धिऋषिभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जोग के रोक से कर्म का रोक हो,
गुप्त साधन किये साध्य शिवलोक हो।

सूरि सिद्धांत के पारगामी भये,
मैं नमूँ जोर कर मोक्षधामी भये॥२२४॥

ॐ ह्रीं सूरिसुयोगिभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ध्यान-बल कर्म के नाश के हेतु है,
कर्म को नाश शिववास ही देत है।
सूरि सिद्धांत के पारगामी भये,
मैं नमूँ जोर कर मोक्षधामी भये॥२२५॥

ॐ ह्रीं सूरिध्यानेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पंचधाचार में आत्म अधिकार है,
बाह्य आधार-आधेय सुविकार है।
सूरि सिद्धांत के पारगामी भये,
मैं नमूँ जोर कर मोक्षधामी भये॥२२६॥

ॐ ह्रीं सूरिधात्रिभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सूर सम आप परतेज करतार है,
सूर ही मोक्षनिधि पात्र सुखकार है।
सूरि सिद्धांत के पारगामी भये,
मैं नमूँ जोर कर मोक्षधामी भये॥२२७॥

ॐ ह्रीं सूरिपात्रेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

बाह्य छत्तीस अन्तर अभेदात्मा,
आप थिर रूप हैं सूर परमात्मा।
सूरि सिद्धांत के पारगामी भये,
मैं नमूँ जोर कर मोक्षधामी भये॥२२८॥

ॐ ह्रीं सूरिगुणशरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ज्ञान उपयोग में स्वस्थिता शुद्धता,
पूर्ण चारित्रता पूर्ण ही बुद्धता।
सूरि सिद्धांत के पारगामी भये,
मैं नमूँ जोर कर मोक्षधामी भये॥२२९॥

ॐ ह्रीं सूरिधर्मगुणशरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शरण, दुख हरण, पर आपही शर्ण हैं,
आपने कार्य में आपही कर्ण हैं।
सूरि सिद्धांत के पारगामी भये,
मैं नमूँ जोर कर मोक्षधामी भये॥२३०॥

ॐ ह्रीं सूरिशरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(दोहा)

ज्यों कंचन बिन कालिमा, उज्ज्वल रूप सुहाय।
त्योंही कर्म-कलंक बिन, निज स्वरूप दरसाय॥२३१॥

ॐ ह्रीं सूरिस्वरूपशरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

भेदाभेद सु नय थकी, एक ही धर्म विचार।
पायो सूरि सुबोध करि, भवदधि करि उद्धार॥२३२॥

ॐ ह्रीं सूरिधर्मस्वरूपशरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अन्य समस्त विकल्प तजि, केवल निजपद लीन।
पूरण-ज्ञान स्वरूप यह, पायो सूरि सुधीन॥२३३॥

ॐ ह्रीं सूरिज्ञानस्वरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सुखाभास इन्द्रीजनित, त्यागी सूरि महन्त।
पूरण-सुख स्वाधीन निज, साध्य भये सुखवन्त॥२३४॥

ॐ ह्रीं सूरिसुखस्वरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अनेकांत तत्वार्थ के, ज्ञाता सूरि महान।
निरावर्ण निजरूप लखि, पायो पद निरवाण॥२३५॥

ॐ ह्रीं सूरिदर्शनस्वरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मोहादिक रिपु नाशिके, सूर्य महा सामर्थ।
शिव भामिन भरतार नित, रमै साध निज अर्थ॥२३६॥

ॐ ह्रीं सूरिवीर्यस्वरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(पद्धड़ी)

जिन निज-आतम निष्पाप कीन, ते सन्त करैं पर पाप छीन।
शिवमग प्रगटन आदित्य सूर, हम शरण गही आनंद पूर॥२३७॥

ॐ ह्रीं सूरिमंगलशरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

रत्नत्रय जीव सुभावभाय, भवि पतित उधारण हो सहाय।
शिवमग प्रगटन आदित्य सूर, हम शरण गही आनंद पूर॥२३८॥
ॐ ह्रीं सूरिधर्मशरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तपकर ज्यों कंचन अग्नि जोग, ह्वै शुद्ध निजातम पद मनोग।
शिवमग प्रगटन आदित्य सूर, हम शरण गही आनंद पूर॥२३९॥
ॐ ह्रीं सूरितपशरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

एकाग्र-चित्त चिन्ता निरोध, पावैं अबाध शिव आत्मबोध।
शिवमग प्रगटन आदित्य सूर, हम शरण गही आनंद पूर॥२४०॥
ॐ ह्रीं सूरिध्यानशरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

केवलज्ञानादि विभूति पाइ, ह्वै शुद्ध निरंजन पद सुखाइ।
शिवमग प्रगटन आदित्य सूर, हम शरण गही आनंद पूर॥२४१॥
ॐ ह्रीं सूरिसिद्धशरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तिहुँ लोकनाथ तिहुँ लोक माँहिं, या सम दूजो सुखदाय नाहिं।
शिवमग प्रगटन आदित्य सूर, हम शरण गही आनंद पूर॥२४२॥
ॐ ह्रीं सूरित्रिलोकशरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

आगत अतीत अरु वर्तमान, तिहुँ काल भव्य पावैं निर्वाण।
शिवमग प्रगटन आदित्य सूर, हम शरण गही आनंद पूर॥२४३॥
ॐ ह्रीं सूरित्रिकालशरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मधि अधो उर्द्ध तिहुँ जगतमाँहि, सब जीवन सुखकर और नाहिं।
शिवमग प्रगटन आदित्य सूर, हम शरण गही आनंद पूर॥२४४॥
ॐ ह्रीं सूरित्रिजगन्मंगलाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तिहुँ लोकमाँहि सुखकार आप, सत्यारथ मंगल हरण पाप।
शिवमग प्रगटन आदित्य सूर, हम शरण गही आनंद पूर॥२४५॥
ॐ ह्रीं सूरित्रिलोकमंगलशरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

उत्तम मंगल परमार्थ रूप, जग दुख नासे शिव-सुख-स्वरूप।
शिवमग प्रगटन आदित्य सूर, हम शरण गही आनंद पूर॥२४६॥
ॐ ह्रीं सूरित्रिजगन्मंगलोत्तमशरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शरणागत दुखनाशन महान, तिहुँ जग हितकारण सुख निधान।
शिवमग प्रगटन आदित्य सूर, हम शरण गही आनंद पूर॥२४७॥

ॐ ह्रीं सूरित्रिजगन्मंगलशरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तिहुँ लोकनाथ तिहुँ लोक पूज्य, शरणागत प्रतिपालन अदूज्य।
शिवमग प्रगटन आदित्य सूर, हम शरण गही आनंद पूर॥२४८॥

ॐ ह्रीं सूरित्रिलोकमण्डनशरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अव्यय अपूर्व सामर्थ युक्त, संसारातीत विमोहमुक्त।
शिवमग प्रगटन आदित्य सूर, हम शरण गही आनंद पूर॥२४९॥

ॐ ह्रीं सूरिऋद्धिमण्डलशरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(त्रोटक)

निज रूप अनूप लखें सुख हो, जग में यह मंत्र महान कहो।
धरि भक्ति हिये गणराज सदा, प्रणमूँ शिववास करैं सुखदा॥२५०॥

ॐ ह्रीं सूरिमंत्रस्वरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जिम नागदेव वश मंत्र विधि, भव वास हरण तुम नाम निधि॥धरि०॥

ॐ ह्रीं सूरिमंत्रगुणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥२५१॥

जगमोहित जीव न पावत है, यह मंत्र सु धर्म कहावत है॥धरि०॥

ॐ ह्रीं सूरिधर्माय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥२५२॥

चिदरूप चिदातम भाव धरें, गुण सार यही अविरुद्ध करें॥धरि०॥

ॐ ह्रीं सूरिचैतन्यस्वरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥२५३॥

अविकार चिदातम आनन्द हो, परमातम हो परमानंद हो॥धरि०॥

ॐ ह्रीं सूरिचिदानंदाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥२५४॥

निज ज्ञान प्रमाण प्रकाश करैं, सुखरूप निराकुलता सु धरैं॥धरि०॥

ॐ ह्रीं सूरिज्ञानानन्दाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥२५५॥

धरि योग महा शम भाव गहैं, सुख राशि महा शिववास लहैं॥धरि०॥

ॐ ह्रीं सूरिशमभावाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥२५६॥

सम भाव महा गुण धारत हैं, निज आनंद भाव निहारत हैं॥धरि०॥

ॐ ह्रीं सूरितपोगुणानन्दाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥२५७॥

शिवसाधन को विधिनाश कहा, विधिनाशन को तप कर्ण महा।
धरि भक्ति हिये गणराज सदा, प्रणमूँ शिववास करैं सुखदा॥

ॐ ह्रीं सूरितपोगुणस्वरूपाय नमः निर्वपामीति स्वाहा॥२५८॥

निज आत्म विषैं नित मगर रहैं, जग के सुख मूल न भूलि चहैं॥धरि०॥

ॐ ह्रीं सूरिहंसाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥२५९॥

वनवास उदास सदा जगतैं, पर आस न खास विलास रतैं॥धरि०॥

ॐ ह्रीं सूरिहंसगुणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥२६०॥

निज नाम महागुण मंत्र धरैं, छिन मात्र जपे भवि आश वरैं॥धरि०॥

ॐ ह्रीं सूरिमंत्रगुणानन्दाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥२६१॥

परमोत्तम सिध परियाय कही, अति शुद्ध प्रसिद्ध सुखात्म मही॥धरि०॥

ॐ ह्रीं सूरिसिद्धानन्दाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥२६२॥

(माला)

शशि सन्ताप कलाप निवारण ज्ञान कला सरसै।
मिथ्यातम हरि भवि आनंद करि अनुभव भाव दरसै॥
सरि निजभेद कियो परसैं,
भये मुक्त मैं नमूँ शीश नित जोर युगल करसैं॥टेक॥

ॐ ह्रीं सूरि-अमृतचन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥२६३॥

पूरणचन्द्र सरूप कलाधर ज्ञान-सुधा बरसै।
भवि चकोर नित चाहत नित मनु चरण जोति परसै॥सूरि०॥

ॐ ह्रीं सूरिसुधाचन्द्रस्वरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥२६४॥

जगजिय ताप निवारण कारण विलसे अन्तर सैं।
देव सुधा सम गुण निवाहकर, सकल चराचर सैं॥सूरि०॥

ॐ ह्रीं सूरिसुधागुणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥२६५॥

जा धुनि सुनि संशय विनसै जिम ताप मेघ वरसै।
मनहुँ कमल मकरंद वृन्द अलि पाय सुधारस सैं॥सूरि०॥

ॐ ह्रीं सूरिसुधाध्वनये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥२६६॥

अजर अमर सुखदाय भाय मन ज्यों मयूर हरसै,
गाजत घन बाजत ध्वनि सुनि मनु भाजत भय उरसैं।
सूरि निज भेद कियो परसैं,
भये मुक्ति मैं नमूँ शीश नित जोर युगल करसैं॥

ॐ ह्रीं सूरि-अमृतध्वनिसुरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥२६७॥

(चकोर)

जो अपने गुण वा पर्याय, वरै निज धर्म न होत विनास।
द्रव्य कहावत है सु अनन्त, स्वभाव धरे निज आत्म विलास॥
सूरि कहाय सु कर्म खिपाइ, निजातम पाय गये शिवधाम।
सु आतमराम सदा अभिराम, भये सुखकाम नमूँ वसु जाम॥

ॐ ह्रीं सूरिद्रव्याय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥२६८॥

ज्यों शशि जोति रहै सियरा नित, ज्यों रवि जोति रहै नित ताप।
त्यों निज ज्ञानकला परपूरण, राजत हो निज करण सु आप॥सूरि०॥

ॐ ह्रीं सूरिगुणद्रव्याय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥२६९॥

हो अविनाश अनूपमरूप सु, ज्ञानमई नित केलि करान।
पै न तजै मरजाद रहै, जिम सिन्धु कलोल सदा परिमाण॥सूरि०॥

ॐ ह्रीं सूरिपर्यायाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥२७०॥

जे कछु द्रव्य तनो गुण है, सु समस्त मिलै गुण आतम माहीं।
ताकरि द्रव्य सरूप कहावत, है अविनाश नमैं हम ताई॥सूरि०॥

ॐ ह्रीं सूरिद्रव्यस्वरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥२७१॥

जा गुण में गुण और न हो, निज द्रव्य रहै नित और न ठौर।
सो गुण रूप सदा निवसें हम पूजत हैं करके कर जोर॥सूरि०॥

ॐ ह्रीं सूरिगुणस्वरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥२७२॥

जो परिणाम धरैं तिनसों, तिनमें करहै वरतै तिस रूप।
सो पर्याय उपाय बिना नित, आप विराजत हैं सु अनूप॥सूरि०॥

ॐ ह्रीं सूरिपर्यायस्वरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥२७३॥

हो नित ही परिणाम समय प्रति, सो उत्पाद कहो भगवान।
सो तुम भाव प्रकाश कियो, निज यह गुण का उत्पाद महान॥
सूरि कहाय सु कर्म खिपाइ, निजातम पाय गये शिवधाम।
सु आतमराम सदा अभिराम, भये सुखकाम नमूँ वसु जाम॥
ॐ ह्रीं सूरिगुणोत्पादाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२७४।।

ज्यों मृतिका निज रूप न छाँडत, है घटमाँहि अनेक प्रकार।
सो तुम जीव स्वभाव धरो नित, मुक्त भए जगवास निवार॥सूरि०॥
ॐ ह्रीं सूरिध्रुवगुणोत्पादाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२७५।।

ये जग में सब भाव विभाव, पराश्रित रूप अनेक प्रकार।
ते सब त्याग भये शिवरूप, अबंध अमन्द महा सुखकार॥सूरि०॥
ॐ ह्रीं सूरिव्ययगुणोत्पादाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२७६।।

जे जगमें षट्-द्रव्य कहे, तिनमें इक जीव सुज्ञान स्वरूप।
और सभी बिन-ज्ञान कहे, तुम राजत हो नित ज्ञान अनूप॥सूरि०॥
ॐ ह्रीं सूरिजीवतत्त्वाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२७७।।

ज्ञान सुभाव धरो नित ही, नहिं छाँड़त हो कबहुँ निज वान।
ये ही विशेष भयो सबसों, नहीं औरन में गुण ये परधान॥सूरि०॥
ॐ ह्रीं सूरिजीवतत्त्वगुणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२७८।।

हो कर्तादि अनेक सुभाव, निजातम में परमै अनिवार।
सो परको न लगाव रहो, निजही निजकर्म रहो सुखकार॥सूरि०॥
ॐ ह्रीं सूरिनिजस्वभावधारकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२७९।।

द्रव्य तथापि, विभाव दोऊ विधि, कर्म प्रवाह वहै बिन आदि।
ते सब एक भये थिररूप, निजातम शुद्ध सुभाव प्रसाद॥सूरि०॥
ॐ ह्रीं सूरि-आश्रवविनाशाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२८०।।

(मोदक)

बंध दऊ विधि के दुख कारण, नाश कियो भवपार उतारण।
सूरि भये निज ज्ञान कलाकर, सिद्ध भये प्रणमूँ मैं मनधर॥
ॐ ह्रीं सूरिबंधतत्त्वविनाशाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२८१।।

संवरतत्त्व महा सुख देत है, आस्रव रोकन को यह हेत है।
सूरि भये निज ज्ञान कलाकर, सिद्ध भये प्रणमूँ मैं मनधर॥

ॐ ह्रीं सूरिसंवरतत्त्वसहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥२८२॥

ज्यूँ मणि दीप अडोल अनूपही, संवर तत्त्व निराकुलरूप ही॥सूरि०॥

ॐ ह्रीं सूरिसंवरतत्त्वस्वरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥२८३॥

संवर के गुण ते मुनि पावत, जो मुनि शुद्ध सुभाव सु ध्यावत॥सूरि०॥

ॐ ह्रीं सूरिसंवरगुणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥२८४॥

संवर धर्मतनी शिव पावहिं, संवर धरम तहाँ दरशावहिं॥सूरि०॥

ॐ ह्रीं सूरिसंवरधर्माय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥२८५॥

(दोहा)

एक देश वा सर्व विधि, दोनों मुक्ति स्वरूप।
नमूँ निरजरा तत्त्व सो, पायो सिद्ध अनूप॥२८६॥

ॐ ह्रीं सूरिनिर्जरातत्त्वाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शुद्ध सुभाव जहाँ तहाँ कहो कर्म को नाश।
एक निरजरा तत्त्व का, रूप कियो परकाश॥२८७॥

ॐ ह्रीं सूरिनिर्जरातत्त्वस्वरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कोटि जन्म के विघन सब, सूखे तृण सम जान।
दहे निर्जरा अग्निसों, इह गुण है परधान॥२८८॥

ॐ ह्रीं सूरिनिर्जरागुणस्वरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

निज बल कर्म खपाइये, कहो निर्जरा धर्म।
धर्मी सोई आत्मा, एक हि रूप सुपर्म॥२८९॥

ॐ ह्रीं सूरिनिर्जराधर्मस्वरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

समय समय गुणश्रेणि का, खिरै कर्म बल ध्यान।
ये सम्बन्ध निवार करि, करै मुक्ति सुख पान॥२९०॥

ॐ ह्रीं सूरिनिर्जरानुबंधाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अतुल शक्ति थिर भाव की, सो प्रगटी तुम माहिं।
यही निर्जरा रूप है, नमूँ भक्ति कर ताहि॥२९१॥

ॐ ह्रीं सूरिनिर्जरास्वरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सर्व कर्म के नाश बिन, लहै न शिव-सुखरास।
निश्चय तुम ही निर्जरा, कियो प्रतीत प्रकाश॥२९२॥

ॐ ह्रीं सूरिनिर्जराप्रतीताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सकल कर्ममल नाशतें, शुद्ध निरंजन रूप।
ज्यों कंचन बिन कालिमा, राजै मोक्ष अनूप॥२९३॥

ॐ ह्रीं सूरिमोक्षाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

द्रव्य-भाव दोनों सु विधि, करैं जगत में वास।
द्वैविध बन्ध उखारिकैं, भये मुक्त सुखरास॥२९४॥

ॐ ह्रीं सूरिबन्धमोक्षाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पर विकलप सुख दुख नहीं, अनुभव निज आनन्द।
जन्म-मरण विधि नाशकर, राजत शिवसुख कंद॥२९५॥

ॐ ह्रीं सूरिमोक्षस्वरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जहाँ न दुख को लेश है, उदय कर्म अनुसार।
सो शिवपद पायो महा, नमूँ भक्ति उर धार॥२९६॥

ॐ ह्रीं सूरिमोक्षगुणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जो शिव सुगुण प्रसिद्ध हैं, तिनसों नित्त प्रबन्ध।
जे जगवास विलास दुख, तिनकूँ नमूँ अबन्ध॥२९७॥

ॐ ह्रीं सूरिमोक्षानुबंधाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जैसी निज तन आकृति, तज कीनो शिववास।
ते तैंसैं नित अचल हैं, ज्ञानानन्द प्रकाश॥२९८॥

ॐ ह्रीं सूरिमोक्षानुप्रकाशाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

क्षयोपशम परिणाम कर, साधन निज का रूप।
वा निजपद में लीनता, ये ही गुप्त-स्वरूप॥२९९॥

ॐ ह्रीं सूरिस्वरूपगुप्तये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

इन्द्रियजनित न दुख जहाँ, सदा निजानन्दरूप।
निर-आकुल स्वाधीनता, वरतै शुद्ध स्वरूप॥३००॥

ॐ ह्रीं सूरिपरमात्म-स्वरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(रोला)

संपूरण श्रुत-सार निजातम बोध लहानो,
निज अनुभव शिवमूल मानु उपदेश करानो।
शिष्यन के अज्ञान हरै ज्यूँ रवि अँधियारा,
पाठक गुण संभवै सिद्ध प्रति नमन हमारा॥३०१॥

ॐ ह्रीं पाठकेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मुक्ति मूल है आत्मज्ञान सोई श्रुत ज्ञानी।
तत्त्व-ज्ञान सों लहै निजातम पद सुखदानी॥शिष्यन०॥

ॐ ह्रीं पाठकमोक्षमण्डनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥३०२॥

भवसागर तें भव्य जीव तारण अनिवारा।
तुम में यह गुण अधिक आप पायो तिस पारा॥शिष्यन०॥

ॐ ह्रीं पाठकगुणेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥३०३॥

दर्शन ज्ञान स्वभाव धरो तद्रूप अनूपी।
हीनाधिक बिन अचल विराजत शुद्ध सरूपी॥शिष्यन०॥

ॐ ह्रीं पाठकगुणस्वरूपेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥३०४॥

निज गुण वा परयाय अखण्डित नित्य धरै है।
तिहुँ काल प्रति अन्य भाव नहीं ग्रहण करै है॥शिष्यन०॥

ॐ ह्रीं पाठकद्रव्याय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥३०५॥

सहभावी गुण सार जहाँ परभाव न लेसा।
अगुरुलघू परणाम वस्तु सद्भाव विशेषा॥शिष्यन०॥

ॐ ह्रीं पाठकगुणपर्यायेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥३०६॥

गुण समुदायी द्रव्य याहितें निरगुण नाहीं।
सो अनन्त गुण सदा विराजत तुम पद माहीं॥शिष्यन०॥

ॐ ह्रीं पाठकगुणद्रव्याय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥३०७॥

सत सरूप सब द्रव्य सधै नीके अबाधकर।
सो तुम सत्य सरूप विराजो द्रव्य भाव धर॥शिष्यन०॥

ॐ ह्रीं पाठकद्रव्यस्वरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥३०८॥

जे जे हैं परनाम बिना परनामी नाहीं।
परनामी परनाम एक ही हैं तुम माहीं॥
शिष्यन के अज्ञान हरैं ज्यूँ रवि अँधियारा।
पाठक गुण संभवै सिद्ध प्रति नमन हमारा॥३०९॥

ॐ ह्रीं पाठकद्रव्यपर्यायाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥

अगुरुलघु पर्याय शुद्ध परनाम बखानी।
निज सरूप में अन्तरगत श्रुतज्ञान प्रमानी॥शिष्यन०॥

ॐ ह्रीं पाठकपर्यायस्वरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥३१०॥

जगतवास सब पापमूल जिय को दुखदाई।
ताको नाशन हेतु कहो शिव मूल उपाई॥शिष्यन०॥

ॐ ह्रीं पाठकमंगलाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥३११॥

जहाँ न दुख को लेश सर्वथा सुख ही जानो।
सोई मंगल गुण तुम में प्रत्यक्ष लखानो॥शिष्यन०॥

ॐ ह्रीं पाठकमंगलगुणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥३१२॥

औरन मंगलकरन आप मंगलमय राजैं।
दर्शन कर सुखसार मिलै सब ही अघ भाजैं॥शिष्यन०॥

ॐ ह्रीं पाठकमंगलगुणस्वरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥३१३॥

आदि अनंत अविरुद्ध शुद्ध मंगलमय मूरति।
निज सरूप में बसै सदा परभाव विदूरित॥शिष्यन०॥

ॐ ह्रीं पाठकद्रव्यमंगलाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥३१४॥

जितनी परणति धरौ सबहि मंगलमय रूपी।
अन्य अवस्थित टार धार तद्रूप अनूपी॥शिष्यन०॥

ॐ ह्रीं पाठकमंगलपर्यायाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥३१५॥

निश्चय वा विवहार सर्वथा मंगलकारी।
जग जीवन के विघन विनाशन सर्व प्रकारी॥शिष्यन०॥

ॐ ह्रीं पाठकद्रव्यपर्यायमंगलाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥३१६॥

भेदाभेद प्रमाण वस्तु सर्वस्व बखानो।
वचन अगोचर कहो तथा निर्दोष कहानो॥
शिष्यन के अज्ञान हरैं ज्यूँ रवि अँधियारा।
पाठक गुण संभवै सिद्ध प्रति नमन हमारा॥३१७॥

ॐ ह्रीं पाठकद्रव्यगुणपर्यायमंगलाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥

सब विशेष प्रतिभासमान मंगलमय भासे।
निर्विकल्प आनन्दरूप अनुभूति प्रकाशे॥शिष्यन०॥

ॐ ह्रीं पाठकस्वरूपमंगलाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥३१८॥

(पायत्ता)

निर्विघ्न निराश्रय होई, लोकोत्तम मंगल सोई।
तुम गुण अनन्त श्रुत गाया, हम सरधत शीश नवाया॥॥३१९॥

ॐ ह्रीं पाठकमंगलोत्तमाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥३१९॥

जगजीवन को हम देखा, तुम ही गुण सार विशेखा॥तुम गुण०॥

ॐ ह्रीं पाठकगुणलोकोत्तमाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥३२०॥

षट्द्रव्य रचित जग सारा, तुम उत्तम रूप निहारा॥तुम गुण०॥

ॐ ह्रीं पाठकद्रव्यलोकोत्तमाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥३२१॥

निज ज्ञान शुद्धता पाई, जिस करि यह है प्रभुताई॥तुम गुण...॥

ॐ ह्रीं पाठकज्ञानाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥३२२॥

जग जीव अपूरण ज्ञानी, तुम ही लोकोत्तम मानी॥तुम गुण...॥

ॐ ह्रीं पाठकज्ञानलोकोत्तमाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥३२३॥

युगपत निरभेद निहारा, तुम दर्शन भेद उघारा॥तुम गुण...॥

ॐ ह्रीं पाठकदर्शनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥३२४॥

हम सोवत हैं नित मोही, निरमोही लखे तुमको ही॥तुम गुण...॥

ॐ ह्रीं पाठकदर्शनलोकोत्तमाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥३२५॥

दृगवंत महासुखकारा, तुम ज्ञान महा अविकारा॥तुम गुण...॥

ॐ ह्रीं पाठकदर्शनस्वरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥३२६॥

निरशंस अनन्त अबाधा, निज बोधन भाव अराधा।
तुम गुण अनन्त श्रुत गाया, हम सरधत शीश नवाया॥

ॐ ह्रीं पाठकसम्यक्त्वाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥३२७॥

सम्यक्त्व महासुखकारी, निज गुणस्वरूप अविकारी॥तुम गुण...॥

ॐ ह्रीं पाठकसम्यक्त्वगुणस्वरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥३२८॥

निरखेद अछेद अभेदा, सुख रूप वीर्य निर्वेदा॥तुम गुण...॥

ॐ ह्रीं पाठकवीर्याय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥३२९॥

निज भोग कलेश न लेशा, यह वीर्य अनन्त प्रदेशा॥तुम गुण...॥

ॐ ह्रीं पाठकवीर्यगुणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥३३०॥

परनाम सुथिर निज माहीं, उपजै न कलेस कदाही॥तुम गुण...॥

ॐ ह्रीं पाठकवीर्यपर्याय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥३३१॥

द्रव्य भाव लहो तुम जैसो, पावै जगजन नहिं ऐसो॥तुम गुण...॥

ॐ ह्रीं पाठकवीर्यद्रव्याय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥३३२॥

निज ज्ञान सुधारस पीवत, आनंद सुभाव सु जीवत॥तुम गुण...॥

ॐ ह्रीं पाठकवीर्यगुणपर्याय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥३३३॥

अविशेष अनन्त सुभावा, तुम दर्शन माहिं लखावा॥तुम गुण...॥

ॐ ह्रीं पाठकदर्शनपर्याय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥३३४॥

इकबार लखे सबही को, तद्रूप निजातम ही को॥तुम गुण...॥

ॐ ह्रीं पाठकदर्शनपर्यायस्वरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥३३५॥

सपरस आदिक गण नाहीं, चिद्रूप निजातम माहीं॥तुम गुण...॥

ॐ ह्रीं पाठकज्ञानद्रव्याय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥३३६॥

शरणागति दीनदयाला, हम पूजत भाव विशाला॥तुम गुण...॥

ॐ ह्रीं पाठकशरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥३३७॥

जिनशरण गही शिव पायो, हम शरण महा गुणगायो॥तुम गुण...॥

ॐ ह्रीं पाठकगुणशरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥३३८॥

अनुभव निज बोध करावै, यह ज्ञान शरण कहलावै।
तुम गुण अनन्त श्रुत गाया, हम सरधत शीश नवाया॥

ॐ ह्रीं पाठकज्ञानगुणशरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥३३९॥

दृग मात्र तथा सरधाना, निश्चय शिववास कराना॥तुम गुण...॥

ॐ ह्रीं पाठकदर्शनशरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥३४०॥

निरभेद स्वरूप अनूपा, है शर्ण तनी शिव भूपा॥तुम गुण...॥

ॐ ह्रीं पाठकदर्शनस्वरूपशरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥३४१॥

निजआत्म-स्वरूप लखाया, इह कारण शिवपद पाया॥तुम गुण...॥

ॐ ह्रीं पाठकसम्यक्त्वशरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥३४२॥

आतम-स्वरूप सरधाना, तुम शरण गहो भगवाना॥तुम गुण...॥

ॐ ह्रीं पाठकसम्यक्त्वस्वरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥३४३॥

निज आतम साधन माहीं, पुरुषारथ छूटै नाहीं॥तुम गुण...॥

ॐ ह्रीं पाठकवीर्यशरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥३४४॥

आतम शकती प्रगटावै, तब निज स्वरूप जिय पावै॥तुम गुण...॥

ॐ ह्रीं पाठकवीर्यस्वरूपशरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥३४५॥

परमातम वीर्य महा है, पर निमित न लेश तहाँ है॥तुम गुण...॥

ॐ ह्रीं पाठकवीर्यपरमात्मशरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥३४६॥

श्रुतद्वादशांग जिनवानी, निश्चय शिववास करानी॥तुम गुण...॥

ॐ ह्रीं पाठकद्वादशांगशरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥३४७॥

दश पूर्व महा जिनवाणी, निश्चय अघहर सुखदानी॥तुम गुण...॥

ॐ ह्रीं पाठकदशपूर्वांगाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥३४८॥

दश चार पूर्व जिनवानी, निश्चय शिववास करानी॥तुम गुण...॥

ॐ ह्रीं पाठकचतुर्दशपूर्वांगाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥३४९॥

निज आत्म चर्ण प्रकटावै, आचार अंग कहलावै॥तुम गुण...॥

ॐ ह्रीं पाठकाचारांगाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥३५०॥

(रेखता)

विविध शंकादि तुम टारी, निरन्तर ज्ञान आचारी।
पूर्ण श्रुतज्ञान फल पाया, नमूँ सत्यार्थ उवझाया॥

ॐ ह्रीं पाठकज्ञानाचाराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥३५१॥

पराश्रित भाव विनशाया, सुथिर निजरूप दर्शाया॥पूर्ण...॥

ॐ ह्रीं पाठकतपसाचाराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥३५२॥

मुक्तपद दैन अनिवारी, सर्व बुध चर्ण आचारी॥पूर्ण...॥

ॐ ह्रीं पाठकरत्नत्रयाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥३५३॥

शुद्ध रत्नत्रय धारी, निजातमरूप अविकारी॥पूर्ण...॥

ॐ ह्रीं पाठकरत्नत्रयसहायाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥३५४॥

ध्रौव्य पंचम-गती पाई, जन्म पुनि मर्ण छुटकाई॥पूर्ण...॥

ॐ ह्रीं पाठकध्रुव-असंसाराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥३५५॥

अनूपम रूप अधिकाई, असाधारण स्वपद पाई॥पूर्ण...॥

ॐ ह्रीं पाठक-एकत्वस्वरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥३५६॥

आन तुम सम न गुण होई, कहो एकत्व गुण सोई॥पूर्ण...॥

ॐ ह्रीं पाठक-एकत्वगुणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥३५७॥

निजानन्द पूर्ण पद पाया, सोई परमात्म कहलाया॥पूर्ण...॥

ॐ ह्रीं पाठक-एकत्वपरमात्मने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥३५८॥

उच्चगत मोक्ष का दाता, एक निजधर्म विख्याता॥पूर्ण...॥

ॐ ह्रीं पाठक-एकत्वधर्माय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥३५९॥

जु तुम चेतनता परकासी, न पावैं ऐसी जगवासी॥पूर्ण...॥

ॐ ह्रीं पाठक-एकत्वचेतनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥३६०॥

ज्ञान दर्शन स्वरूपी हो, असाधारण अनूपी हो॥पूर्ण...॥

ॐ ह्रीं पाठक-एकत्वचेतनस्वरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥३६१॥

गहैं नित निज चतुष्टय को, मिलैं कबहूँ नहीं परसों।
पूर्ण श्रुतज्ञान बल पाया, नमूँ सत्यार्थ उवझाया॥

ॐ ह्रीं पाठक-एकत्वद्रव्याय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥३६२॥

स्वपद अनुभूत सुख रासी, चिदानन्द भाव परकासी॥पूर्ण...॥

ॐ ह्रीं पाठकचिदानन्दाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥३६३॥

अन्त पुरुषार्थ साधक हो, जन्म मरणादि बाधक हो॥पूर्ण...॥

ॐ ह्रीं पाठकसिद्धसाधकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥३६४॥

स्वातम ज्ञान दरशाया, ये पूरण ऋद्धि पद पाया॥पूर्ण...॥

ॐ ह्रीं पाठकऋद्धिपूर्णाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥३६५॥

सकल विधि मूरछा त्यागी, तुम्हीं निरग्रंथ बड़भागी॥पूर्ण...॥

ॐ ह्रीं पाठकनिर्ग्रन्थाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥३६६॥

निजाश्रित अर्थ जानाहीं, अबाधित अर्थ तुम माहीं॥पूर्ण...॥

ॐ ह्रीं पाठकार्थविधानाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥३६७॥

न फिर संसार पद पाया, अपूरब बन्ध बिनसाया॥पूर्ण...॥

ॐ ह्रीं पाठकसंसाराननुबन्धाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥३६८॥

आप कल्याणमय राजो, सकल जगवास दुख त्याजो॥पूर्ण...॥

ॐ ह्रीं पाठककल्याणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥३६९॥

स्वपर हितकार गुणधारी, परम कल्याण अविकारी॥पूर्ण...॥

ॐ ह्रीं पाठककल्याणगुणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥३७०॥

अहित परिहार पद जो है, परम कल्याण तासों है॥पूर्ण...॥

ॐ ह्रीं पाठककल्याणस्वरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥३७१॥

स्वसुख द्रव्याश्रये माहीं, जहाँ कछु पर निमित्त नाहीं॥पूर्ण...॥

ॐ ह्रीं पाठककल्याणद्रव्याय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥३७२॥

जोहै सोहै अमित काला, अन्यथा भाव विधि टाला॥पूर्ण...॥

ॐ ह्रीं पाठकतत्त्वगुणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥३७३॥

रहें नित चेतन माहीं, कहैं चिद्रूप मुनि ताहीं।
पूर्ण श्रुतज्ञान फल पाया, नमूँ सत्यार्थ उवझाया॥

ॐ ह्रीं पाठकचिद्रूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥३७४॥

सर्वथा ज्ञान परिणामी, प्रकट है चेतना नामी॥पूर्ण...॥

ॐ ह्रीं पाठकचेतनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥३७५॥

नहीं अन्यत्व भेदा है, गुणी गुण निर-विछेदा है॥पूर्ण...॥

ॐ ह्रीं पाठकचेतनागुणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥३७६॥

घटाघट वस्तु परकाशी, धरैं हैं जोति प्रतिभाशी॥पूर्ण...॥

ॐ ह्रीं पाठकज्योतिप्रकाशाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥३७७॥

वस्तु सामान्य अवलोका, है युगपत दर्श सिद्धों का॥पूर्ण...॥

ॐ ह्रीं पाठकदर्शनचेतनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥३७८॥

विशेषण युक्त साकारा, ज्ञान दुति में प्रगट सारा॥पूर्ण...॥

ॐ ह्रीं पाठकज्ञानचेतनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥३७९॥

ज्ञानसों जीव नामी है, भेद समवाय स्वामी है॥पूर्ण...॥

ॐ ह्रीं पाठकजीवचिदानन्दाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥३८०॥

चराचर वस्तु स्वाधीना, समय एकहि में लख लीना॥पूर्ण...॥

ॐ ह्रीं पाठकवीर्यचेतनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥३८१॥

सकल जीवों के सुख कारन, शरण तुमही हो अनिवारन॥पूर्ण...॥

ॐ ह्रीं पाठकसकलशरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥३८२॥

तुम हो त्रयलोक हितकारी, अद्वितीय शर्ण बलिहारी॥पूर्ण...॥

ॐ ह्रीं पाठकत्रैलोक्यशरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥३८३॥

तुम्हारी शर्ण तिहुँ काला, करन जग जीव प्रतिपाला॥पूर्ण...॥

ॐ ह्रीं पाठकत्रिकालशरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥३८४॥

शरण अनिवार सुखदाई, प्रगट सिद्धान्त में गाई॥पूर्ण...॥

ॐ ह्रीं पाठकत्रिमंगलशरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥३८५॥

लोक में धर्म विख्याता, सो तुमही में सुखसाता।
पूर्ण श्रुतज्ञान बल पाया, नमूँ सत्यार्थ उवझाया॥

ॐ ह्रीं पाठकलोकशरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥३८६॥

जोग बिन आस्रवै नाहीं, भये निर आस्रवा ताही॥पूर्ण...॥

ॐ ह्रीं पाठकास्रवावेदाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥३८७॥

आस्रव कर्म का होना, कार्य था अपना खोना॥पूर्ण...॥

ॐ ह्रीं पाठकास्रवविनाशाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥३८८॥

तत्त्व निर्बाध उपदेशा, विनाशे कर्म परवेशा॥पूर्ण...॥

ॐ ह्रीं पाठक-आस्रवोपदेशछेदकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥३८९॥

प्रकृति सब कर्म की चूरी, भाव मल नाश दुख पूरी॥पूर्ण...॥

ॐ ह्रीं पाठकबंध-अन्तकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥३९०॥

न फिर संसार अवतारा, बन्ध-विधि सन्त कर डारा॥पूर्ण...॥

ॐ ह्रीं पाठकबंधमुक्ताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥३९१॥

आस्रव कर्म दुखदाई, रुके संवर ये सुखदाई॥पूर्ण...॥

ॐ ह्रीं पाठकसंवराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥३९२॥

सर्वथा जोग विनसाया, स्व-संवररूप दरशाया॥पूर्ण...॥

ॐ ह्रीं पाठकसंवरस्वरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥३९३॥

कलुषता भाव में नाहीं, भये संवर करण ताहीं॥पूर्ण...॥

ॐ ह्रीं पाठकसंवरकरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥३९४॥

कुपरणति राग-रुष नाशन, निरजरा रूप प्रतिभासन॥पूर्ण...॥

ॐ ह्रीं पाठकनिर्जरास्वरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥३९५॥

कामदेव दाह जग सारा, आप तिस भस्म कर डारा॥पूर्ण...॥

ॐ ह्रीं पाठककंदर्पच्छेदकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥३९६॥

चहुँ विधि बंध विधि चूरा, ये विस्फोटक कहो पूरा॥पूर्ण...॥

ॐ ह्रीं पाठककर्मविस्फोटकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥३९७॥

दऊ विधि कर्म का खोना, सोई है मोक्ष का होना।
पूर्ण श्रुतज्ञान बल पाया, नमूँ सत्यार्थ उवझाया॥

ॐ ह्रीं पाठकमोक्षाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥३९८॥

द्रव्य अर भाव मल टारा, नमूँ शिवरूप सुखकारा॥पूर्ण...॥

ॐ ह्रीं पाठकमोक्षस्वरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥३९९॥

अरति-रति पर-निमित खोई, आत्म-रति है प्रगट सोई॥पूर्ण...॥

ॐ ह्रीं पाठक-आत्मरतये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥४००॥

(लोलतरंग तथा बड़ी चौपाई)

अठाईस मूल सदा गुण धारी, सो सब साधु वरें शिवनारी।
साधु भये शिव साधनहारे, सो तुम साधु हरो अघ म्हारे॥

ॐ ह्रीं सर्वसाधुभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥४०१॥

मूल तथा सब उत्तर गाये, ये गुण पालत साधु कहाये॥साधु भये...॥

ॐ ह्रीं सर्वसाधुगुणेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥४०२॥

साधुन के गुण साधुहि जाने, होत गुणी गुणही परमाने॥साधु भये...॥

ॐ ह्रीं सर्वसाधुगुणस्वरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥४०३॥

नेम थकी विश्वास करे जो, द्रव्य थकी शिवरूप करै जो॥साधु भये...॥

ॐ ह्रीं सर्वसाधुद्रव्याय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥४०४॥

जीव सदा चित भाव विलासी, आपही आप सधै शिवराशी॥साधु भये...॥

ॐ ह्रीं सर्वसाधुगुणद्रव्याय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥४०५॥

ज्ञानमई निज ज्योति प्रकाशी, भेद विशेष सबै प्रतिभासी॥साधु भये...॥

ॐ ह्रीं साधुज्ञानाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥४०६॥

एकहि बार लखाय अभेदा, दर्शन को सब रोग विछेदा॥साधु भये...॥

ॐ ह्रीं साधुदर्शनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥४०७॥

आपहि साधन साध्य तुमहीं हो, एक अनेक अबाध तुम्हीं हो॥साधु भये...॥

ॐ ह्रीं साधुद्रव्यभावाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥४०८॥

चेतनता निजभाव न छारे, रूप स्पर्शन आदि न धारैं।
साधु भये शिव साधन हारे, सो तुम साधु हरो अघ म्हारे॥

ॐ ह्रीं साधुद्रव्यस्वरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥४०९॥

जो उतपाद भये इकबारा, सो निरबाध रहै अविकारा॥साधु भये...॥

ॐ ह्रीं साधुवीर्याय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥४१०॥

है परनाम अभिन्न प्रणामी, सो तुम साधु भये शिवगामी॥साधु भये...॥

ॐ ह्रीं साधुद्रव्यगुणपर्यायाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥४११॥

जो गुण वा परियाय धरो हो, सो निज माहिं अभिन्न वरो हो॥साधु भये...॥

ॐ ह्रीं साधुद्रव्यगुणपर्यायाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥४१२॥

मंगलमय तुम नाम कहावै, लेतहि नाम सु पाप नसावै॥साधु भये...॥

ॐ ह्रीं साधुमंगलाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥४१३॥

मंगल रूप अनूपम सौहै, ध्यान किये नित आनन्द होहै॥साधु भये...॥

ॐ ह्रीं साधुमंगलस्वरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥४१४॥

पाप मिटै तुम शरण गहेतें, मंगल शरण कहाय लहैतें॥साधु भये...॥

ॐ ह्रीं साधुमंगलशरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥४१५॥

देखत ही सब पाप नसे हैं, आनन्द मंगलरूप लसे हैं॥साधु भये...॥

ॐ ह्रीं साधुमंगलदर्शनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥४१६॥

जानत हैं तुमको मुनि नीके, पाप कलाप मिटै तिनही के॥साधु भये...॥

ॐ ह्रीं साधुमंगलज्ञानाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥४१७॥

ज्ञानमई तुम हो गुणरासा, मंगल ज्योति धरो रविकासा॥साधु भये...॥

ॐ ह्रीं साधुज्ञानगुणमंगलाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥४१८॥

मंगल वीर्य तुम्हीं दर्शाया, काल अनन्त न पाप लगाया॥साधु भये...॥

ॐ ह्रीं साधुवीर्यमंगलाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥४१९॥

वीर्य महा सुखरूप निहारा, पाप बिना नित ही अविकारा॥साधु भये...॥

ॐ ह्रीं साधुवीर्यमंगलस्वरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥४२०॥

मंगल वीर्य महा गुणधामी, निज पुरुषार्थहिं मोक्ष लहामी।
साधु भये शिव साधन हारे, सो तुम साधु हरो अघ म्हारे॥

ॐ ह्रीं साधुवीर्यपरममंगलाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥४२१॥

वीर्य स्वभाविक पूर्ण तिहारा, कर्म नशाय भये भवपारा॥साधु भये...॥

ॐ ह्रीं साधुवीर्यद्रव्याय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥४२२॥

तीन हि लोक लखे सब जोई, आप समान न उत्तम कोई॥साधु भये...॥

ॐ ह्रीं साधुलोकोत्तमाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥४२३॥

लोक सभी विधि बन्धन माहीं, तुम सम रूप धरे ते नाहीं॥साधु भये...॥

ॐ ह्रीं साधुलोकोत्तमगुणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥४२४॥

लोकन के गुण पाप कलेशा, उत्तम रूप नहीं तुम जैसा॥साधु भये...॥

ॐ ह्रीं साधुलोकोत्तमगुणस्वरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥४२५॥

लोक-अलोक निहारक नामी, उत्तम द्रव्य तुम्हीं अभिरामी॥साधु भये...॥

ॐ ह्रीं साधुलोकोत्तमद्रव्याय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥४२६॥

लोक सभी षट्द्रव्य रचाया, उत्तम द्रव्य तुम्हीं हम पाया॥साधु भये...॥

ॐ ह्रीं साधुलोकोत्तमद्रव्यस्वरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥४२७॥

ज्ञानमई चित उत्तम सोहै, ऐसो लोक विषै अरु को है॥साधु भये...॥

ॐ ह्रीं साधुलोकोत्तमज्ञानाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥४२८॥

ज्ञान स्वरूप सुभाव तिहारा, उत्तम लोक कहै इम सारा॥साधु भये...॥

ॐ ह्रीं साधुलोकोत्तमज्ञानस्वरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥४२९॥

देखन में कछु आड़ न आवै, लोग तनी सब उत्तम गावै॥साधु भये...॥

ॐ ह्रीं साधुलोकोत्तमदर्शनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥४३०॥

देखन जानन भाव धरो हो, उत्तम लोक के हेतु गहै हो॥साधु भये...॥

ॐ ह्रीं साधुलोकोत्तमज्ञानदर्शनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥४३१॥

जाकर लोकशिखर पद धारा, उत्तम धर्म कहो जग सारा॥साधु भये...॥

ॐ ह्रीं साधुलोकोत्तमधर्माय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥४३२॥

धर्म स्वरूप निजातम माँही, उत्तम लोक विषै ठहराई।
साधु भये शिव साधन हारे, सो तुम साधु हरो अघ म्हारे॥

ॐ ह्रीं साधुलोकोत्तमधर्मस्वरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥४३३॥

अन्य सहाय न चाहत जाको, उत्तम लोक कहै बल ताको॥साधु भये...॥

ॐ ह्रीं साधुलोकोत्तमवीर्याय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥४३४॥

उत्तम वीर्य सरूप निहारा, साधन मोक्ष कियो अनिवारा॥साधु भये...॥

ॐ ह्रीं साधुलोकोत्तमवीर्यस्वरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥४३५॥

पूरण आत्मकला परकाशी, लोक विषै अतिशय अविनाशी॥साधु भये...॥

ॐ ह्रीं साधुलोकोत्तमातिशयाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥४३६॥

राग-विरोध न चेतन माँही, ब्रह्म कहो जग उत्तम ताही॥साधु भये...॥

ॐ ह्रीं साधुलोकोत्तमब्रह्मज्ञानाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥४३७॥

ज्ञान-स्वरूप अकम्प अडोला, पूरण ब्रह्म प्रकाश अटोला॥साधु भये...॥

ॐ ह्रीं साधुलोकोत्तमब्रह्मज्ञानस्वरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥४३८॥

राग विरोध जयो शिवगामी, आत्म अनातम अन्तरजामी॥साधु भये...॥

ॐ ह्रीं साधुलोकोत्तमजिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥४३९॥

भेद बिना गुण-भेद धरो हो, सांख्य कुवादिक पक्ष हरो हो॥साधु भये...॥

ॐ ह्रीं साधुलोकोत्तमगुणसम्पन्नाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥४४०॥

साधत आतम पुरुष सखाई, उत्तम पुरुष कहो जग ताई॥साधु भये...॥

ॐ ह्रीं साधुलोकोत्तमपुरुषाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥४४१॥

साधु समान न दीनदयाला, शरण गहै सुख होत विशाला॥साधु भये...॥

ॐ ह्रीं साधुलोकोत्तमशरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥४४२॥

जे जन साधु शरण गही है, ते शिव आनन्द लब्धि लही है॥साधु भये...॥

ॐ ह्रीं साधुलोकोत्तमगुणशरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥४४३॥

साधुन के गुण द्रव्य चितारे, होत महासुख शरण उभारे॥साधु भये...॥

ॐ ह्रीं साधुगुणद्रव्यशरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥४४४॥

(लावनी)

तुम चितवत वा अवलोकत वा सरधानी,
इम शरण गहै पावै निश्चय शिवरानी।
निजरूप मगन मन ध्यान धरै मुनिराजै,
मैं नमूँ साधु सम सिद्ध अकंप बिराजै॥४४५॥

ॐ ह्रीं साधुदर्शनशरणाय नमोऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥४४५॥

तुम अनुभव करि शुद्धोपयोग मन धारा।
यह ज्ञान शरण पायो निश्चै अविकारा॥निजरूप...॥

ॐ ह्रीं साधुज्ञानशरणाय नमोऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥४४६॥

निज आत्मरूप में दृढ़ सरधा तुम पाई।
थिर रूप सदा निवसों शिववास कराई॥निजरूप...॥

ॐ ह्रीं साधु-आत्मशरणाय नमोऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥४४७॥

तुम निराकार निरभेद अछेद अनूपा।
तुम निरावरण निरद्वंद स्वदर्श स्वरूपा॥निजरूप...॥

ॐ ह्रीं साधुदर्शस्वरूपाय नमोऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥४४८॥

तुम परम पूज्य परमेश परमपद पाया।
हम शरण गही पूजैं नित मनवचनकाया॥निजरूप...॥

ॐ ह्रीं साधुपरमात्मशरणाय नमोऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥४४९॥

तुम मन इन्द्री व्यापार जीत सु अभीता।
हम शरण गही मनु आज कर्मरिपु जीता॥निजरूप...॥

ॐ ह्रीं साधुनिजात्मशरणाय नमोऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥४५०॥

भववास दुखी जे शरण गहैं तुम मन में।
तिनको अवलम्ब उभारो भयहर छिन में॥निजरूप...॥

ॐ ह्रीं साधुवीर्यशरणाय नमोऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥४५१॥

दृग बोध अनन्तानन्त धरो निरखेदा।
तुम बल अपार शरणागति विघनविछेदा॥निजरूप...॥

ॐ ह्रीं साधुवीर्यात्मशरणाय नमोऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥४५२॥

निज ज्ञानानन्दी महा लक्षिमी सोहै।
सुर असुरन में नित परम मुनी मन मोहै।
निजरूप मगन मन ध्यान धरै मुनिराजै।
मैं नमूँ साधु सम सिद्ध अकंप बिराजै।।।४५३।।

ॐ ह्रीं साधुलक्ष्मीअलंकृताय नमोऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।४५३।।

भववास महा दुखरास ताहि विनशाया।
अति क्षीन लीन स्वाधीन महासुख पाया।।निजरूप...।।

ॐ ह्रीं साधुलक्ष्मीप्रणीताय नमोऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।४५४।।

त्रिभुवन का ईश्वरपना तुम्हीं में पाया।
त्रिभुवन के पातिक हरौ मनू रवि-छाया।।निजरूप...।।

ॐ ह्रीं साधुलक्ष्मीरूपाय नमोऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।४५५।।

तुम काल अनंतानंत अबाध विराजो।
परनिमित्त विकार निवार सु नित्य सु छाजो।।निजरूप...।।

ॐ ह्रीं साधुध्रुवाय नमोऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।४५६।।

तुम छायकलब्धि प्रभाव परम गुणधारी।
निवसौ निज-आनंद माँहि अचल अविकारी।।निजरूप...।।

ॐ ह्रीं साधुगुणध्रुवाय नमोऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।४५७।।

तेरम चौदस गुणथान द्रव्य है जैसो।
रहै काल अनन्तानन्त शुद्धता तैसो।।निजरूप...।।

ॐ ह्रीं साधुद्रव्यगुणध्रुवाय नमोऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।४५८।।

फिर जन्म-मरण नहीं होय जन्म वो पाया।
संसार-विलक्षण निज अपूर्व पद पाया।।निजरूप...।।

ॐ ह्रीं साधुद्रव्योत्पादाय नमोऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।४५९।।

सूक्षम अलब्धि पर्याप्त निगोद शरीरा।
ते तुच्छ द्रव्य कर नाश भये भवतीरा।।निजरूप...।।

ॐ ह्रीं साधुद्रव्यापिने नमोऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।४६०।।

रागादि परिग्रह टारि तत्त्व सरधानी।
इम साधु जीव निज साधत शिवसुखदानी॥
निजरूप मगन मन ध्यान धरै मुनिराजै।
मैं नमूँ साधु सम सिद्ध अकंप बिराजै॥४६१॥
ॐ ह्रीं साधुजीवाय नमोऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥४६१॥

स्वसंवेदन विज्ञान परम अमलाना
तज इष्ट-अनिष्ट विकल्प जाल दुखसाना॥निजरूप...॥
ॐ ह्रीं साधुजीवगुणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥४६२॥

देखन जानन चेतन सु रूप अविकारी।
गुण-गुणी भेद में अन्य भेद व्यभिचारी॥निजरूप...॥
ॐ ह्रीं साधुचेतनगुणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥४६३॥

चेतन की परिणति रहै सदा चित माहीं।
ज्यों सिंधु लहर ही सिंधु और कछु नाहीं॥निजरूप...॥
ॐ ह्रीं साधुचेतनस्वरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥४६४॥

चेतनविलास सुखरास नित्य परकाशी।
सो साधु दिगम्बर साधु भये अविनाशी॥निजरूप...॥
ॐ ह्रीं साधुचेतनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥४६५॥

तुम असाधारण अरु परमात्मप्रकाशी।
नहीं अन्य जीव यह लहै गहै भववासी॥निजरूप...॥
ॐ ह्रीं साधुपरमात्मप्रकाशाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥४६६॥

तुम मोह तिमिर बिन स्वयं सूर्य परकाशी।
गुणद्रव्यपर्य सब भिन्न-भिन्न प्रतिभासी॥निजरूप...॥
ॐ ह्रीं साधुज्योतिस्वरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥४६७॥

ज्यों घटपटादि दीपक की ज्योति दिखावै।
त्यों ज्ञानज्योति सब भिन्न-भिन्न दरशावै॥निजरूप...॥
ॐ ह्रीं साधुज्योतिप्रदीपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥४६८॥

सामान्यरूप अवलोकन युगपत सारा।
तुम दर्शन ज्योति प्रदीप हरै अंधियारा॥निजरूप...॥
ॐ ह्रीं साधुदर्शनज्योतिप्रदीपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥४६९॥

साकार रूप सु विशेष ज्ञानद्युति माहीं।
युगपत कर प्रतिबिंबित वस्तु प्रगटाई॥
निजरूप मगन मन ध्यान धरै मुनिराजै।
मैं नमूँ साधु सम सिद्ध अकंप बिराजै॥४७०॥

ॐ ह्रीं साधुज्ञानज्योतिप्रदीपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥४७०॥

ये अर्थजन्य कहैं ज्ञान वो झूठे वादी।
है स्वपर-प्रकाशक आतम-ज्योति अनादी॥निजरूप...॥

ॐ ह्रीं साधु-आत्मज्योतिषे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥४७१॥

है तारणतरण जहाजाश्रित भवसागर।
हम शरण गही पावैं शिववास उजागर॥निजरूप...॥

ॐ ह्रीं साधुशरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥४७२॥

सामान्यरूप सब साधु मुक्ति-मग साधैं।
हम पावैं निजपद नेमरूप आराधैं॥निजरूप...॥

ॐ ह्रीं साधुसर्वशरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥४७३॥

त्रसनाडी ही में तत्त्वज्ञान सरधानी।
ताकर साधै निश्चय पावै शिवरानी॥निजरूप...॥

ॐ ह्रीं साधुलोकशरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥४७४॥

तिहुँलोक करन हित वरते नित उपदेशा।
हम शरण गही मेटो भववास कलेशा॥निजरूप...॥

ॐ ह्रीं साधुत्रिलोकशरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥४७५॥

संसार विषम दुखकार असार अपारा।
तिस छेदक वेदक सुखदायक हितकारा॥निजरूप...॥

ॐ ह्रीं साधुसंसारछेदकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥४७६॥

यद्यपि इक क्षेत्र अवगाह अभिन्न विराजैं।
यद्यपि निज सत्ता माहिं भिन्नता साजैं॥निजरूप...॥

ॐ ह्रीं साधु-एकत्वाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥४७७॥

यद्यपि सामान्य-सरूप सु पूरणज्ञानी।
तद्यपि निज आश्रयभाव भिन्न परनामी॥निजरूप...॥

ॐ ह्रीं साधु-एकत्वगुणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥४७८॥

है असाधारण एकत्वद्रव्य तुम माहीं।
तुम सम संसार मंझार और कोउ नाहीं॥
निजरूप मगन मन ध्यान धरै मुनिराजै।
मैं नमूँ साधु सम सिद्ध अकंप बिराजै॥४७९॥
ॐ ह्रीं साधु-एकत्वद्रव्याय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥४७९॥
यद्यपि सब ही हो असंख्यात परदेशी।
तद्यपि निज में निजरूप स्वद्रव्य सुदेशी॥निजरूप...॥
ॐ ह्रीं साधु-एकत्वस्वरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥४८०।
सामान्यरूप सब ब्रह्म कहा वैज्ञानी।
तिनमें तुम वृषभ सु परमब्रह्म परणामी॥निजरूप...॥
ॐ ह्रीं साधुपरब्रह्मणे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥४८१॥
सापेक्ष एक ही कहे सु नय विस्तारा।
तुम भाव प्रकटकर कहै सुनिश्चैकारा॥निजरूप...॥
ॐ ह्रीं साधुपरमस्याद्वादाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥४८२॥
है ज्ञाननिमित यह वचन जाल परमाणा।
है वाचक-वाच्य संयोग ब्रह्म कहलाना॥निजरूप...॥
ॐ ह्रीं साधुशुद्धब्रह्ममणे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥४८३॥
षट्द्रव्य निरूपण करै सोई आगम हो।
तिसके तुम मूलनिधान सु परमागम हो॥निजरूप...॥
ॐ ह्रीं साधुपरमागमाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥४८४॥
तीर्थेश कहैं सर्वज्ञ दिव्य धुनि माहीं।
तुम गुण अपार इम कहो जिनागम ताही॥निजरूप...॥
ॐ ह्रीं साधुजिनागमाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥४८५॥
तुम नाम प्रसिद्ध अनेक अर्थ का वाची।
ताके प्रबोध सों हो प्रतीत मन साँची॥निजरूप...॥
ॐ ह्रीं साधु-अनेकार्थाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥४८६॥
लोभादिक मेटे बिन न शौचता होई।
है वृथा तीर्थ-स्नान करो भी कोई॥निजरूप...॥
ॐ ह्रीं साधुशौचाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥४८७॥

है मिथ्या मोह प्रबल मल इनका खोना।
सो शुद्धशौच गुण यही, न तन का धोना॥
निजरूप मगन मन ध्यान धरै मुनिराजै।
मैं नमूँ साधु सम सिद्ध अकंप बिराजै॥४८८॥
ॐ ह्रीं साधुशुचित्वगुणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥४८८॥
इकदेश कर्ममल नाशि पवित्र कहायो।
तुम सर्व कर्ममल नाशि परमपद पायो॥निजरूप...॥
ॐ ह्रीं साधुपवित्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥४८९॥
तुम रहो बंधसों दूरि एकांत सुखाई।
ज्यों नभ अलिप्त सब द्रव्य रहो तिस माहीं॥निजरूप...॥
ॐ ह्रीं साधुविमुक्ताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥४९०॥
सब द्रव्य-भाव-नोकर्म बंध छुटकाया।
तुम शुद्ध निरंजन निजसरूप थिर पाया॥निजरूप...॥
ॐ ह्रीं साधुबन्धमुक्ताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥४९१॥

(अडिल्ल)

भावास्रव बिन अतिशय सहित अबंध हो।
मेघपटल बिन ज्यों रविकिरण अमंद हो॥
मोक्षमार्ग वा मोक्ष श्रेय सब साधु हैं।
नमत निरंतर हम हूँ कर्म रिपुको दहैं॥टेक॥
ॐ ह्रीं साधुबन्धप्रतिबन्धकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥४९२॥
निज स्वरूप में लीन परम संवर करैं।
यह कारण अनिवार कर्म आवन हरैं॥मोक्षमार्ग...॥
ॐ ह्रीं साधुसंवरकारणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥४९३॥
पुद्‌गलीक परिणाम आठ विधि कर्म है।
तिनकी करत निरजरा शुद्धसु पर्म है॥मोक्षमार्ग...॥
ॐ ह्रीं साधुनिर्जराद्रव्याय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥४९४॥
पर्म शुद्ध उपयोग रूप वरते जहाँ।
छिनमें नन्तानन्त कर्म खिर है तहाँ॥मोक्षमार्ग...॥
ॐ ह्रीं साधुनिर्जरानिमित्ताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥४९५॥

सकल विभाव अभाव निर्जरा करता है।
ज्यों रवि तेज प्रचंड सकल तम हरत है॥
मोक्षमार्ग वा मोक्ष श्रेय सब साधु हैं।
नमत निरंतर हम हूँ कर्म रिपुको दहैं॥४९६॥

ॐ ह्रीं साधुनिर्जरागुणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥४९६॥

जे संसार निमित्त ते सब दुख रूप हैं।
तुम निमित्त शिव कारण शुद्ध अनूप हैं॥मोक्षमार्ग...॥

ॐ ह्रीं साधुनिमित्तमुक्ताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥४९७॥

संशयरहित सुनिश्चै सम्मतिदाय हो।
मिथ्या-भ्रम-तमनाशन सहज उपाय हो॥मोक्षमार्ग...॥

ॐ ह्रीं साधुबोधधर्माय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥४९८॥

अति विशुद्ध निजज्ञान स्वभाव सु धरत हो।
भव्यन के संशय आदिक तम हरत हो॥मोक्षमार्ग...॥

ॐ ह्रीं साधुबोधगुणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥४९९॥

अविनाशी अविकार परम शिवधाम हो।
पायो सो तुम सुगत महा अभिराम हो॥मोक्षमार्ग...॥

ॐ ह्रीं साधुसुगतिभावाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥५००॥

जासो परे न और जन्म वा मरण है।
सो उत्तम उत्कृष्ट परम गति को लहै॥मोक्षमार्ग...॥

ॐ ह्रीं साधुकरमगतिभावाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥५०१॥

पर निमित्त रागादिक जो परनाम हैं।
इन विभाव सों रहित साधु शुभ नाम हैं॥मोक्षमार्ग...॥

ॐ ह्रीं साधुविभावरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥५०२॥

निजसुभाव सामर्थ सु प्रभुता पाइयो।
इन्द्र-फनेन्द्र-नरेन्द्र शीश निज नाइयो॥मोक्षमार्ग...॥

ॐ ह्रीं साधुस्वभावसहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥५०३॥

कर्मबंध सों रहित सोई शिवरूप हैं।
निवसे सदा अबंध स्वशुद्ध अनूप हैं।
मोक्षमार्ग वा मोक्ष श्रेय सब साधु हैं।
नमत निरंतर हम हूँ कर्म रिपुको दहैं॥५०४॥

ॐ ह्रीं साधुमोक्षस्वरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥५०४॥

सकल द्रव्य पर्याय विषैं स्वज्ञान हो।
सत्यारथ निश्चल निश्चै परमाण हो॥मोक्षमार्ग...॥

ॐ ह्रीं साधुपरमानन्दाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥५०५॥

तीन लोक के पूज्य यतीजन ध्यावहीं।
कर्म-शत्रु को जीत 'अर्हं' पद पावहीं॥मोक्षमार्ग...॥

ॐ ह्रीं साधु-अर्हत्स्वरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥५०६॥

परम इष्ट शिव साधत सिद्ध कहाइयो।
तीन लोक परमेष्ट परमपद पाइयो॥मोक्षमार्ग...॥

ॐ ह्रीं साधुसिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥५०७॥

शिव-मारग प्रकटावन कारण हो तुम्हीं।
भविजन पतित उधारन तारन हो तुम्हीं॥मोक्षमार्ग...॥

ॐ ह्रीं साधुसूप्रिकाशिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥५०८॥

स्वपर सुहित करि परम बुद्धि भरतार हो।
ध्यान धरत आनंद-बोध दातार हो॥मोक्षमार्ग...॥

ॐ ह्रीं साधु-उपाध्यायाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥५०९॥

पंच परम गुरु प्रकट तुम्हारो नाम है।
भेदाभेद सुभाव सु आतमराम है॥मोक्षमार्ग...॥

ॐ ह्रीं साधु-अर्हतसिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुभ्यो नमः अर्घ्यं० ॥५१०॥

लोकालोक सु व्यापक ज्ञानसुभावतें।
तद्यपि निजपद लीन विहीनविभावतें॥मोक्षमार्ग...॥

ॐ ह्रीं साधु-आत्मरतये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥५११॥

रतनत्रय निज भाव विशेष अनंत हैं।
पंच परमगुरु भये नमें नित संत हैं॥
मोक्षमार्ग वा मोक्ष श्रेय सब साधु हैं।
नमत निरंतर हम हूँ कर्म रिपुको दहैं॥५१२॥

ॐ ह्रीं साधु-अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुरत्नत्रयात्मकानंतगुणेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥५१२॥

पंच परम गुरु नाम विशेषण को धरैं।
तीन लोक में मंगलमय आनन्द करैं॥
पूरणकर थुतिनाम अन्त सुख कारणं।
पूजूँ हूँ युत भाव सु अर्घ उतारणं॥

ॐ ह्रीं अर्हं द्वादशाधिकपंचशतगुणयुतसिद्धेभ्यो नमः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अथ जयमाला

रत्नत्रय भूषित महा, पंच सुगुरु शिवकार।
सकल सुरेन्द्र नमें नमूँ, पाऊँ सो गुणसार॥१॥

(पद्धड़ी)

जय महा मोहदल दलन सूर, जय निर्विकल्प आनन्दपूर।
जय द्वैविधि कर्म विमुक्त देव, जय निजानन्द स्वाधीन एव॥१॥

जय संशयादि भ्रममत निवार, जय स्वामिभक्ति द्युतिथुति अपार।
जय युगपत सकल प्रत्यक्ष लक्ष, जय निरावरण निर्मल अनक्ष॥२॥

जय जय जय सुखसागर अगाध, निरद्वन्द निरामय निर-उपाधि।
जय मनवचतन व्यापार नाश, जय थिरसरूप निज पद प्रकाश॥३॥

जय पर-निमित्त सुख-दुख निवार, निरलेप निराश्रय निर्विकार।
निज में परको पर में न आप, परवेश न हो नित निर-मिलाप॥४॥

तुम परम धरम आराध्य सार, निज सम करि कारण दुर्निवार।
तुम पंच परम आचार युक्त, नित भक्त वर्ग दातार मुक्त॥५॥

एकादशांग सर्वांग पूर्व, स्वैअनुभव पायो फल अपूर्व।
अन्तर-बाहिर परिग्रह नसाय, परमारथ साधु पद लहाय॥६॥

हम पूजत निज उर भक्ति ठान, पावें निश्चय शिवपद महान।
ज्यों शशि किरणावलि सियर पाय, मणि चन्द्रकांति द्रवता लहाय॥७॥

(घृता)

जय भव-भयहारं, बन्धबिडारं, सुखसारं शिवकरतारं।
नित 'सन्त' सु ध्यावत, पाप नसावत, पावत पद निज अविकारं॥

ॐ ह्रीं द्वादशाधिकपंचशतदलोपरिस्थितसिद्धेभ्यो नमः पूर्णार्घ्यं...।

(सोरठा)

तुम गुण अमल अपार, अनुभवतें भव-भय नशै।
"सन्त" सदा चित धार, शांति करो भवतप हरो॥

इत्याशीर्वादः

(यहाँ १०८ बार "ॐ ह्रीं अर्हं अ सि आ उ सा नमः" मंत्र का जाप करना चाहिये।)

अष्टम पूजा

(एक हजार चौबीस गुण सहित)

(छप्पय)

ऊरध अधो सुरेफ सबिंदु हकार विराजै,
अकारादि स्वरलिप्त कर्णिका अन्त सु छाजै।
वर्गनिपूरित वसुदल अम्बुज तत्त्व संधिधर,
अग्रभाग में मंत्र अनाहत सोहत अतिवर॥
पुनि अंत ह्रीं बेढ्यो परम, सुर ध्यावत अरि नाग को।
ह्वै केहरि सम पूजन निमित, सिद्धचक्र मंगल करो॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्रीसिद्धपरमेष्ठिन् ! चतुर्विंशत्यधिकैकसहस्र-गुणसहितविराजमान अत्रावतरावतर संवौषट् आह्वाननम्। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम्। (पुष्पांजलिं क्षिपेत्)

(दोहा)

सूक्ष्मादिक गुण सहित हैं, कर्म रहित नीरोग।
सिद्धचक्र सो थापहूँ, मिटै उपद्रव योग॥

(इति यंत्रस्थापनार्थं पुष्पांजलिं क्षिपेत्)

अथाष्टकं

(गीता)

निज आत्मरूप सु तीर्थ मग नित, सरस आनन्दधार हो।
नाशे त्रिविधि मल सकल दुखमय, भव जलधि के पार हो॥
यातैं उचित ही है जु तुम पद, नीरसों पूजा करूँ।
इक सहस अरु चौबीस गुण गण भावयुत मन में धरूँ॥

ॐ ह्रीं चतुर्विंशत्यधिकैकसहस्रगुणसंयुक्ताय श्रीसिद्धपरमेष्ठिने जन्मजरा-मृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ॥१॥

शीतल सुरूप सुगन्ध चन्दन, एक भव तप नासही।
सो भव्य मधुकर प्रिय सु यह, नहिं और ठौर सु बास ही॥

यातैं उचित ही है जु तुम पद, मलयसों पूजा करूँ।
इक सहस अरु चौबीस गुण गण भावयुत मन में धरूँ॥

ॐ ह्रीं चतुर्विंशत्यधिकैकसहस्रगुणसंयुक्ताय श्रीसिद्धपरमेष्ठिने संसारताप-विनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा ॥२॥

अक्षय अबाधित आदि-अन्त, समान स्वच्छ सुभाव हो।
ज्यों तुम बिना तंदुल दिपै त्यूँ, निखिल अमल अभाव हो॥
यातैं उचित ही है जु तुम पद, अक्षतं पूजा करूँ॥इक सहस.॥

ॐ ह्रीं चतुर्विंशत्यधिकैकसहस्रगुणसंयुक्ताय श्रीसिद्धपरमेष्ठिने अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा ॥३॥

गुण पुष्पमाल विशाल तुम, भवि कंठ पहिरैं भावसों।
जिनके मधुपमन रसिक लुब्धित, रमत नित-प्रति चावसों॥
यातैं उचित ही है जु तुम पद, पुष्पसों पूजा करूँ॥इक सहस.॥

ॐ ह्रीं चतुर्विंशत्यधिकैकसहस्रगुणसंयुक्ताय श्रीसिद्धपरमेष्ठिने कामबाण-विनाशनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ॥४॥

शुद्धात्म सरस सुपाक, मधुर, समान और न रस कहीं।
ताके हो आस्वादी सु, तुम सम और संतुष्टित नहीं॥
यातैं उचित ही है जु तुम पद, चरुनसों पूजा करूँ॥इक सहस.॥

ॐ ह्रीं चतुर्विंशत्यधिकैकसहस्रगुणसंयुक्ताय श्रीसिद्धपरमेष्ठिने क्षुधारोग-विनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥५॥

स्वपर प्रकाश स्वभावधर ज्यूँ, निज-स्वरूप संभारते।
त्यूँ ही त्रिकाल अनंत द्रव, पर्याय प्रकट निहारते॥
यातैं उचित ही है जु तुम पद, दीपसों पूजा करूँ॥इक सहस.॥

ॐ ह्रीं चतुर्विंशत्यधिकैकसहस्रगुणसंयुक्ताय श्रीसिद्धपरमेष्ठिने मोहांधकार-विनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा ॥६॥

वर ध्यान अगनि जराय वसुविधि, ऊर्ध्वगमन स्वभावतैं।
राजैं अचल शिव थान नित, तिंह धर्मद्रव्य अभावतैं॥
यातैं उचित ही हैं जु तुम पद, धूपसों पूजा करूँ॥इक सहस.॥

ॐ ह्रीं चतुर्विंशत्यधिकैकसहस्रगुणसंयुक्ताय श्रीसिद्धपरमेष्ठिने अष्टकर्मदहनाय धूपं०

सर्वोत्कृष्ट सु पुण्य फल, तीर्थेश पद पायो महा।
तीर्थेश पदको स्वरुचिधर, अव्यय अमर शिवफल लहा॥
यातैं उचित ही है जु तुम पद, फलनसों पूजा करूँ।
इक सहस अरु चौबीस गुण गण भावयुत मन में धरूँ॥

ॐ ह्रीं चतुर्विंशत्यधिकैकसहस्रगुणसंयुक्ताय श्रीसिद्धपरमेष्ठिने मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा ॥८॥

अष्टांग मूल सु विधि हरो, निज अष्ट गुण पायो सही।
अष्टार्द्ध गति संसार मेटि सु अचल ह्वैं अष्टम महीं॥
यातैं उचित ही है जु तुम पद अर्घसों पूजा करूँ॥इक सहस.॥

ॐ ह्रीं चतुर्विंशत्यधिकैकसहस्रगुणसंयुक्ताय श्रीसिद्धपरमेष्ठिने अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥९॥

निर्मल सलिल शुभ वास चंदन, धवल अक्षत युत अनी।
शुभ पुष्प मधुकर नित रमें, चरु प्रचुर स्वाद सुविधि घनी॥
वर दीपमाल उजाल धूपायन रसायन फल भले।
करि अर्घ सिद्ध समूह पूजत, कर्मदल सब दलमले॥
ते क्रमावर्त नशाय युगपत, ज्ञान निर्मल रूप हैं।
दुःख जन्म टार अपार गुण, सूक्षम सरूप अनूप हैं॥
कर्माष्ट बिन त्रैलोक्य पूज्य, अदूज शिवकमलापती।
मुनि ध्येय सेय अमेय चहुँ गुण-गेह द्यो हम शुभ मती॥

ॐ ह्रीं श्री सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने सर्वसुखप्राप्तये महार्घ्यं...।

दस सौ चौबीस गुण अर्घ्य

(दोहा)

इन्द्रिय विषय-कषाय हैं, अन्तर शत्रु महान।
तिनको जीतत जिन भये, नमूँ सिद्ध भगवान॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥१॥

रागादिक जीते सु जिन, तिनमें तुम परधान।
तातैं नाम जिनेन्द्र है, नमूँ सदा धरि ध्यान॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥२॥

रागादिक लवलेश बिन, शुद्ध निरंजन देव।
पूरण जिनपद तुम विषैं, राजत हो स्वयमेव॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनपूर्णाताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥३॥

बाह्य शत्रु उपचरित को, जीतत जिन नहीं होय।
अंतर शत्रु प्रबल जये, उत्तम जिन है सोय॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनोत्तमाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥४॥

इन्द्रादिक पूजत चरन, सेवत हैं तिहुँ काल।
गणधरादि श्रुत केवली, जिन आज्ञा निज भाल॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनप्रष्ठाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥५॥

गणधरादि सत-पुरुष जे, वीतराग निरग्रंथ।
तुमको सेवत जिन भये, साधत हैं शिवपंथ॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनाधिपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥६॥

एक देश जिन सर्व मुनि, सर्व भाव अरहंत।
द्रव्यभाव सर्वातमा, नमूँ सिद्ध भगवंत॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनाधीशाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥७॥

गणधरादि सेवत चरण, शुद्धातम लवलाय।
तीन लोक स्वामी भये, नमूँ सिद्ध अधिकाय॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनस्वामीने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥८॥

नमत सुरासुर जिन चरन, तीन काल धरि ध्यान।
सिद्ध जिनेश्वर मैं नमूँ, पाऊँ शिवसुख थान॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनेश्वराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥९॥

तीन लोक तारण तरण, तीन लोक विख्यात।
सिद्ध महा जिननाथ हैं, सेवत पाप नशात॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिननाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥१०॥

एकदेश श्रावक तथा, सर्वदेश मुनिराज।
नित-प्रति रक्षक हो महा, सिद्ध सु पुण्यसमाज॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनपतये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥११॥

त्रिभुवन शिखा-शिरोमणी, राजत सिद्ध अनंत।
शिवमारग परसिद्ध कर, नमत भवोदधि अंत॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनप्रभवे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥१२॥

जिन आज्ञा त्रिभुवन विषैं, वरते सदा अखंड।
मिथ्यामति दुरपक्ष को, देत नीतिसों दंड॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनाधिराजाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥१३॥

तीन लोक परिपूर्ण है, लोकालोक प्रकाश।
राजत है विस्तीर्ण जिन, नमूँ हरो भववास॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनविभवे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥१४॥

आत्मज्ञ जिन नमत हैं, शुद्धातम के हेत।
स्वामी हो तिहुँ लोक के, नमूँ बसे शिवखेत॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनभर्त्रे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥१५॥

मिथ्यामति को नाश करि, तत्त्वज्ञान परकास।
दीप्ति रूप रवि सम सदा, करो सदा उरवास॥

ॐ ह्रीं अर्हं तत्वप्रकाशाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥१६॥

कर्मशत्रु जीते सु जिन, तिनके स्वामी सार।
धर्ममार्ग प्रकटात है, शुद्ध सुलभ सुखकार॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनकर्मजिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥१७॥

अमृत सम निज दृष्टिसों, यथाख्यात आचार।
तिन सबके स्वामी नमूँ, पायो शिवपद सार॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनेशाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥१८॥

समोसरण आदिक विभव, तिसके तुम परधान।
शुद्धातम शिवपद लहो, नमूँ कर्म की हान॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिननायकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥१९॥

सूरज सम तिहुँ लोक में, मिथ्या तिमिर निवार।
सहज दिखायो मोक्षमग, मैं बंदूँ हित धार॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिननेत्रं नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥२०॥

जन्म-मरण दुःख जीतिकर, जिन 'जिन' नाम धराय।
नमूँ सिद्ध परमात्मा, भवदुख सहज नसाय॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनजेत्रे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥२१॥

अचल अबाधित पद लहो, निज स्वभाव दृढ़ भाय।
नमूँ सिद्ध कर-जोरिकर, भाव सहित उर लाय॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनपरिदृढ़ाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥२२॥

सर्व-व्यापि परमात्मा, सर्व पूज्य विख्यात।
श्रीजिनदेव नमूँ त्रिविध, सर्व पाप नशि जात॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनदेवाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥२३॥

श्रीजिनेश जिनराज हो, निजस्वभाव अनिवार।
पर-निमित्त विनशै सकल बंदूँ, शिवसुखकार॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनेश्वराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥२४॥

परम धर्म दातार हो, तीन लोक सुखदाय।
तीन लोक पालक महा, मैं बंदूँ शिवराय॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनपालकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥२५॥

गणधरादि सेवत महा, तुम आज्ञा शिर धार।
अधिक अधिक जिनपद लहो, नमूँ करो भवपार॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनाधिराजाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥२६॥

परम धर्म उपदेश करि, प्रकटायो शिवराय।
श्रीजिन निज आनंद में, वर्तें बंदूँ ताय॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनशासनेशाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥२७॥

पूरण पद पावत निपुण, सब देवन के देव।
मैं पूजूँ नित भावसों, पाऊँ शिव स्वयमेव॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनदेवाधिदेवाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥२८॥

तीन लोक विख्यात हैं, तारण-तरण जिहाज।
तुम सम देव न और हैं, तुम सबके शिरताज॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनाद्वितीयाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥२९॥

तीन लोक पूजत चरन, भाव सहित शिर नाय।
इन्द्रादिक थुति करि थके, मैं बंदूँ तिस पाय॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनाधिनाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥३०॥

तुम समान नहीं देव है, भविजन तारन हेत।
चरणाम्बुज सेवत सुभग, पावैं शिवसुख खेत॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनेन्द्रविबंधाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥३१॥

भवाताप करि तप्त हैं, तिनकी विपति निवार।
धर्मामृत कर पोषियो, वरते शशि उनहार॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनचन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥३२॥

मिथ्यातम करि अन्ध थे, तीन लोक के जीव।
तत्त्व मार्ग प्रकटाइयो, रवि सम दीप्त अतीव॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनादित्याय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥३३॥

बिन कारण तारण तरण, दीप्त रूप भगवान।
इन्द्रादिक पूजत चरण, करत कर्म की हान॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनदीप्तरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥३४॥

जैसे कुंजर चक्र के, जाने दल को साज।
चार संघ नायक प्रभु, बंदूँ सिद्ध समाज॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनकुञ्जराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥३५॥

दीप्त रूप तिहुँ लोक में, है प्रचण्ड परताप।
भक्तन को नित देत हैं, भोगैं शिवसुख आप॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनार्काय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥३६॥

रत्नत्रय मग साध कर, सिद्ध भये भगवान।
पूरण निजसुख धरत हैं, निज में निज परिणाम॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनधौर्याय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥३७॥

तीन लोक के नाथ हो, ज्यूँ तारागण सूर्य।
शिवसुख पायो परमपद, बंदों श्रीजिन धूर्य्य॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनधूर्याय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥३८॥

पराधीन बिन परमपद, तुम बिन लहै न और।
उत्तमातमा मैं नमूँ, तीन लोक शिरमौर॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनोत्तमाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥३९॥

जहाँ न दुःख को लेश है, तहाँ न परसों कार।
तुम बिन कहूँ न श्रेष्ठता, तीन लोक दुखटार॥

ॐ ह्रीं अर्हं त्रिलोकदुःखनिवारकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥४०॥

पूर्ण रूप निज लक्ष्मी, पाई श्री जिनराज।
परमश्रेय परमातमा, बंदूँ शिवसुख साज॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनवराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥४१॥

निरभय हो निर आश्रयी, निःसंगी निर्बंध।
निजसाधन साधक सुगुन, परसों नहिं संबंध॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिननिःसंगाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥४२॥

अन्तराय विधि नाश के, निजानन्द भयो प्राप्त।
'सन्त' नमैं कर जोरयुत, भव-दुःख करो समाप्त॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनोद्वाहाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥४३॥

शिवमारग में धरत हो, जग मारगतें काढ़।
धर्मधुरन्धर मैं नमूँ, पाऊँ भव वन बाढ़॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनवृषभाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥४४॥

धर्मनाथ धर्मेश हो, धर्म तीर्थ करतार।
रहो सुथिर निजधर्म में, मैं बंदूँ सुखकार॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनधर्माय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥४५॥

जगत जीव विधि धूलि सों, लिप्त न लहैं प्रभाव।
रत्नराशि सम तुम दिपो, निर्मल सहज सुभाव॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनरत्नाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥४६॥

तीन लोक के शिखर पर, राजत हो विख्यात।
तुम सम और न जगत में, बड़ा कोई दिखलात॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनोरसाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥४७॥

इन्द्रिय मन व्यापार बहु, मोह शत्रु को जीत।
लहो जिनेश्वर सिद्धपद, तीन लोक के मीत॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनेशाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥४८॥

चारि घातिया कर्म को, नशा कियो जिनराय।
घाति-अघाति विनाश जिन, अग्र भये सुखदाय॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनाग्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥४९॥

निज पौरुषकर साधियो, निज पुरुषारथ सार।
अन्य सहाय नहीं चहैं, निज सुवीर्य अपार॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनशार्दूलाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥५०॥

इन्द्रादिक निज ध्यावते, तुम सम और न कोय।
तीन लोक चूड़ामणि, नमूँ सिद्धसुख होय॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनपुंगवाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥५१॥

निजानन्द पद को लहो अविरोधी मल नास।
समकित बिन तिहुँलोक में, और नहीं सुखरास॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनप्रवेकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥५२॥

जगत शत्रु को जीति के, कल्पित जिन कहलाय।
मोहशत्रु जीते सु जिन, उत्तम सिद्ध सुखदाय॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनहंसाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥५३॥

द्रव्य-भाव दोनों नहीं, उत्तम शिवसुख लीन।
मनवचतन करि मैं नमूँ, निज समभाव जु कीन॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनोत्तमसुखधारकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥५४॥

चार संघ नायक प्रभू, शिवमग सुलभ कराय।
तारण तरण जहान के, मैं बंदूँ शिवराय॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिननायकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥५५॥

स्वयंबुद्ध शिवमार्ग में, आप चले अनिवार।
भविजन अग्रेश्वर भये, बंदूँ भक्ति विचार॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनाग्रिमाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥५६॥

शिवमारग के चिह्न हो, सुखसागर की पाल।
शिवपुर के तुम हो धनी, धर्म नगर प्रतिपाल॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनग्रामण्यै नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥५७॥

तुम सम और न जगत में, उत्तम श्रेष्ठ कहाय।
आप तिरे पर तारते, बंदूँ तिनके पाँय॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनसत्तमाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥५८॥

स्व-पर कल्याणक हो प्रभू, पंचकल्याणक ईश।
श्रीपति शिव-शंकर नमूँ, चरणाम्बुज धरि शीश॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनप्रभवाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥५९॥

मोह महाबल दलमलो, विजय लक्ष्मीनाथ।
परमज्योति शिवपद लहो, चरण नमूँ धरि माथ॥

ॐ ह्रीं अर्हं परमजिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥६०॥

चहुँ गति दुःख विनाशिया, पूरा निज पुरुषार्थ।
नमूँ सिद्ध कर-जोरिकै, पाऊँ मैं सर्वार्थ॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनचतुर्गतिदुःखान्तकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥६१॥

जीते कर्म निकृष्ट को, श्रेष्ट भये जिनदेव।
तुम सम और न जगत में, बंदूँ मैं तिन भेव॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनश्रेष्ठाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥६२॥

आप मोक्षमग साधियो, औरन सुलभ कराय।
आदि पुरुष तुम जगत में, धर्म रीत वरताय॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनज्येष्ठाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥६३॥

मुख्य पुरुषारथ मोक्ष है, साधत सुखिया होय।
मैं बंदूँ तिन भक्ति करि, सिद्ध कहावे सोय॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनसुखाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥६४॥

सूरज सम अग्रेश हो, निज-पर-भासनहार।
आप तिरे भवि तारियो, बंदूँ योग संभार॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनाग्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥६५॥

रागादिक रिपु जीत तुम, श्रीजिन नाम धराय।
सिद्ध भये कर जोरिके, बंदूँ तिनके पाँय॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीजिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥६६॥

विषय कषाय न लेश है, दृष्टि ज्ञान परिपूर्ण।
उत्तम जिन शिवपद लियो, नमत कर्म को चूर्ण॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनोत्तमाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥६७॥

चहुँ प्रकार के देवता, नित्य नमावत शीश।
तुम देवन के देव हो, नमूँ सिद्ध जगदीश॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनवृन्दारकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥६८॥

जो निज सुख होने न दे, सो सत रिपु है जोय।
ऐसे रिपु को जीत के, नमूँ सिद्ध जो होय॥

ॐ ह्रीं अर्हं अरिजिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥६९॥

अविनाशी अविकार हो, अचलरूप विख्यात।
जामें विघ्न न लेश है, नमूँ सिद्ध कहलात॥

ॐ ह्रीं अर्हं निर्विघ्नाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥७०॥

राग-दोष मद-मोह अरु, ज्ञानावरण नशाय।
शुद्ध निरंजन सिद्ध हैं, बंदूँ तिनके पाँय॥

ॐ ह्रीं अर्हं विरजसे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥७१॥

मत्सर भाव दुखी करे, निजानन्द को घात।
सो तुम नाशो छिनक में, शम सुखिया कहलात॥

ॐ ह्रीं अर्हं निरस्तमत्सराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥७२॥

परकृत भाव न लेश है, भेद कह्यो नहिं जाय।
बचन अगोचर शुद्ध हैं, सिद्ध महा सुखदाय॥

ॐ ह्रीं अर्हं शुद्धाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥७३॥

रागादिक मल बिन दिपो, शुद्ध सुवर्ण समान।
शुद्ध निरंजन पद लियो, नमूँ चरण धरि ध्यान॥

ॐ ह्रीं अर्हं निरंजनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥७४॥

द्रव्य-भाव दो विधि करम, नाश भये शिवराय।
बन्दूँ मनवचकाय करि, भविजन को सुखदाय॥

ॐ ह्रीं अर्हं कर्मविनाशकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥७५॥

ज्ञानावर्णी आदि ले, चार घातिया कर्म।
तिनको अंत खिपाइके, लियो मोक्षपद पर्म॥

ॐ ह्रीं अर्हं घातिकर्मान्तकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥७६॥

ज्ञानावरणी पटल बिन, ज्ञान दीप्त परकाश।
शुद्ध सिद्ध परमातमा, बंदित भवदुख नाश॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिनदीप्तये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥७७॥

कर्म रुलावे आत्मा, रागादिक उपजाय।
तिनको मर्म विनाशकैं, सिद्ध भये सुखदाय॥

ॐ ह्रीं अर्हं कर्ममर्मभिदे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥७८॥

पाप कलाप न लेश है, शुद्धाशुद्ध विख्यात।
मुनि मन मोहन रूप है, नमूँ जोरि जुग हाथ॥

ॐ ह्रीं अर्हं अनुदयाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥७९॥

राग नहीं थुतिकारसों, निंदकसों नहीं द्वेष।
शम सुखिया आनन्दघन, बंदूँ सिद्ध हमेश॥

ॐ ह्रीं अर्हं वीतरागाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥८०॥

क्षुधा वेदनी नाशकार, स्व-सुख भुंजनहार।
निजानन्द संतुष्ट हैं, बंदूँ भाव विचार॥

ॐ ह्रीं अर्हं अक्षुधाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥८१॥

एक दृष्टि सबको लखें, इष्ट-अनिष्ट न कोय।
द्वेष अंश व्यापै नहीं, सिद्ध कहावत सोय॥

ॐ ह्रीं अर्हं अद्वेषाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥८२॥

भवसागर के तीर हैं, शिवपुर के हैं राहि।
मिथ्यातम-हर सूर्य हैं, मैं बंदूँ हूँ ताहि॥

ॐ ह्रीं अर्हं निर्मोहाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥८३॥

जगजनमें यह दोष है, सुखी-दुखी बहु भेव।
ते सब दोष निबारियो, उत्तम हो स्वयमेव॥

ॐ ह्रीं अर्हं निर्दोषाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥८४॥

जनम मरण यह रोग है, तिनको कठिन इलाज।
परमौषध यह रोग की, बंदूँ मेटन काज॥

ॐ ह्रीं अर्हं अगदाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥८५॥

राग कहो ममता कहो, मोह कर्म सो होय।
सो निज मोह विनाशियो, नमूँ सिद्ध है सोय॥

ॐ ह्रीं अर्हं निर्ममत्वाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥८६॥

तृष्णा दुख को मूल है, सुखी भये तिस नाश।
मनवचतन करि मैं नमूँ, है आनन्दविलास॥

ॐ ह्रीं अर्हं वीततृष्णाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥८७॥

अन्तर बाह्य निरिच्छ हैं, एकी रूप अनूप।
निस्पृह परमेश्वर नमूँ, निजानंद शिवभूप॥

ॐ ह्रीं अर्हं असंगाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥८८॥

क्षायिक समकित को धरैं, निर्भय थिरता रूप।
निजानंदसों नहिं चिगें, मैं बंदूँ शिवभूप॥

ॐ ह्रीं अर्हं निर्भयाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥८९॥

स्वप्न प्रमादी जीव के, अल्प-शक्ति सो होय।
निज बल अतुल महा धरैं, सिद्ध कहावैं सोय॥

ॐ ह्रीं अर्हं अस्वप्नाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥९०॥

दर्श ज्ञान सुख भोगतैं, खेद न रंचक होय।
सो अनंत बल के धनी, सिद्ध नमामी सोय॥

ॐ ह्रीं अर्हं निःश्रमाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥९१॥

युगपत सब प्रापत भये, जानत हैं सब भेद।
संशय बिन आश्चर्य नहीं, नमूँ सिद्ध स्वयमेव॥

ॐ ह्रीं अर्हं वीतविस्मयाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥९२॥

सिद्ध सनातन कालतें, जग में हैं परसिद्ध।
तथा जन्म फिर नहीं धरैं, नमूँ जोर कर सिद्ध॥

ॐ ह्रीं अर्हं अजन्मिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥९३॥

भ्रम बिन, ज्ञान प्रकाश में, भासैं जीव-अजीव।
संशय बिन निश्चल सुखी, बंदूँ सिद्ध सदीव॥

ॐ ह्रीं अर्हं निःसंशयाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥९४॥

तुम पूरण परमातमा, सदा रहो इक सार।
जरा न व्यापै तुम विषैं, नमूँ सिद्ध अविकार॥

ॐ ह्रीं अर्हं निर्जराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥९५॥

तुम पूरण परमातमा, अन्त कभी नहीं होय।
मरण रहित बंदूँ सदा, देउ अमर पद सोय॥

ॐ ह्रीं अर्हं अमराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥९६॥

निजानन्द के भोग में, कभी न आरत आय।
यातैं तुम अरतीत हो, बंदूँ सिद्ध सुहाय॥

ॐ ह्रीं अर्हं अरत्यतीताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥९७॥

होत नहीं सोचन न कभूँ, ज्ञान धरैं परतक्ष।
नमूँ सिद्ध परमातमा, पाऊँ ज्ञान अलक्ष॥

ॐ ह्रीं अर्हं निश्चिंताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥९८॥

जानत हैं सब ज्ञेय को, पर ज्ञेयनतैं भिन्न।
यातैं निर्विषयी कहे, लेश न भोगैं अन्य॥

ॐ ह्रीं अर्हं निर्विषयाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥९९॥

अहंकार आदिक त्रिषट्, तुम पद निवसैं नाहिं।
सिद्ध भये परमात्मा, मैं बन्दूँ हूँ ताहिं॥

ॐ ह्रीं अर्हं त्रिषष्ठिजिते नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥१००॥

जेते गुण परजाय हैं, द्रव्य अनन्त सुकाल।
तिनको तुम जानो प्रभु, बंदूँ मैं नमि भाल॥

ॐ ह्रीं अर्हं सर्वज्ञाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥१०१॥

ज्ञान-आरसी तुम विषैं, झलकें ज्ञेय अनन्त।
सिद्ध भये तिनको नमें, तीनों काल सु संत।।

ॐ ह्रीं अर्हं सर्वविदे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१०२।।

चक्षु अचक्षु न भेद हैं, समदर्शी भगवान।
नमूँ सिद्ध परमातमा, तीनों योग प्रधान।।

ॐ ह्रीं अर्हं सर्वदर्शिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१०३।।

देखन कछु बाकी नहीं, तीनों काल मंझार।
सर्वालोकी सिद्ध हैं, नमूँ त्रियोग सम्हार।।

ॐ ह्रीं अर्हं सर्वावलोकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१०४।।

तुम सम प्राक्रम और सब, जगवासी में नाहिं
निज बल शिवपद साधियो, मैं बंदूँ हूँ ताहि।।

ॐ ह्रीं अर्हं अनंतविक्रमाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१०५।।

निज सुख भोगत नहिं चिगें, वीर्य अनन्त धराय।
तुम अनन्त बल के धनी, बंदूँ मनवचकाय।।

ॐ ह्रीं अर्हं अनन्तवीर्याय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१०६।।

सुखाभास जग जीव के, पर-निमित्तसैं होय।
निज आश्रय पूरण सुखी, सिद्ध कहावै सोय।।

ॐ ह्रीं अर्हं अनंतसुखाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१०७।।

निज-सुख में सुख होत है, पर-सुख में सुख नाहिं।
सो तुम निज-सुख के धनी, मैं बंदूँ हूँ ताहि।।

ॐ ह्रीं अर्हं अनंतसौख्याय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१०८।।

तीन लोक तिहुँ काल के, गुण-पर्यय कछु नाहिं।
जाको तुम जानो नहीं, ज्ञान-भानु के माहिं।।

ॐ ह्रीं अर्हं विश्वज्ञानाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१०९।।

द्रव्य तथा गुण पर्य को, देखै एकीबार।
विश्वदर्श तुम नाम है, बंदों भक्ति विचार।।

ॐ ह्रीं अर्हं विश्वदर्शिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।११०।।

संपूरण अवलोकतें, दर्शन धरो अपार।
नमूँ सिद्ध कर जोरिके, करो जगत से पार॥
ॐ ह्रीं अर्हं अखिलार्थदर्शिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥१११॥

इन्द्रिय ज्ञान परोक्ष है, क्रमवर्ती कहलाय।
बिन इंद्रिय प्रत्यक्ष है, धरो ज्ञान सुखदाय॥
ॐ ह्रीं अर्हं निष्पक्षदर्शनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥११२॥

विश्व मांहि तुम अर्थ सब, देखो एकीबार।
विश्वचक्षु तुम नाम है, बंदूँ भक्ति विचार॥
ॐ ह्रीं अर्हं विश्वचक्षुषे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥११३॥

तीन लोक के अर्थ जे, बाकी रहो न शेष।
युगपत तुम सब जानियो, गुण-पर्याय विशेष॥
ॐ ह्रीं अर्हं अशेषविदे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥११४॥

पराधीन अरु विघ्न बिन, है सांचा आनन्द।
सो शिवगति में तुम लियो, मैं बंदूँ सुखकंद॥
ॐ ह्रीं अर्हं आनन्दाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥११५॥

सत प्रशंसता नित बहै, या सद्भाव सरूप।
सो तुममें आनंद है, बंदत हूँ शिवभूप॥
ॐ ह्रीं अर्हं सदानन्दाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥११६॥

उदय महा सत्‌रूप है, जामें असत न होय।
अंतराय अरु विघन बिन, सत्य उदै है सोय॥
ॐ ह्रीं अर्हं सदोदयाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥११७॥

नित्यानन्द महासुखी, हीनादिक नहीं होय।
नहीं गत्यंतर रूप हो, शिवगति में है सोय॥
ॐ ह्रीं अर्हं नित्यानंदाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥११८॥

जासों परे न और सुख, अहमिन्द्रन में नाहिं।
सोई श्रेष्ठ सुख भोगते, बंदूँ हूँ मैं ताहि॥
ॐ ह्रीं अर्हं परमानन्दाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥११९॥

पूरण सुखकी हद धरैं, सो महान आनन्द।
सो तुम पायो शिव-धनी, बंदूँ पद अरविंद॥

ॐ ह्रीं अर्हं महानन्दाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥१२०॥

उत्तम सुख स्वाधीन है, परम नाम कहलाय।
चारों गति में सो नहीं, तुम पायो सुखदाय॥

ॐ ह्रीं अर्हं परमानन्दाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥१२१॥

जामें विघन न लेश है, उदय तेज विज्ञान।
जाको हम जानत नहीं, सुलभरूप विधि ठान॥

ॐ ह्रीं अर्हं परोदयाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥१२२॥

परम शक्ति परमातमा, पर सहाय बिन आप।
स्वयं वीर्य आनंद के, नमत कटैं सब पाप॥

ॐ ह्रीं अर्हं परमौजसे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥१२३॥

महातेज के पुंज हो, अविनाशी अविकार।
झलकत ज्ञानाकार सब, दर्पणवत् आधार॥

ॐ ह्रीं अर्हं परमतेजसे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥१२४॥

परमधाम उत्कृष्ट पद, मोक्ष नाम कहलाय।
जासों फिर आवत नहीं, जन्म-मरण नशि जाय॥

ॐ ह्रीं अर्हं परमधाम्ने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥१२५॥

जगतगुरु सिद्ध परमातमा, जगत सूर्य शिव नाम।
परमहंस योगीश हैं, लियो मोक्ष अभिराम॥

ॐ ह्रीं अर्हं परमहंसाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥१२६॥

दिव्यज्योति स्व-ज्ञान में, तीन लोक प्रतिभास।
शंका बिन विश्वास कर, निजपर कियो प्रकाश॥

ॐ ह्रीं अर्हं प्रत्यक्षज्ञातुः नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥१२७॥

निज विज्ञान सु ज्योति में, संशय आदिक नाहिं।
सो तुम सहज प्रकाशियो, मैं बंदूँ हूँ ताहि॥

ॐ ह्रीं अर्हं विज्ञानज्योतिषे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥१२८॥

शुद्ध बुद्ध परमातमा, परम ब्रह्म कहलाय।
सर्व-लोक उत्कृष्ट पद, पायो बंदूँ ताय॥

ॐ ह्रीं अर्हं परमब्रह्मणे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥१२९॥

चार ज्ञान नहिं जास में, शुद्ध सरूप अनूप।
पर को नाहिं प्रवेश है, एकाकी शिवरूप॥

ॐ ह्रीं अर्हं परमरहसे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥१३०॥

निज गुण द्रव पर्याय में, भिन्न-भिन्न सब रूप।
एक क्षेत्र अवगाह करि, राजत हैं चिद्रूप॥

ॐ ह्रीं अर्हं प्रत्यक्षात्मने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥१३१॥

शुद्ध बुद्ध परमातमा, निज विज्ञान प्रकाश।
स्वै-आतम के बोधतें, कियो कर्म को नास॥

ॐ ह्रीं अर्हं प्रबोधात्मने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥१३२॥

कर्म मैल से लिप्त हैं, जगति आत्म दिन रैन।
कर्म नाश महापद लियो, बन्दूँ हूँ सुख दैन॥

ॐ ह्रीं अर्हं महात्मने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥१३३॥

आतमको गुण ज्ञान है, यही यथारथ होय।
ज्ञानानन्द ऐशवर्यता, उदय भयो है सोय॥

ॐ ह्रीं अर्हं आत्ममहोदयाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥१३४॥

दर्श ज्ञान सुख वीर्यको, पाय परम पद होय।
सो परमातम तुम भये, नमूँ जोर कर दोय॥

ॐ ह्रीं अर्हं परमात्मने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥१३५॥

मोहकर्म के नाशतें, शान्ति भये सुखदेन।
क्षोभरहित प्रशान्त हो, शांत नमूँ सुख लेन॥

ॐ ह्रीं अर्हं प्रशान्तात्मने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥१३६॥

पूरण पद तुम पाइयो, यातैं परे न कोय।
तुम समान नहीं और हैं, बंदूँ हूँ पद दोय॥

ॐ ह्रीं अर्हं परमात्मने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥१३७॥

पुद्‌गल कृत तन छारकैं, निज आतम में वास।
स्व-प्रदेश गृह के विषै, नित ही करत विलास॥

ॐ ह्रीं अर्हं आत्मनिकेतनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥१३८॥

औरन को नित देत हैं, शिवसुख भोगैं आप।
परम इष्ट तम हो सदा, निजसम करत मिलाप॥

ॐ ह्रीं अर्हं परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥१३९॥

मोक्ष-लक्ष्मी नाथ हो, भक्तन प्रति नित देत।
महा इष्ट कहलात हो, बंदूँ शिवसुख हेत॥

ॐ ह्रीं अर्हं महितात्मने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥१४०॥

रागादिक मल नाशिकैं, श्रेष्ठ भये जगमांहि।
सो उपासना करण को, तम सम कोई नाहिं॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्रेष्ठात्मने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥१४१॥

पर में ममत विनाशकैं, स्वै आतम थिर धार।
पर-विकल्प संकल्प बिन, तिष्ठो सुख-आधार॥

ॐ ह्रीं अर्हं स्वात्मनिष्ठिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥१४२॥

स्वै-आतम में मग्न हैं, स्वै-आतम लवलीन।
पर में भ्रमण करैं नहीं, 'सन्त' चरण शिर दीन॥

ॐ ह्रीं अर्हं ब्रह्मनिष्ठाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥१४३॥

तीन लोक के नाथ हो, इन्द्रादिक कर पूज।
तुम सम और महानता, नहिं धारत है दूज॥

ॐ ह्रीं अर्हं महाज्येष्ठाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥१४४॥

तीन लोक परसिद्ध हो, सिद्ध तुम्हारा नाम।
सर्व सिद्धता ईश हो, परहूँ सबके काम॥

ॐ ह्रीं अर्हं निरूढात्मने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥१४५॥

स्वै-आतम थिरता धरैं, नहीं चलाचल होय।
निश्चल परम सुभाव में, भये प्रगति को खोय॥

ॐ ह्रीं अर्हं दृढ़ात्मने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥१४६॥

क्षयोपशम नानाविधै, क्षायक एक प्रकार।
सो तुममें नहीं और में, बंदूँ योग संभार॥

ॐ ह्रीं अर्हं एकविद्याय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥१४७॥

कर्म पटल के नाशतें, निर्मल ज्ञान उदार।
तुम महान विद्या धरो, बंदूँ योग संभार॥

ॐ ह्रीं अर्हं महाविद्याय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥१४८॥

परम पूज्य परमेश पद, पूरण ब्रह्म कहाय।
पायो सहज महान पद, बंदूँ तिनके पाँय॥

ॐ ह्रीं अर्हं महापदेश्वराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥१४९॥

पंच परम-पद पाइयो, ब्रह्म नाम है एक।
पूंजूँ मनवचकाय करि, नाशै विघ्न अनेक॥

ॐ ह्रीं अर्हं पंचब्रह्मणे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥१५०॥

निज विभूति सर्वस्व तुम, पायो सहज सुभाय।
हीनाधिक बिन बिलसते, बंदूँ ध्यान लगाय॥

ॐ ह्रीं अर्हं सर्वाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥१५१॥

पूरण पण्डित ईश हो, बुद्ध धाम अभिराम।
बंदूँ मनवचकाय करि, पाऊँ मोक्ष सुधाम॥

ॐ ह्रीं अर्हं सर्वविद्येश्वराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥१५२॥

मोह कर्म चकचूरतें, स्वाभाविक शुभ चल।
शुध परिणाम धरैं सदा, बंदूँ नित नमि भाल॥

ॐ ह्रीं अर्हं शुचये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥१५३॥

ज्ञान-दर्श आवर्ण, बिन दीपो नंतानंत।
सकल ज्ञेय प्रतिभास है, तुम्हैं नमैं नित 'सन्त'॥

ॐ ह्रीं अर्हं अनंत दीप्तये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥१५४॥

इक इक गुण प्रतिछेद को, पार न पायो जाय।
सो गुण रास अनंत हैं, बंदूँ तिनके पाँय॥

ॐ ह्रीं अर्हं अनन्तात्मने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥१५५॥

अहमिंद्रन की शक्ति जो, करो अनंती रास।
सो तुम शक्ति अनंत गुण, करै अनंत प्रकाश॥

ॐ ह्रीं अर्हं अनंतशक्तये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥१५६॥

क्षायक दर्शन जोति में, निरावरण परकास।
सो अनंत दृग तुम धरौ, नमैं चरण नित दास॥

ॐ ह्रीं अर्हं अनंतदर्शये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥१५७॥

जाकी शक्ति अपार है, हेत-अहेत प्रसिद्ध।
गणधरादि जानत नहीं, मैं बंदूँ नित सिद्ध॥

ॐ ह्रीं अर्हं अनंतशक्तये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥१५८॥

चेतन शक्ति अनंत है, निरावरण जो होय।
सो तुम पायो सहज ही, कर्म पुंज को खोय॥

ॐ ह्रीं अर्हं अनंतचिदेशाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥१५९॥

जो सुख है निज आश्रये, सो सुख पर में नाहिं।
निजानन्द रस लीन हैं, मैं बंदूँ हूँ ताहिं॥

ॐ ह्रीं अर्हं अनंतमुदे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥१६०॥

जाकैं कर्म लिपै न फिर, दिपै सदा निरधार।
सदा प्रकाशजु सहित है, बंदूँ योग सम्हार॥

ॐ ह्रीं अर्हं सदाप्रकाशाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥१६१॥

निजानन्द के माँहि हैं, सर्व अर्थ परसिद्ध।
सो तुम पायो सहज ही, नमत मिले नवनिद्ध॥

ॐ ह्रीं अर्हं सर्वार्थसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥१६२॥

अति सूक्षम जे अर्थ हैं, काय अकाय कहाय।
साक्षात् सबको लखो, बन्दूँ तिनके पाँय॥

ॐ ह्रीं अर्हं साक्षात्कारिणे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥१६३॥

सकल-गुणनमय द्रव्य हो, शुद्ध सुभाव प्रकाश।
तुम समान नहीं दूसरो, वन्दत पूरै आस॥

ॐ ह्रीं अर्हं समग्रर्द्धये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥१६४॥

सर्व कर्म को छीन करि, जरी जेवरी सार।
सो तुम धूलि उड़ाइयो, बंदूँ भक्ति विचार॥

ॐ ह्रीं अर्हं कर्मक्षीणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥१६५॥

चहुँ गति जगत कहात हैं, ताको करि विध्वंश।
अमर अचल शिवपुर वसैं, भर्म न राखो अंश॥

ॐ ह्रीं अर्हं जगद्विध्वंसिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥१६६॥

इन्द्री मन व्यापार में, जाको नहिं अधिकार।
सो अलक्ष आतम प्रभू, होउ सुमति दातार॥

ॐ ह्रीं अर्हं अलक्षात्मने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥१६७॥

नहीं चलाचल अचल हैं, नहीं भ्रमण थिर धार।
सो शिवपुर में वसत हैं, बंदूँ भक्ति विचार॥

ॐ ह्रीं अर्हं अचलस्थानाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥१६८॥

पर कृत निमित बिगाड हैं, सोई दुविधा जान।
सो तुममें नहीं लेश हैं, निराबाध परणाम॥

ॐ ह्रीं अर्हं निराबाधाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥१६९॥

जैसे हो तुम आदि में, सोई हो तुम अन्त।
एक भाँति निवसो सदा, बंदत है नित 'सन्त'॥

ॐ ह्रीं अर्हं अप्रतर्क्याय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥१७०॥

धर्मनाथ जगदीश हो, सुर मुनि मानैं आन।
मिथ्यातम नहीं चलत है, तुम आगे परमाण॥

ॐ ह्रीं अर्हं धर्मचक्रिणे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥१७१॥

ज्ञान शक्ति उत्कृष्ट है, धर्म सर्व तिस माहिं।
श्रेष्ठ ज्ञानतम पुञ्ज हो, परनिमित्त कछु नाहिं॥

ॐ ह्रीं अर्हं विदांवराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥१७२॥

निज अभाव से मुक्त हो, कहैं कुवादी लोग।
भूतात्मा सो मुक्त हैं, सो तुम पायो जोग॥

ॐ ह्रीं अर्हं भूतात्मने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥१७३॥

सहज सुभाव प्रकाशियो, परनिमित्त कछु नाहिं।
सो तुम पायो सुलभतें, स्वसुभाव के माहिं॥

ॐ ह्रीं अर्हं सहजज्योतिषे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥१७४॥

विश्व नाम तिहुँ लोक में, तिसमें करत प्रकाश।
विश्वज्योति कहलात है, नमत मोहतम नाश॥

ॐ ह्रीं अर्हं विश्वज्योतिषे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥१७५॥

फरश आदि मन इन्द्रियाँ, द्वार ज्ञान कछु नाहिं।
यातें अतिइन्द्रिय कहो, जिन-सिद्धांत के माहिं॥

ॐ ह्रीं अर्हं अतीन्द्रियाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥१७६॥

एक मान असहाय हो, शुद्ध बुद्ध निर अंश।
केवल तुमको धर्म है, नमें तुम्हें नित 'सन्त'॥

ॐ ह्रीं अर्हं केवलाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥१७७॥

लौकिक जन या लोक में, तुम सारूँ गुण नाहिं।
केवल तुमही में बसैं, मैं बंदूँ हूँ ताही॥

ॐ ह्रीं अर्हं केवलालोकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥१७८॥

लोक अनन्त कहो सही, तातैं नन्तानन्त।
है अलोक अवलोकियो, तुम्हें नमें नित 'सन्त'॥

ॐ ह्रीं अर्हं लोकालोकावलोकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥१७९॥

ज्ञान द्वार निज शक्ति हो, फैली लोकालोक।
भिन्न-भिन्न सब जानियों, नमूँ चरण दे धोक॥

ॐ ह्रीं अर्हं विवृताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥१८०॥

बिन सहाय निज शक्ति हो, प्रकटो आपोआप।
स्वयंबुद्ध स्वै-सिद्ध हो, नमत नसै सब पाप॥

ॐ ह्रीं अर्हं केवलावलोकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥१८१॥

सूक्षम सुभग सुभावतैं, मन इन्द्रिय नहिं ज्ञात।
वचन अगोचर गुण धरैं, नमूँ चरन दिन-रात॥

ॐ ह्रीं अर्हं अव्यक्ताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥१८२॥

कर्म उदय दुख भोगवैं, सर्व जीव संसार।
तिन सबको तुमही शरण, देहो सुक्ख अपार॥
ॐ ह्रीं अर्हं सर्वशरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥१८३॥

चितवन में आवै नहीं, पार न पावे कोय।
महा विभव के हो धनी, नमूँ जोर कर दोय॥
ॐ ह्रीं अर्हं अचिंत्यविभवाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥१८४॥

छहों काय के वास को, विश्व कहै सब लोक।
तिनके थंभनहार हो, राज काज के जोग॥
ॐ ह्रीं अर्हं विश्वभृते नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥१८५॥

घट-घट में राजो सदा, ज्ञान द्वार सब ठौर।
विश्व रूप जीवात्म हो, तीन लोक सिरमौर॥
ॐ ह्रीं अर्हं विश्वरूपात्मने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥१८६॥

घट-घट में नित-व्याप्त, ज्यों घर दीपक जोति।
विश्वनाथ तुम नाम है, पूजत शिवसुख होत॥
ॐ ह्रीं अर्हं विश्वात्मने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥१८७॥

इन्द्रादिक जे विश्वपति, तुम पद पूजैं आन।
यातैं मुखिया हो सही, मैं पूजूँ धरि ध्यान॥
ॐ ह्रीं अर्हं विश्वतोमुखाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥१८८॥

ज्ञान द्वार सब जगत में, व्यापि रहे भगवान।
विश्व व्यापि मुनि कहत हैं, ज्यूं नभ में शशि भान॥
ॐ ह्रीं अर्हं विश्वव्यापिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥१८९॥

निरावरण निरलेप हैं, तेज रूप विख्यात।
ज्ञान कला पूरण धरैं, मैं बंदूँ दिन रात॥
ॐ ह्रीं अर्हं स्वयंजोतिषे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥१९०॥

चितवन में आवैं नहीं, धारैं सुगुण अपार।
मन वच काय नमूँ सदा, मिटै सकल संसार॥
ॐ ह्रीं अर्हं अचिंत्यात्मने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥१९१॥

नय प्रमाण को गमन नहीं, स्वयं ज्योति परकाश।
अद्भुत गुण पर्याय में, सुखसूँ करैं विलास॥
ॐ ह्रीं अर्हं अमितप्रभावाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥१९२॥

मती आदि क्रमवर्त्त बिन, केवल लक्ष्मीनाथ।
महाबोध तुम नाम है, नमूँ पाँय धरि माथ॥
ॐ ह्रीं अर्हं महाबोधाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥१९३॥

कर्मयोगतैं जगत में, जीव शक्ति को नाश।
स्वयं वीर्य अद्भुत धरैं, नमूँ चरण सुखरास॥
ॐ ह्रीं अर्हं महावीर्याय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥१९४।

क्षायक लब्धि महान है, ताको लाभ लहाय।
महालाभ यातैं कहैं, बंदूँ तिनके पाँय॥
ॐ ह्रीं अर्हं महालाभाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥१९५॥

ज्ञानावरणादिक पटल, छायो आतम ज्योति।
ताको नाश भये विमल, दीप्त रूप उद्योत॥
ॐ ह्रीं अर्हं महोदयाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥१९६॥

ज्ञानानन्द स्व लक्ष्मी को, भोगैं बाधाहीन।
पंचम गति में वास है, नमूँ जो पद लीन॥
ॐ ह्रीं अर्हं महाभोगसुगतये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥१९७॥

पर निमित्त जामें नहीं, स्व-आनन्द अपार।
सोई परमानन्द हैं, भोगैं निज आधार॥
ॐ ह्रीं अर्हं महाभोगाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥१९८॥

दर्श ज्ञान सुख भोगते, नेक न बाधा होय।
अतुल वीर्य तुम धरत हो, मैं बंदूँ हूँ सोय॥
ॐ ह्रीं अर्हं अतुलवीर्याय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥१९९॥

शिवस्वरूप आनन्दमय, क्रीड़ा करत विलास।
महादेव कहलात हैं, बन्दत रिपुगण नाश॥
ॐ ह्रीं अर्हं यज्ञार्हाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥२००॥

महाभाग शिवगति लहो, ता सम भान न और।
सोई भगवत है प्रभु, नमूँ पदाम्बुज ठौर॥

ॐ ह्रीं अर्हं भगवते नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥२०१॥

तीन लोक के पूज्य हैं, तीन लोक के स्वामि।
कर्म-शत्रु को छय कियो, तातैं अरहत नाम॥

ॐ ह्रीं अर्हं अर्हते नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥२०२॥

सुरनर पूजत चरण युग, द्रव्य अर्थ जुत भाव।
महा-अर्घ तुम नाम है, पूजत कर्म अभाव॥

ॐ ह्रीं अर्हं महार्घ्याय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥२०३॥

शत इन्द्रन करि पूज्य हो, अहमिंद्रन के ध्येय।
द्रव्य-भाव करि पूज्य हो, पूजक पूज्य अभेय॥

ॐ ह्रीं अर्हं मधवाचिंताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥२०४॥

छहों द्रव्य गुणपर्य को, जानत भेद अनन्त।
महापुरुष त्रिभुवन धनी, पूजत हैं नित 'सन्त'॥

ॐ ह्रीं अर्हं भूतार्थयज्ञपुरुषाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥२०५॥

तुमसों कछु छाना नहीं, तीन लोक का भेद।
दर्पण तल सम भास है, नमत कर्ममल छेद॥

ॐ ह्रीं अर्हं भूतार्थयज्ञाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥२०६॥

सकल ज्ञेय के ज्ञानतैं, हो सबके सिरमौर।
पुरुषोत्तम तुम नाम है, तुम लग सबकी दौर॥

ॐ ह्रीं अर्हं भूतार्थकृतपुरुषाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥२०७॥

स्वयंबुद्ध शिवमग चरत, स्वयंबुद्ध अविरुद्ध।
शिवमगचारी निज ज़जैं, पावैं आतम शुद्ध॥

ॐ ह्रीं अर्हं पूज्याय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥२०८॥

सब देवन के देव हो, तीन लोक के पूज्य।
मिथ्या तिमिर निवारते, सूरज और न दूज॥

ॐ ह्रीं अर्हं भट्टारकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥२०९॥

सुर नर मुनि के पूज्य हो, तुमसे श्रेष्ठ न कोय।
तीन लोक के स्वामि हो, पूजत शिवसुख होय॥

ॐ ह्रीं अर्हं तत्रभवते नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥२१०॥

महा पूज्य महा मान्य हो, स्वयंबुद्ध अविकार।
मन-वच-तन से ध्यावते, सुरनर भक्ति विचार॥

ॐ ह्रीं अर्हं अत्रभवते नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥२११॥

महाज्ञान केवल कहो, सो दीखे तुम माँहि।
महा नामसों पूजिये, संसारी दुख नाहिं॥

ॐ ह्रीं अर्हं महते नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥२१२ ॥॥

पूज्यपणा नहीं और में, इक तुम ही में जान।
महा अर्ह तुम गुण प्रभु, पूजत हो कल्याण॥

ॐ ह्रीं अर्हं महार्हाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥२१३॥

अचल शिवालय के विषैं, अमित काल रहैं राज।
चिरजीवी कहलात हो, बंदूँ शिवसुख काज॥

ॐ ह्रीं अर्हं तत्रायुषे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥२१४॥

मरण रहित शिवपद लसै, काल अनन्तानन्त।
दीर्घायू तुम नाम है, बन्दत नित प्रति 'सन्त'॥

ॐ ह्रीं अर्हं दीर्घायुषे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥२१५॥

सकल तत्त्व के अर्थ कहि, निराबाध निरशंस।
धर्म मार्ग प्रकटाइयो, नमत मिटै दुख अंश॥

ॐ ह्रीं अर्हं अर्थवाचे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥२१६॥

मुनिजन नितप्रति ध्यावतें, पावें निज़ कल्याण।
सज्जन जन आराध्य हो, मैं ध्याऊँ धरि ध्यान॥

ॐ ह्रीं अर्हं सज्जनवल्लभाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥२१७॥

शिवसुख जाको ध्यावतैं, पावैं सन्त मुनीन्द्र।
परमाराध्य कहात हो, पायो नाम अतीन्द्र॥

ॐ ह्रीं अर्हं परमाराध्याय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥२१८॥

पंचकल्याण प्रसिद्ध हैं, गर्भ आदि निर्वाण।
देवन करि पूजित भये, पायो शिवसुख थान॥
ॐ ह्रीं अर्हं पंचकल्याणपूजिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥२१९॥

देखो लोकालोक को, हस्त रेख की सार।
इत्यादिक गुण तुम विषै, दीखै उदय अपार॥
ॐ ह्रीं अर्हं दर्शनविशुद्धिगुणोदयाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥२२०॥

क्षायक समकित को धरैं, सौधर्मादिक इन्द्र।
तुम पूजन परभावतैं, अन्तिम होय जिनेन्द्र॥
ॐ ह्रीं अर्हं सुरार्चिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥२२१॥

निर्विकल्प शुभ चिन्ह है, वीतराग सो होय।
सो तुम पायो सहज ही, नमूँ जोर कर दोय॥
ॐ ह्रीं अर्हं सुखदात्मने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥२२२॥

स्वर्ग आदि सुख थान के, हो परकाशन हार।
दीप्त रूप बलवान है, तुम मारग सुखकार॥
ॐ ह्रीं अर्हं दिवौजसे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥२२३॥

गर्भ कल्याणक के विषैं, तुम माता सुखकार।
षट् कुमारिका सेवती, पावें भवदधि पार॥
ॐ ह्रीं अर्हं शचीसेवितमातृकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥२२४॥

अति उत्तम तुम गर्भ है, भवदुख जन्म निवार।
रत्नराशि दिवलोक तैं, वर्षे मूसलधार॥
ॐ ह्रीं अर्हं रत्नगर्भाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥२२५॥

सूर शोधन तैं गर्भ में, दर्पण सम आकार।
यों पवित्र तुम गर्भ है, पावै शिव सुख सार॥
ॐ ह्रीं अर्हं पूतगर्भाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥२२६॥

जाके गर्भागमन तैं, पहले उतसव ठान।
दिव्य नारि मंगल सहित, पूजत श्री भगवान॥
ॐ ह्रीं अर्हं गर्भोत्सवसहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥२२७॥

नित-नित आनन्द उर धरैं, सुर सुरीय हरषात।
मंगल साज समाज सब, उपजावैं दिन-रात॥

ॐ ह्रीं अर्हं नित्योपचारोपचरिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥२२८॥

केवलज्ञान सु लक्ष्मी, धरत महा विस्तार।
चरणकमल सुर मुनि जजैं, हम पूजत हितधार॥

ॐ ह्रीं अर्हं पद्मप्रभवे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥२२९॥

तिहुँविध विधि-मल धोयकर, उज्ज्वल निर्मल होय।
शिव आलय में वसत हैं, शुद्ध सिद्ध हैं सोय॥

ॐ ह्रीं अर्हं निखलाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥२३०॥

असंख्यात परदेश में, अन्य प्रदेश न होय।
स्वयं स्वभाव स्वजात हैं, मैं प्रणमामी सोय॥

ॐ ह्रीं अर्हं स्वयंस्वभावाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥२३१॥

पूज्य यज्ञ आराधना, जो कुछ भक्ति प्रमाण।
तुम ही सबके मूल हो, नमत अमंगल हान॥

ॐ ह्रीं अर्हं सर्वीयजन्मने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥२३२॥

सूर्य सुमेरु समान हो, या सुरतरु की ठौर।
महा पुन्य की राशि हो, सिद्ध नमूँ कर जोर॥

ॐ ह्रीं अर्हं पुण्यांगाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥२३३॥

ज्यूँ सूरज मध्यान्ह में, दिपै अनंत प्रभाव।
त्यों तुम ज्ञानकला दिपै, मिथ्या तिमिर अभाव॥

ॐ ह्रीं अर्हं भास्वते नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥२३४॥

चहुँविधि देवन में सदा, तुम सम देव न आन।
निजानंद में केलिकर, पूजत हूँ धरि ध्यान॥

ॐ ह्रीं अर्हं अद्भुतदेवाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥२३५॥

विश्व ज्ञान युगपत धरैं, ज्यूँ दर्पण आकार।
स्वपर प्रकाशक हो सही, नमूँ भक्ति उरधार॥

ॐ ह्रीं अर्हं विश्वज्ञातृसम्भृते नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥२३६॥

सत-स्वरूप सत-ज्ञान है, तुम ही पूज्य प्रधान।
पूजत हैं नित विश्वजन, देव मान परमान॥

ॐ ह्रीं अर्हं विश्वदेवाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥२३७॥

सृष्टि को सुख करत हो, हरत दुक्ख भववास।
मोक्ष लक्ष्मी देत हो, जन्म-जरा-मृत नास॥

ॐ ह्रीं अर्हं सृष्टिनिर्वृत्ताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥२३८॥

इन्द्र सहस लोचन किये, निरखत रूप अपार।
मोक्ष लहै सो नेमतैं, मैं पूजूँ मनधार॥

ॐ ह्रीं अर्हं सहस्राक्षदृगुत्सवाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥२३९॥

संपूरण निज शक्ति के, है परताप अनन्त।
सो तुम विस्तीरण करो, नमें चरण नित संत॥

ॐ ह्रीं अर्हं सर्वशक्तये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥२४०॥

ऐरावत पर रूढ़ हैं, देव नृत्यता मांड।
पूजत है सो भक्ति सों, मेटि भवार्णव हांड॥

ॐ ह्रीं अर्हं देवैरावतासीनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥२४१॥

सुर नर चारण मुनि जजैं, सुलभ गमन आकाश।
परिपूरण हर्षात हैं, पूरे मन की आश॥

ॐ ह्रीं अर्हं हर्षाकुलामरखगचारणर्षिमतोत्सवाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति० ॥२४२॥

रक्षक हो षट् काय के, शरणागति प्रतिपाल।
सर्वव्यापि निज-ज्ञानतैं, पूजत होय निहाल॥

ॐ ह्रीं अर्हं विष्णवे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥२४३॥

महा उच्च आसन प्रभू, है सुमेर विख्यात।
जन्माभिषेक सुरेन्द्र करि, पूजत मन उमगात॥

ॐ ह्रीं अर्हं स्नानपीठैतादृसराजे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥२४४॥

जाकरि तरिए तीर्थ सो, मानैं मुनि गण मान्य।
तुम सम कौन जु श्रेष्ठ है, असत्यार्थ है अन्य॥

ॐ ह्रीं अर्हं तीर्थसामान्यदुग्दाब्धये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥२४५॥

लोकस्नान गिलानता, मेटै मैल शरीर।
आतम प्रक्षालित कियो, तुम्हीं ज्ञान सु नीर॥

ॐ ह्रीं अर्हं स्नानाम्बूस्वावासवाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥२४६॥

तारण तरण सुभाव हैं, तीन लोक विख्यात।
ज्यूँ सुगंध चम्पाकली, गन्धमई कहलात॥

ॐ ह्रीं अर्हं गन्धपवित्रितत्रिलोकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥२४७॥

सूक्ष्म तथा स्थूल में, ज्ञान करै परवेश।
जाको तुम जानों नहीं, खाली रहो न देश॥

ॐ ह्रीं अर्हं वज्रसूचये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥२४८॥

औरन प्रति आनन्द करि, निर्मल शुचि आचार।
आप पवित्र भये प्रभू, कर्म धूलि को टार॥

ॐ ह्रीं अर्हं शुचिस्रवसे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥२४९॥

कर्मों करि किरतार्थ हो, कृत फल उत्तम पाय।
कर पर कर राजत प्रभू, बंदूँ हूँ युग पाय॥

ॐ ह्रीं अर्हं कृतार्थकृतहस्ताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥२५०॥

दर्शन इन्द्र अघात हैं, इष्ट मान उर माँहि।
कर्म नाशि शिवपुर बसैं, मैं बंदूँ हूँ ताहि॥

ॐ ह्रीं अर्हं शक्रेष्टाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥२५१॥

मघवा जाके नृत्य करि, ताक तृप्ति महान।
सो मैं उनको जजत हूँ, होय कर्म की हान॥

ॐ ह्रीं अर्हं इन्द्रनृत्यतृप्तिकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥२५२॥

शची इन्द्र अरु काम ये, जिन दासन के दास।
निश्चय मन में नमन कर, नित वंदित पद जास॥

ॐ ह्रीं अर्हं शचीविस्मापिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥२५३॥

जिनके सनमुख नृत्य करि, इन्द्र हर्ष उपजाय।
जन्म सुफल मानैं सदा, हम पर होउ सहाय॥

ॐ ह्रीं अर्हं शक्रारब्धानंदनृत्याय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥२५४॥

धन सुवर्ण तें लोक में, पूरण इच्छा होय।
चक्रवर्ती पद पाइये, तुम पूजत हैं सोय॥

ॐ ह्रीं अर्हं रैदपूर्णमनोरथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥२५५॥

तुम आज्ञा में हैं सदा, आप मनोरथ मान।
इन्द्र सदा सेवन करैं, पाप विनाशक जान॥

ॐ ह्रीं अर्हं आज्ञार्थीन्द्रकृतसेवाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥२५६॥

सब देवन में श्रेष्ठ हो, सब देवन सिरताज।
सब देवन के इष्ट हो, बंदत सुलभ सुकाज॥

ॐ ह्रीं अर्हं देवश्रेष्ठाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥२५७॥

तीन लोक में उच्च हो, तीन लोक परशंस।
सो शिवगति पायो प्रभु, जजत कर्म विध्वंस॥

ॐ ह्रीं अर्हं शिवौद्यमानाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥२५८॥

जगत्पूज्य शिवनाथ हो, तुम ही द्रव्य विशिष्ट।
हित उपदेशक परमगुरु मुनिजन माने इष्ट॥

ॐ ह्रीं अर्हं जगत्पूज्यशिवनाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥२५९॥

मति, श्रुत, अवधि अवर्ण को, नाश कियो स्वयमेव।
केवल ज्ञान स्वतै लियो, आप स्वयंभू देव॥

ॐ ह्रीं अर्हं स्वयंभुवे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥२६०॥

समोसरण अद्भुत महा, और लहै नहीं कोय।
धनपति रचो उछाह सों, मैं पूजूँ हूँ सोय॥

ॐ ह्रीं अर्हं कुबेररचितस्थानाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥२६१॥

जाको अन्त न हो कभी, ज्ञान लक्ष्मी नाथ।
सोई शिवपुर के धनी, नमूँ भाव धरि नाथ॥

ॐ ह्रीं अर्हं अनन्तश्रीजुषे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥२६२॥

गणधरादि नित ध्यावते, पावैं शिवपुर वास।
परम ध्येय तुम नाम है, पूरै मन की आश॥

ॐ ह्रीं अर्हं योगीश्वरार्चिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥२६३॥

परमब्रह्म का लाभ हो, तुम पद पायो सार।
त्रिभुवन ज्ञाता हो सही, नय निश्चय-व्यवहार॥

ॐ ह्रीं अर्हं ब्रह्मविदे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥२६४॥

सर्व तत्त्व के आदि में, ब्रह्म तत्त्व परधान।
तिसके ज्ञाता हो प्रभु, मैं बंदूँ धरि ध्यान॥

ॐ ह्रीं अर्हं ब्रह्मतत्त्वाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥२६५॥

द्रव्य भाव द्वै विधि कही, यज्ञ यजन की रीति।
सो सब तुमही हेत हैं, रचत नशै सब भीति॥

ॐ ह्रीं अर्हं यज्ञपतये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥२६६॥

महादेव शिवनाथ हो, तुमको पूजत लोक।
मैं पूजूँ हूँ भाव सौं, मेटो मन को शोक॥

ॐ ह्रीं अर्हं शिवनाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥२६७॥

कृत्य भये निज भाव में, सिद्ध भये सब काज।
पायो निज पुरुषार्थ को, बंदूँ सिद्ध समाज॥

ॐ ह्रीं अर्हं कृतकृत्याय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥२६८॥

यज्ञविधान के अंग हो, मुख नामी परधान।
तुम बिन यज्ञ न हो कभी, पूजत हो कल्यान॥

ॐ ह्रीं अर्हं यज्ञांगाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥२६९॥

मरण रोग के हरण से, अमर भये हो आप।
शरणागत को अमरकर, अमृत हो निष्पाप॥

ॐ ह्रीं अर्हं अमृताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥२७०॥

पूजन विधि स्थान हो, पूजत शिवसुख होय।
सुरनर नित पूजन करैं, मिथ्या मति को खोय॥

ॐ ह्रीं अर्हं यज्ञाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥२७१॥

जो हो सो सामान्य कर, धरत विशेष अनेक।
वस्तु सुभाव यही कहो, बंदूँ सिद्ध प्रत्येक॥

ॐ ह्रीं अर्हं वस्तूत्पादकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥२७२॥

इन्द्र सदा तुम थुति करैं, मन में भक्ति उपाय।
सर्वशास्त्र में तुम थुति, गणधरादि करि गाय॥

ॐ ह्रीं अर्हं स्तुतीश्वराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥२७३॥

मगन रहो निज तत्त्व में, द्रव्य भाव विधि नाश।
जो है सो है विविध विध, नमूँ अचल अविनाश॥

ॐ ह्रीं अर्हं भावाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥२७४॥

तीन लोक सिरताज हैं, इन्द्रादिक करि पूज्य।
धर्मनाथ प्रतिपाल जग, और नहीं है दूज्य॥

ॐ ह्रीं अर्हं महपतये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥२७५॥

महाभाग सरधानतैं, तुम अनुभव करि जीव।
सो पुनि सेवत पाप तज, निजसुख लहैं सदीव॥

ॐ ह्रीं अर्हं महायज्ञाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥२७६॥

यज्ञ-विधि उपदेश में, तुम अग्रेश्वर जान।
यज्ञ रचावनहार तुम, तुम ही हो यजमान॥

ॐ ह्रीं अर्हं अग्रयाजकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥२७७॥

तीन लोक के पूज्य हो, भक्तिभाव उर धार।
धर्म-अर्थ अरु मोक्ष के, दाता तुम हो सार॥

ॐ ह्रीं अर्हं जगत्पूज्याय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥२७८॥

दया मोह पर पापतैं, दूर भये स्वैतंत्र।
ब्रह्मज्ञान में लय सदा, जपूँ नाम तुम मंत्र॥

ॐ ह्रीं अर्हं दयापराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥२७९॥

तुम ही पूजन योग्य हो, तुम ही हो आराध्य।
महा साधु सुख हेतुतें, साधे हैं निज साध्य॥

ॐ ह्रीं अर्हं पूज्यार्हाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥२८०॥

निज पुरुषारथ सघन को, तुमको अर्चत जक्त।
मनवाँछित दातार हो, शिव सुख पावै भक्त॥

ॐ ह्रीं अर्हं जगदार्चिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥२८१॥

ध्यावत हैं नितप्रति तुम्हैं, देव चार परकार।
तुम देवन के देव हो, नमूँ भक्ति उर धार॥

ॐ ह्रीं अर्हं देवाधिदेवाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥२८२॥

इन्द्र समान न भक्त हैं, तुम समान नहीं देव।
ध्यावत हैं नित भावसों, मोक्ष लहैं स्वयमेव॥

ॐ ह्रीं अर्हं शक्रार्च्चिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥२८३॥

तुम देवन के देव हो, सदा पूजने योग्य।
जे पूजत हैं भावसों, भोंगैं शिवसुख भोग॥

ॐ ह्रीं अर्हं देवदेवाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥२८४॥

तीन लोक सिरताज हो, तुम से बड़ा न कोय।
सुरनर पशु खग ध्यावते, दुविधा मन की खोय॥

ॐ ह्रीं अर्हं जगद्गुरवे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥२८५॥

जो हो सो ही तुम सही, नहीं समझ में आय।
सुरनर मुनि सब ध्यावते, तुम वाणी को पाय॥

ॐ ह्रीं अर्हं देवसंघाचार्याय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥२८६॥

ज्ञानानन्द स्वलक्ष्मी, ताके हो भरतार।
स्वसुगंध वासित रहो, कमल गंध की सार॥

ॐ ह्रीं अर्हं पद्मनन्दाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥२८७॥

सब कुवादि वादी हते, वज्र शैल उनहार।
विजयध्वजा फहरात हैं, बंदूँ भक्ति विचार॥

ॐ ह्रीं अर्हं जयध्वजाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥२८८॥

दशों दिशा परकाश हैं, तिनकी ज्योति अमंद।
भविजन कुमुद विकास हो, बंदूँ पूरणचंद॥

ॐ ह्रीं अर्हं भामण्डलिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥२८९॥

चमरनि करि भक्ति करैं, देव चार परकार।
यह विभूति तुम ही, विषैं, बंदूँ पाप निवार॥

ॐ ह्रीं अर्हं चतुःषटीचामराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥२९०॥

देव दुंदुभी शब्द करि, सदा करैं जयकार।
तथा आप परसिद्ध हो, ढोल शब्द उनहार॥

ॐ ह्रीं अर्हं देवदुंदुभिये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥२९१॥

तुम वाणी सब मनन कर, समझत हैं इकसार।
अक्षरार्थ नहीं भ्रम पड़े, संशय मोह निवार॥

ॐ ह्रीं अर्हं वाङ्स्पष्टाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥२९२॥

धनपति रचि तुम आसनं, महा प्रभूता जान।
तथा स्व-आसन पाइयो, अचल रहो शिवथान॥

ॐ ह्रीं अर्हं लब्धासनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥२९३॥

तीन लोक के नाथ हो, तीन छत्र विख्यात।
भव्य-जीव तुम छाह में, सदा स्व-आनंद पात॥

ॐ ह्रीं अर्हं छत्रत्रयाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥२९४॥

पुष्प वृष्टि सुर करत हैं, तीनों काल मंझार।
तुम सुगंध दशदिश रमी, भविजन भ्रमर निहार॥

ॐ ह्रीं अर्हं पुष्पवृष्टये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥२९५॥

देवन रचित अशोक है, वृक्ष महा रमणीक।
समोसरण सोभा प्रभु, शोक निवारण ठीक॥

ॐ ह्रीं अर्हं दिव्याशोकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥२९६॥

मानस्तम्भ निहार के कुमतिन मान गलाय।
समोसरण प्रभुता कहै, नमूँ भक्ति उर लाय॥

ॐ ह्रीं अर्हं मानस्थम्भाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥२९७॥

सुरदेवी संगीत कर, गावैं शुभ गुण गान।
भक्ति भाव उर में जगे, बंदत श्री भगवान॥

ॐ ह्रीं अर्हं संगीतार्हाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥२९८॥

मंगल सूचक चिह्न हैं, कहे अष्ट परकार।
तुम समीप राजत सदा, नमूँ अमंगल टार॥

ॐ ह्रीं अर्हं अष्टमंगलाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥२९९॥

भविजन तरिये तीर्थ सो, तुम हो श्रीभगवान।
कोई न भंगे आन जिन, तीर्थचक्र सो जान॥

ॐ ह्रीं अर्हं तीर्थचक्रवर्तिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥३००॥

सम्यग्दर्शन धरत हो, निश्चै परमावगाढ़।
संशय आदिक मेटिके, नासो सकल विगाढ़॥

ॐ ह्रीं अर्हं सुदर्शनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥३०१॥

कर्ता हो शिव काज के, ब्रह्मा जग की रीति।
वर्णाश्रम को थापकें, प्रकटायी शुभ नीति॥

ॐ ह्रीं अर्हं कर्त्रे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥३०२॥

सत्य धर्म प्रतिपालक के, पोषत हो संसार।
यदि श्रावक दो धर्म के, भये नाथ सुखकार॥

ॐ ह्रीं अर्हं तीर्थभर्त्रे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥३०३॥

धर्मतीर्थ मुनिराज हैं, तिनके हो तुम स्वामि।
धर्म नाथ तुम जानके, नितप्रति करूँ प्रणाम॥

ॐ ह्रीं अर्हं धर्म तीर्थेशाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥३०४॥

लोक तीर्थ में गिनत हैं, धर्मतीर्थ परधान।
सो तुम राजत हो सदा, मैं बन्दूँ धरि ध्यान॥

ॐ ह्रीं अर्हं धर्मतीर्थकराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥३०५॥

तुम बिन धर्म न हो कभी, ढूंढो सकल जहान।
दश-लक्षण स्वधर्म के, तीरथ हो परधान॥

ॐ ह्रीं अर्हं धर्मतीर्थयुताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥३०६॥

धर्म तीर्थ करतार हो, श्रावक या मुनिराज।
दोनों विधि उत्तम कहो, स्वर्ग मोक्ष के काज॥

ॐ ह्रीं अर्हं धर्मतीर्थङ्कराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥३०७॥

तुमसे धर्म चले सदा, तुम्ही धर्म के मूल।
सुरनर मुनि पूजैं सदा, छिदहिं कर्म के शूल॥

ॐ ह्रीं अर्हं तीर्थप्रवर्त्तकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥३०८॥

धर्मनाथ जग में प्रगट, तारण तरण जिहाज।
तीन लोक अधिपति कहो, बन्दूँ सुख के काज॥
ॐ ह्रीं अर्हं तीर्थवेधसे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥३०९॥

श्रावक या मुनि धर्म के, हो दिखलावनहार।
अन्य लिंग नहीं धर्म के, बुधजन लखो विचार॥
ॐ ह्रीं अर्हं तीर्थविधायकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥३१०॥

स्वर्ग मोक्ष दातार हो, तुम्हीं मार्ग सुखदान।
अन्य कुभेषिन में नहीं, धर्म यथारथ ज्ञान॥
ॐ ह्रीं अर्हं सत्यतीर्थकराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥३११॥

सेवन योग्य सु जगत में, तुम्हीं तीर्थ हो सार।
सुरनर मुनि सेवन करैं, मैं बन्दूँ सुखकार॥
ॐ ह्रीं अर्हं तीर्थसेव्याय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥३१२॥

भवि समुद्र भव से तिरैं, सो तुम तीर्थ कहाय।
हो तारण तिहुँ लोक में, सेवत हूँ तुम पाय॥
ॐ ह्रीं अर्हं तीर्थतारकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥३१३॥

सर्व अर्थ परकाश करि, निर इच्छा तुम बैन।
धर्म सुमार्ग प्रवर्त्त को, तुम राजत हो ऐन॥
ॐ ह्रीं अर्हं सत्यवाक्याधिपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥३१४॥

धर्म मार्ग परगट करै, सो शासन कहलाय।
सो उपदेशक आप हो, तिस संकेत कहाय॥
ॐ ह्रीं अर्हं सत्यशासनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥३१५॥

अतिशय करि सर्वज्ञ हो, ज्ञानावरण विनाश।
नेमरूप भवि सुनत ही, शिवसुख करत प्रकाश॥
ॐ ह्रीं अर्हं अप्रतिशासनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥३१६॥

कहैं कथञ्चित् धर्म को, स्यात् वचन सुखकार।
सो प्रमाणतैं साधियो, नय निश्चय-व्यवहार॥
ॐ ह्रीं अर्हं स्याद्वादिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥३१७॥

निर अक्षर वाणी खिरै, दिव्य मेघ की गर्ज्ज।
अक्षरार्थ हो परिणवै, सुन भव्यन मन अर्ज्ज॥

ॐ ह्रीं अर्हं दिव्यध्वनये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥३१८॥

नय प्रमाण नहीं हतत हैं, तुम परकाशे अर्थ।
शिवसुख के साधन विषैं, नहीं गिनत हैं व्यर्थ॥

ॐ ह्रीं अर्हं अव्याहतार्थाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥३१९॥

करै पवित्र सु आत्मा, अशुभ कर्ममल खोय।
पहुँचावै ऊँची सुगति, तुम दिखलायो सोय॥

ॐ ह्रीं अर्हं पुण्यवाचे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥३२०॥

तत्त्वारथ तुम भासियो, सम्यक् विषैं प्रधान।
मिथ्या जहर निवारणं अमृत पान समान॥

ॐ ह्रीं अर्हं अर्थवाचे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥३२१॥

देव अतिशयसों खिरत ही, अक्षरार्थ मय होय।
दिव्यध्वनि निश्चयकरै, संशय तम को खोय॥

ॐ ह्रीं अर्हं अर्द्धमागधीयुक्तये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥३२२॥

सब जीवन को इष्ट है, मोक्ष निजानन्द वास।
सो तुमने दिखलाइयो, संशय मोह विनाश॥

ॐ ह्रीं अर्हं इष्टवाचे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥३२३॥

नय प्रमाण की कहत हैं, द्रव्य पर्याय सु भेद।
अनेकान्त साधे सही, वस्तु भेद निरखेद॥

ॐ ह्रीं अर्हं अनेकांतदर्शिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥३२४॥

दुर्नय कहत एकांत को, ताको अन्त कराय।
सम्यक्मति प्रकटाइयो, पूजूँ तिनके पाय॥

ॐ ह्रीं अर्हं दुर्नयांतकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥३२५॥

एक पक्ष मिथ्यात्व है, ताको तिमिर निवार।
स्याद्वाद सम न्यायतें, भविजन तारे पार॥

ॐ ह्रीं अर्हं एकांतध्वांतभिदे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥३२६॥

जो है सो निज भाव में, रहै सदा निरवार।
मोक्ष साध्य में सार है, सम्यक् विषै अपार॥

ॐ ह्रीं अर्हं तत्त्ववाचे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥३२७॥

निज गुण निज परयाय में, सदा रहो निरभेद।
शुद्ध बुद्ध अव्यक्त हो, पूजूँ हूँ निरखेद॥

ॐ ह्रीं अर्हं पृथक्कृते नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥३२८॥

स्यात्कार उद्योतकर, वस्तु धर्म निरशंस।
तासु ध्वजा निर्विघ्न को, भाषो विदि विध्वंस॥

ॐ ह्रीं अर्हं स्यात्कारध्वजावाचे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥३२९॥

परम्परा इह धर्म को, उपदेशो श्रुत द्वार।
भवि भव सागर-तीर लह, पायो शिवसुखकार॥

ॐ ह्रीं अर्हं वाचे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥३३०॥

द्रव्य दृष्टि नहिं पुरुष-कृत, है अनादि परमान।
सो तुम भाष्यौ हैं सही, यह पर्याय सुजान॥

ॐ ह्रीं अर्हं अपौरुषेयवाचे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥३३१॥

नहीं चलाचल होठ हों, जिस वाणी के होत।
सो मैं बंदूँ हों, किया मोक्षमार्ग उद्योत॥

ॐ ह्रीं अर्हं अचलोष्ठवाचे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥३३२॥

तुम सन्तान अनादि है, शाश्वत नित्य स्वरूप।
तुमको बंदूँ भावसों, पाऊँ शिव-सुख कूप॥

ॐ ह्रीं अर्हं शाश्वताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥३३३॥

हीनादिक वा और विधि, नहीं विरुद्धतात जान।
एक रूप सामान्य है, सब ही सुख की खान॥

ॐ ह्रीं अर्हं अविरुद्धाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥३३४॥

नय विवक्ष तें स धत है, सप्त भंग निरबाध।
सो तुम भाष्यो नमत हूँ, वस्तु रूप को साध॥

ॐ ह्रीं अर्हं सप्तभंगीवाचे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥३३५॥

अक्षर बिन वाणी खिरे, सर्व अर्थ करि युक्त।
भविजन निज सरधानतैं, पावैं जगतें मुक्त॥

ॐ ह्रीं अर्हं अवर्णगिरे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥३३६॥

क्षुद्र तथा अक्षुद्र मय, सब भाषा परकाश।
सुख मुखतें खिरकैं करै, भर्म तिमिर को नाश॥

ॐ ह्रीं अर्हं सर्वभाषामयगिरे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥३३७॥

कहने योग्य समर्थ सब, अर्थ करै परकाश।
तुम वाणी मुखतैं खिरे, करै भरम-तम नाश॥

ॐ ह्रीं अर्हं व्यक्तिगिरे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥३३८॥

तुम वाणी नहीं व्यर्थ है, भंग कभी नहीं होय।
लगातार मुखतैं खिरे, संशय तम को खोय॥

ॐ ह्रीं अर्हं अमोघवाचे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥३३९॥

वस्तु अनन्त पर्याय है, वचन अगोचर जान।
तुम दिखलाये सहज ही, हरी कुमति मतिवान॥

ॐ ह्रीं अर्हं अवाच्यानन्तवाचे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥३४०॥

वचन अगोचर गुण धरो, लहैं न गणधर पार।
तुम महिमा तुमहीं विषैं, मुझ तारो भवपार॥

ॐ ह्रीं अर्हं अवाचे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥३४१॥

तुम सम वचन न कहि सकै, असतमती छद्मस्थ।
धर्म मार्ग प्रकटाइयो, मेटी कुमति समस्त॥

ॐ ह्रीं अर्हं अद्वैतगिरे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥३४२॥

सत्य प्रिय तुम बैन हैं, हित-मित भविजन हेत।
सो मुनिजन तुम ध्यावते, पावैं शिवपुर खेत॥

ॐ ह्रीं अर्हं सूनृतगिरे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥३४३॥

नहीं साँच नहीं झूठ है, अनुभव वचन कहात।
सो तीर्थंकर ध्वनि कही, सत्यारथ सत बात॥

ॐ ह्रीं अर्हं सत्यानुभयगिरे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥३४४॥

मिथ्या अर्थ प्रकाश करि, कुगिरा ताकौ नाम।
सत्यारथ उद्योत कर, सुगिरा ताको नाम॥

ॐ ह्रीं अर्हं सुगिरे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥३४५॥

योजन एक चहूँ दिशा, हो वाणी विस्तार।
श्रवण सुनत भविजन लहैं, आनंद हिये अपार॥

ॐ ह्रीं अर्हं योजनव्यापिगिरे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥३४६॥

निर्मल क्षीर समान हैं, गौर श्वेत तुम बैन।
पाप मलिनता रहित हैं, सत्य प्रकाशक ऐन॥

ॐ ह्रीं अर्हं क्षीरगौरगिरे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥३४७॥

तीर्थ तत्त्व जो नहीं तजैं, तारण भविजन वान।
यातैं तीर्थंकर प्रभू, नमत पाप मल हान॥

ॐ ह्रीं अर्हं तीर्थंतत्त्वगिरे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥३४८॥

उत्तमार्थ पर्याय करि, आत्मतत्त्व को जान।
सो तुम सत्यारथ कहो, मुनि जन उत्तम मान॥

ॐ ह्रीं अर्हं परमार्थंगवे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥३४९॥

भव्यनि को श्रवणनि सुखद, तुम वाणी सुख देन।
मैं बंदूँ हूँ भाव सों, धर्म बतायो ऐन॥

ॐ ह्रीं अर्हं भव्यैकश्रवणगिरे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥३५०॥

संशय विभ्रम मोह को, नाश करो निर्मूल।
सत्य वचन परमाण तुम, छेदत मिथ्या शूल॥

ॐ ह्रीं अर्हं सद्गवे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥३५१॥

तुम वाणी में प्रकट है, सब सामान्य विशेष।
नानाविध सुन तर्क में, संशय रहै न शेष॥

ॐ ह्रीं अर्हं चित्रगवे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥३५२॥

परम कहै उतकृष्ट को, अर्थ होय गम्भीर।
सो तुम वाणी में खिरै, बंदत भवदधि तीर॥

ॐ ह्रीं अर्हं परमार्थगवे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥३५३॥

मोह क्षोभ परशांत हो, तुम वाणी उरधार।
भविजन को संतुष्ट कर, भव आताप निवार॥

ॐ ह्रीं अर्हं प्रशांतगवे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥३५४॥

बारह सभासु प्रश्न कर, समाधान करतार।
मिथ्यामति विध्वंस करि, बंदूँ मन में धार॥

ॐ ह्रीं अर्हं प्राश्निकगिरे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥३५५॥

महापुरुष महादेव हो, सुर नर पूजन योग।
वाणी सुन मिथ्यात तजैं, पावैं शिवसुख भोग॥

ॐ ह्रीं अर्हं याज्युश्रुतये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥३५६॥

शिव मग उपदेशक सुश्रुत, मन में अर्थ विचार।
साक्षात् उपदेश तुम, तारे भविजन पार॥

ॐ ह्रीं अर्हं सुश्रुतये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥३५७॥

तुम समान तिहुँ लोक में, नहीं अर्थ परकाश।
भविजन सम्बोधे सदा, मिथ्यामति को नाश॥

ॐ ह्रीं अर्हं महाश्रुतये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥३५८॥

जो निजात्म-कल्याण में, बरतैं सो उपदेश।
धर्म नाम तिस जानियो, बंदूँ चरण हमेश॥

ॐ ह्रीं अर्हं धर्मश्रुतये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥३५९॥

जिन शासन के अधिपति, शिवमारग बतलाय।
या भविजन संतुष्ट करि, बंदूँ तिनके पाँय॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्रुतपतये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥३६०॥

धारण हो उपदेश के, केवल ज्ञान संयुक्त।
शिवमारग दिखलात हो, तुमको बंदन युक्त॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्रुतधृताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥३६१॥

जैसो है तैसो कहो, परम्पराय सु रीत।
सत्यारथ उपदेश तैं, धर्म मार्ग की रीत॥

ॐ ह्रीं अर्हं ध्रुवश्रुतये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥३६२॥

मोक्ष मार्ग को देखियो, औरन को दिखलाय।
तुम सम हितकारक नहीं, बंदूँ हूँ तिन पाँय॥

ॐ ह्रीं अर्हं निर्वाणमार्गोपदेशकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥३६३॥

स्वर्ग मोक्ष मारग कहो, यति श्रावक को धर्म।
तुमको बन्दत सुख महा, लहै ब्रह्म पद पर्म॥

ॐ ह्रीं अर्हं यतिश्रावकमार्गदेशकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥३६४॥

तत्त्व अतत्त्वसु जानियो, तुम सब ही परतक्ष।
निज-आतम संतुष्ट हो, देखो लक्ष अलक्ष॥

ॐ ह्रीं अर्हं तत्वमार्गदृशे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥३६५॥

सार तत्त्व वर्णन कियो, अयथार्थ मत नाश।
स्वपर-प्रकाशक हो महा, बंदे तिनको दास॥

ॐ ह्रीं अर्हं सारतत्त्व-यथार्थाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥३६६॥

आप तीर्थ औरन प्रति, सर्व तीर्थ करतार।
उत्तम शिवपुर पहुँचना, यही विशेषण सार॥

ॐ ह्रीं अर्हं परमोत्तमतीर्थकृताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥३६७॥

दृष्टा लोकालोक के, रेखा हस्त समान।
युगपत सबको देखिये, कियो भर्म तम हान॥

ॐ ह्रीं अर्हं दृष्टाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥३६८॥

जिनवाणी के रसिक हो, तासों रति दिन रैन।
भोगोपभोग करो सदा, बंदत ह्वै सुख चैन॥

ॐ ह्रीं अर्हं वाग्मीश्वराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥३६९॥

जो संसार समुद्र से, पार करत सो धर्म।
तुम उपदेश्या धर्म कूँ, नमत मिटै भव भर्म॥

ॐ ह्रीं अर्हं धर्मशासनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥३७०॥

धर्म रूप उपदेश है, भवि जीवन हितकार।
मैं बंदूँ तिनको सदा, करौ भवार्णव पार॥

ॐ ह्रीं अर्हं धर्मदेशकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥३७१॥

सब विद्या के ईश हो, पूरन ज्ञान सुजान।
तिनको बंदूँ भाव से, पाऊँ ज्ञान महान॥

ॐ ह्रीं अर्हं वागीश्वराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥३७२॥

सुमति नार भरतार को, कुमति कुसौत विडार।
मैं पूजूँ हूँ भाव सों, पाऊँ सुमती सार॥

ॐ ह्रीं अर्हं त्रयीनाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥३७३॥

धर्म अर्थ अरु मोक्ष के, हो दाता भगवान।
मैं नित-प्रति पायन परूँ, देहु परम कल्याण॥

ॐ ह्रीं अर्हं त्रिभंगीशाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥३७४॥

गिरा कहै जिन वचन को, तिसका अन्त सु धर्म।
मोक्ष करै भवि-जनन को, नाशै मिथ्या भर्म॥

ॐ ह्रीं अर्हं गिरांपतये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥३७५॥

जाकी सीमा मोक्ष है, पूरण सुख स्थान।
शरणागत को सिद्ध है, नमूँ सिद्ध धरि ध्यान॥

ॐ ह्रीं अर्हं सिद्धांगाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥३७६॥

नय-प्रमाणसों सिद्ध है, तुम वाणी रवि सार।
मिथ्या तिमिर निवार कैं, करै भव्य जन पार॥

ॐ ह्रीं अर्हं सिद्धवाङ्मयाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥३७७॥

निज पुरुषारथ साधकैं, सिद्ध भये सुखकार।
मन वच तन करि मैं नमूँ, करो जगतसैं पार॥

ॐ ह्रीं अर्हं सिद्धाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥३७८॥

सिद्ध करै निज अर्थ को, तुम शासन हितकार।
भविजन मानै सरदहै, करै कर्म रज छार॥

ॐ ह्रीं अर्हं सिद्धशासनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥३७९॥

तीन लोक में सिद्ध है, तुम प्रसिद्ध सिद्धान्त।
अनेकान्त परकाश कर, नाशै मिथ्या ध्वांत॥

ॐ ह्रीं अर्हं जगद्प्रसिद्धसिद्धांताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥३८०॥

ओंकार यह मंत्र है, तीन लोक परसिद्ध।
तुम साधक कहलात हो, जपत मिलै नवनिद्ध॥

ॐ ह्रीं अर्हं सिद्धमंत्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥३८१॥

सिद्ध यज्ञ को कहत है, संशय विभ्रम नाश।
मोक्षमार्ग में ले धरै, निजानन्द परकाश॥

ॐ ह्रीं अर्हं सिद्धवाचे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥३८२॥

मोहरूप मलसों दुरी, वाणी कही पवित्र।
भव्य स्वच्छता धारिके, लहै मोक्ष पद तत्र॥

ॐ ह्रीं अर्हं शुचिवाचे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥३८३॥

कर्ण विषय में होत ही, करै आत्म-कल्याण।
तुम वाणी शुचिता धरै, नमें, 'सन्त' धरि ध्यान॥

ॐ ह्रीं अर्हं शुचिश्रवसे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥३८४॥

वचन अगोचर पद धरो, कहते पंडित लोग।
तुम महिमा तुमहीं विषैं, सदा बंदने योग्य॥

ॐ ह्रीं अर्हं निरुक्तोक्ताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥३८५॥

सुर नर मानें आन सब, तुम आज्ञा सिर धार।
मानों तंत्र विधान करि, बाँधे एक लगार॥

ॐ ह्रीं अर्हं तंत्रकृते नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥३८६॥

जाकरि निश्चय कीजिए, वस्तु प्रमेय अपार।
सो तुमसे परगट भयो, न्याय-शास्त्र रुचि धार॥

ॐ ह्रीं अर्हं न्यायशास्त्रकृते नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥३८७॥

गुण अनन्त पर्याय युत, द्रव्य अनन्तानन्त।
युगपति जानो श्रेष्ठ युत, धरो महा सुखवंत॥

ॐ ह्रीं अर्हं महाज्येष्ठाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥३८८॥

तुम पद पावै सो महा, तुम गुण पार लहाय।
शिवलक्ष्मी के नाथ हो, पूजूँ तिनके पाँय॥

ॐ ह्रीं अर्हं महानन्दाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥३८९॥

तुम सम कविवर जगत में, और न दूजो कोय।
गणधर से श्रुतकार भी, अर्थ लहैं नहीं सोय॥

ॐ ह्रीं अर्हं कवीन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥३९०॥

हित करता षट्काय के, महा इष्ट तुम बैन।
तुमको बंदूँ भावसों, मोक्ष महासुख दैन॥

ॐ ह्रीं अर्हं महेष्टाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥३९१॥

मोक्ष दान दातार हो, तुम सम कौन महान।
तीन लोक तुमको जजैं, मन में आनंद ठान॥

ॐ ह्रीं अर्हं महानंददात्रे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥३९२॥

द्वादशांग श्रुत को रचैं, गणधर से कविराज।
तुम आज्ञा शिर धारके, नमूँ निजातम काज॥

ॐ ह्रीं अर्हं कवीश्वराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥३९३॥

देवा महा ध्वनि करत हैं, तुम सन्मुख धर भाव।
केवल अतिशय कहत हैं, मैं पूजूँ युत चाव॥

ॐ ह्रीं अर्हं दुंदुभीश्वराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥३९४॥

इन्द्रादिक नित पूजते, भक्ति पूर्व शिर नाय।
त्रिभुवन नाथ कहातहो, हम पूजत नित पाँय।

ॐ ह्रीं अर्हं त्रिभुवननाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥३९५॥

गणी मुनीश फनीशपति, कल्पेन्द्रन के नाथ।
अहमिन्द्रन के नाथ हो, तुमहि नमूँ धरि माथ॥

ॐ ह्रीं अर्हं महानाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥३९६॥

भिन्न-भिन्न देख्यो सकल, लोकालोक अनन्त।
तुम सम दृष्टि न और की, तुमैं नमें नित 'सन्त'॥

ॐ ह्रीं अर्हं परदृष्टे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥३९७॥

सब जग के भरतार हो, मुनिगण में परधान।
तुमको पूजैं भावसों, होत सदा कल्याण॥

ॐ ह्रीं अर्हं जगत्पतये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥३९८॥

श्रावक या मुनिराज हो, तुम आज्ञा शिर धार।
वरतैं धर्म पुरुषार्थ में, पूजत हूँ सुखकार॥

ॐ ह्रीं अर्हं स्वामिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥३९९॥

धर्म कार्य करता सही, हो ब्रह्मा परमार्थ।
मालिक हो तिहुँ लोक के, पूजनीक सत्यार्थ॥

ॐ ह्रीं अर्हं कर्त्रे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥४००॥

तीन लोक के नाथ हो, शरणागत प्रतिपाल।
चार संघ के अधिपती, पूजूँ हूँ नमि भाल॥

ॐ ह्रीं अर्हं चतुर्विघसंघाधिपतये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥४०१॥

तुम सम और विभव नहीं, धरो चतुष्ट अनंत।
क्यों न करो उद्धार अब, दास कहावै 'सन्त'॥

ॐ ह्रीं अर्हं अद्वितीयविभवधारकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥४०२॥

जामें विघन न हो कभी, ऐसी श्रेष्ठ विभूत।
पाई निज पुरुषार्थ करि, पूजन शुभ करतूत॥

ॐ ह्रीं अर्हं प्रभवे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥४०३॥

तुम सम शक्ति न और की, शिवलक्ष्मी को पाय।
भौगै सुख स्वाधीन कर, बंदूँ जिनके पाय॥

ॐ ह्रीं अर्हं अद्वितीयशक्तिधारकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥४०४॥

तुमसे अधिक न और में, पुरुषारथ कहुँ पाइ।
हो अधीश सब जगत के, बंदूँ जिनके पाँइ॥

ॐ ह्रीं अर्हं अधीश्वराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥४०५॥

अग्रेश्वर चउ संघ के, शिवनायक शिरमौर।
पूजत हूँ नित भावसों, शीश दोऊ कर जोर॥

ॐ ह्रीं अर्हं अधीशाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥४०६॥

सहज सुभाव प्रयत्न बिन, तीन लोक आधीश।
शुद्ध सुभाव विराजते, बन्दूँ पद धर शीश॥

ॐ ह्रीं अर्हं सर्वाधीशाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥४०७॥

क्षायक सुमति सुहावनी, बीजभूत तिस जान।
तुमसें शिवमारग चलै, बंदूँ धरि ध्यान॥

ॐ ह्रीं अर्हं अधीशित्रे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥४०८॥

स्वयंबुद्ध शिवनाथ हो, धर्मतीर्थ करतार।
तुम सम सुमति न को धरै, मैं बंदूँ निरधार॥

ॐ ह्रीं अर्हं धर्मतीर्थकर्त्रे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥४०९॥

पूरण शक्ति सुभाव धर, पूजत ब्रह्म प्रकाश।
पूरण पद पायो प्रभू, पूजत पाप विनाश॥

ॐ ह्रीं अर्हं पूर्णपदप्राप्ताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥४१०॥

तुमसे अधिक न और है, त्रिभुवन ईश कहाय।
तीन लोक अत्यन्त सुख, पायो बंदूँ ताय॥

ॐ ह्रीं अर्हं त्रिलोकाधिपतये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥४११॥

तीन लोक पूजत चरण, ईश्वर तुमको जान।
मैं पूजों हों भावसों, सबसे बड़े महान॥

ॐ ह्रीं अर्हं ईशाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥४१२॥

सूरज सम परकाश कर, मिथ्यातम परिहार।
भविजन कमल प्रबोध को, पायो निज हितकार॥

ॐ ह्रीं अर्हं ईशानाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥४१३॥

क्रीडा करि शिवमार्ग में, पाय परमपद आप।
आज्ञा भंग न हो कभी, बंदत नाशे पाप॥

ॐ ह्रीं अर्हं इन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥४१४॥

उत्तम हो तिहुँ लोक में, सबके हो सिरताज।
शरणागत प्रतिपाल हो, पूजूँ आतम काज॥

ॐ ह्रीं अर्हं त्रिलोकोत्तमाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥४१५॥

अधिक भूति के हो धनी, सुखी सर्व निरधार।
सुरनर तुम पद को लहैं, पूजत हूँ सुखकार॥

ॐ ह्रीं अर्हं अधिभुवे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥४१६॥

तीन लोक कल्याणकर, धर्म मार्ग बतलाय।
सब देवन के देव हो, महादेव सुखदाय॥

ॐ ह्रीं अर्हं महेश्वराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥४१७॥

महा ईश महाराज हो, महा प्रताप धराय।
महा जीव पूजें चरण, सब जन शरण सहाय॥

ॐ ह्रीं अर्हं महेशाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥४१८॥

परम कहो उत्कृष्ट को, धर्म तीर्थ बरताय।
परमेश्वर यातैं भये, बंदूँ तिनके पाँय॥

ॐ ह्रीं अर्हं परमेश्वराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥४१९॥

तुम समान कोई नहीं, जग ईश्वर जगनाथ।
महा विभव ऐश्वर्य को, धरो नमूँ निज माथ॥

ॐ ह्रीं अर्हं महेशित्रे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥४२०॥

चार प्रकारन के सदा, देव तुम्हैं शिर नाय।
सब देवन में श्रेष्ठ हो, नमूँ युगल तुम पाँय॥

ॐ ह्रीं अर्हं अधिदेवाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥४२१॥

तुम समान नहिं देव अरु, तुम देवन के देव।
यों महान पदवी धरौ, तुम पूजत हूँ एव॥

ॐ ह्रीं अर्हं महादेवाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥४२२॥

शिवमारग तुम में सही, देव पूजने योग।
सहचारी तुम सुगुण हैं, और कुदेव अयोग॥

ॐ ह्रीं अर्हं देवाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥४२३॥

तीन लोक पूजत चरण, तुम आज्ञा शिर धार।
त्रिभुवन ईश्वर हो सही, मैं पूजूँ निरधार॥

ॐ ह्रीं अर्हं त्रिभुवनेश्वराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥४२४॥

विश्वपती तुमको नमैं, निज कल्याण विचार।
सर्व विश्व के तुम पती, मैं पूजूँ उर धार॥

ॐ ह्रीं अर्हं विश्वेशाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥४२५॥

जगत जीव कल्याण कर, लोकालोक अनन्द।
षट्कायिक आह्लादकर, जिम कुमोदनी चंद॥

ॐ ह्रीं अर्हं विश्वभूतेशाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥४२६॥

इन्द्रादिक जे विश्वपति, तुमको पूजत आन।
यातैं तुम विश्वेश सो, साँच नमूँ धर ध्यान॥

ॐ ह्रीं अर्हं विश्वेशाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥४२७॥

विश्व बन्ध दृढ़ तोड़ के, विश्व शिखर ठहराय।
चरण कमल तल जगत है, यूँ सब पूजत पाँय॥

ॐ ह्रीं अर्हं विश्वेश्वराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥४२८॥

शिवमारग की रीति तुम, बरतायो शुभ योग।
तिहुँ काल तिहुँ लोक में, और कुनीति अयोग॥

ॐ ह्रीं अर्हं अधिराजे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥४२९॥

लोक तिमिर हर सूर्य हो, तारण लोक जिहाज।
लोकशिखर राजत प्रभू, मैं बन्दूँ हित काज॥

ॐ ह्रीं अर्हं लोकेश्वराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥४३०॥

तीन लोक प्रतिपाल हो, तीन लोक हितकार।
तीन लोक तारण तरण, तीन लोक सरदार॥

ॐ ह्रीं अर्हं लोकपतये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥४३१॥

लोक-पूज्य सुखकार हो, पूजत हैं हित धार।
मैं पूजों नित भाव सों, करो भवार्णव पार॥

ॐ ह्रीं अर्हं लोकनाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥४३२॥

पूजनीक जग में सही, तुम्हैं कहैं सब लोग।
धर्म मार्ग प्रगटित कियो, यातैं पूजन योग॥

ॐ ह्रीं अर्हं जगपूज्याय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥४३३॥

ऊरध अधो सु मध्य है, तीन भाग यह लोक।
तिनमें तुम उत्कृष्ट हो, तुम्हैं देत नित धोक॥

ॐ ह्रीं अर्हं त्रिलोकनाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥४३४॥

तुम समान समरथ नहीं, तीन लोक में और।
स्वयं शिवालय राजते, स्वामी हो शिरमौर॥

ॐ ह्रीं अर्हं लोकेशाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥४३५॥

जगत नाथ जग ईश हो, जगपति पूजें पाँय।
मैं पूजूँ नित भाव युत, तारण तरण सहाय॥

ॐ ह्रीं अर्हं जगन्नाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥४३६॥

महा भूति इस जगत में, धरत हो निरभंग।
सब विभूति जग जीति कैं, पायो सुख सरवंग॥

ॐ ह्रीं अर्हं जगत्प्रभवे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥४३७॥

मुनि मन करण पवित्र हो, सब विभाव को नाश।
तुम को अंजुलि जोरकर, नमूँ होत अघ नाश॥

ॐ ह्रीं अर्हं पवित्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥४३८॥

मोक्ष रूप परधान हो, ब्रह्मज्ञान परवीन।
बंध रहित शिव-सुख सहित, नमैं 'सन्त' आधीन॥

ॐ ह्रीं अर्हं पराक्रमाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥४३९॥

जामें जन्म-मरण नहीं, लोकोत्तर कियो वास।
अचल सुथिर राजै सदा, निजानंद परकाश॥

ॐ ह्रीं अर्हं परत्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥४४०॥

मोहादिक रिपु जीत के, विजयवन्त कहलाय।
जैत्र नाम परसिद्ध है, बंदूँ तिनके पाय॥

ॐ ह्रीं अर्हं जैत्रे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥४४१॥

रक्षक हो षट् कार्य के, कर्म शत्रु क्षयकार।
विजय लक्ष्मी नाथ हो, मैं पूजूँ सुखकार॥

ॐ ह्रीं अर्हं जिष्णवे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥४४२॥

करता हो विधि कर्म के, हरता पाप विशेष।
पुन्य-पाप सु विभाग कर, भ्रम नहीं राखो लेश॥

ॐ ह्रीं अर्हं कर्त्रे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥४४३॥

स्वानंद-ज्ञान विनाश बिन, अचल सुथिर है राज।
अविनाशी अविकार हो, बंदूँ निजहित काज॥

ॐ ह्रीं अर्हं विस्मरणीय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥४४४॥

इन्द्रादिक पूजित चरन, महा भक्ति उर धार।
तुम महान ऐश्वर्य को, धारत हो अधिकार॥

ॐ ह्रीं अर्हं प्रभाविष्णवे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥४४५॥

गुण समूह गुरुता धरैं, महा भाग सुख रूप।
तीन लोक कल्याण कर, पूजूँ हूँ शिव भूप॥

ॐ ह्रीं अर्हं भारजिष्णवे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥४४६॥

महा विभव को धरत हैं, हितकारण मितकार।
धर्म-नाथ परमेश हो, पूजत हूँ सुखकार॥

ॐ ह्रीं अर्हं प्रभूष्णवे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥४४७॥

बिन कारण असहाय हो, स्वयं प्रभा अविरुद्ध।
तुमको बंदूँ भावसों, निज आतम कर शुद्ध॥

ॐ ह्रीं अर्हं स्वयंप्रभाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥४४८॥

लोकवास को नाश कर, लोक सम्बन्ध निवार।
अचल विराजैं शिवपुरी, पूजत हूँ उर धार॥

ॐ ह्रीं अर्हं लोकजिते नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥४४९॥

विश्व नाम संसार है, जन्म-मरण सो होय।
सोई व्याधि विनासियो, जजूँ जोड़ कर दोय॥

ॐ ह्रीं अर्हं विश्वजिते नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥४५०॥

विश्व कषाय निवार के, जग सम्बन्ध विनाश।
जनम-मरण बिन ध्रुव लसै, नमूँ ज्ञान परकाश॥

ॐ ह्रीं अर्हं विश्वजेत्रे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥४५१॥

विश्व-वास तुम जीतियो, विश्व नमावै शीश।
पूजत हैं हम भक्ति सों, जयवन्तो जगदीश॥

ॐ ह्रीं अर्हं विश्वजिते नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥४५२॥

इन्द्रादिक जिनको नमें, ते तुम शीश नवाय।
विश्वजीत तुम नाम है, शरणागत सुखदाय।।

ॐ ह्रीं अर्हं विश्वजित्वराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।४५३।।

तीन लोक की लक्ष्मी, तुम चरणांबुज ठौर।
यातैं सब जग जीति के, राजत हो शिरमौर।।

ॐ ह्रीं अर्हं जगज्जेत्रे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।४५४।।

तीन लोक कल्याण कर, कर्म शत्रु को जीत।
भव्यन प्रति आनंद कर, मेटत तिनकी भीति।।

ॐ ह्रीं अर्हं जगज्जिष्णवे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।४५५।।

जग जीवन को अन्ध कर, फैलो मिथ्या घोर।
धर्म मार्ग प्रकटाय कर, पहुँचायो शिव ठौर।।

ॐ ह्रीं अर्हं जगन्नेत्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।४५६।।

मोहादिक जिन जीतियो, सोई जग में नाम।
सो तुम पद पायो महा, तुम पद करूँ प्रणाम।।

ॐ ह्रीं अर्हं जगजयिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।४५७।।

जो तुम धर्म प्रकट करि, जिय आनन्दित होय।
अग्र भये कल्यान कर, तुम पद प्रणमूँ सोय।।

ॐ ह्रीं अर्हं अग्रण्ये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।४५८।।

रक्षा करि षट् काय की, विषय-कषाय न लेश।
त्रास हरो जमराज को, जयवन्तो गुण शेष।।

ॐ ह्रीं अर्हं दयामूर्तये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।४५९।।

सत्य असत्य लखन करै, सोई नेत्र कहाय।
पुद्गल नेत्र न नेत्र हो, साँचे नेत्र सुखाय।।

ॐ ह्रीं अर्हं दिव्यनेत्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।४६०।।

सुर नर मुनि तुम ज्ञानतैं, जानैं निज कल्याण।
ईश्वर हो सब जगत के, आनंद संपत्ति खान।।

ॐ ह्रीं अर्हं अधीश्वराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।४६१।।

धर्म्माभास मनोक्त के, मूल नाश कर दीन।
सत्य मार्ग बतलाइयो, कियो भव्य सुख लीन॥

ॐ ह्रीं अर्हं धर्मनायकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।४६२।।

ऋद्धिन में परसिद्ध है, केवल ऋद्धि महान।
सो तुम पायो सहज ही, योगीश्वर मुनि मान॥

ॐ ह्रीं अर्हं ऋद्धीशाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।४६३।।

जो प्राणी संसार में, तिन सबके हितकार।
आनंद सों सब नमत हैं, पावैं भवदधि पार॥

ॐ ह्रीं अर्हं भूतनाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।४६४।।

प्राणिन के भरतार हो, दुख टारन सुखकार।
तुम आश्रय करि जीव सब, आनंद लहैं अपार॥

ॐ ह्रीं अर्हं भूतभर्त्रे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।४६५।।

सत्य धर्म के मार्ग हो, ज्ञान मात्र निरशंस।
तुम ही आश्रय पाय के, रहै न अघ को अंश॥

ॐ ह्रीं अर्हं जगत्पात्रे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।४६६।।

अतुल वीर्य स्वशक्ति हो, जीते कर्म जरार।
तुम सम बल नहीं और में, होउ सहाय अबार॥

ॐ ह्रीं अर्हं अतुलबलाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।४६७।।

धर्म मूर्ति धरमातमा, धर्म तीर्थ बरताय।
स्वसुभाव सो धर्म है, पायो सहज उपाय॥

ॐ ह्रीं अर्हं वृषाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।४६८।।

हिंसा को वर्जित कियो, जे अपराध महान।
परिग्रह कर आरंभ के, त्यागी श्री भगवान॥

ॐ ह्रीं अर्हं परिग्रहत्यागीजिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।४६९।।

सर्व सिद्ध तुम सुलभ कर, पायो स्वयं उपाय।
साँचे हो वश करण को, जग में मंत्र कराय॥

ॐ ह्रीं अर्हं मंत्रकृते नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।४७०।।

जितने कछु शुभ चिन्ह हैं, दीप्त अशेष स्वरूप।
शुभ लक्षण सोहत अति, सहजे तुम शिवभूप॥

ॐ ह्रीं अर्हं शुभलक्षणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥४७१॥

लोक विषैं तुम मार्ग को, मानत हैं बुधवन्त।
तर्क हेतु करुणा लिये, यातैं माने 'सन्त'॥

ॐ ह्रीं अर्हं लोकाध्यक्षाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥४७२॥

काहू के वश में नहीं, काहू नमत न शीश।
कठिन रीति धारैं प्रभु, नमूँ सदा जगदीश॥

ॐ ह्रीं अर्हं दुरोध्रष्टाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥४७३॥

दासनि के प्रतिपाल कर, शरणागति हितकर।
भवि दुखियन को पोष कर, दियो अखै पदसार॥

ॐ ह्रीं अर्हं भव्यबन्धवे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥४७४॥

निराकरण करि कर्म को, सरल सिद्धगति धार।
शिवथल जाय सु वास लहि, धर्मद्रव्य सहकार॥

ॐ ह्रीं अर्हं निरस्तकर्माय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥४७५॥

मुनि ध्यावैं पावैं सुपद, निकट भव्य धरि ध्यान।
पावें निज कल्याण नित, ध्यान योग तुम मान॥

ॐ ह्रीं अर्हं परमध्येयजिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥४७६॥

रक्षक हो जग के सदा, धर्म दान दातार।
पोषित हो सब जीव के, बंदूँ भाव लगार॥

ॐ ह्रीं अर्हं जगत्तापहराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥४७७॥

मोह प्रचंड बली जयो, अतुल वीर्य भगवान।
शीघ्र गमन करि शिव गये, नमूँ हेत कल्याण॥

ॐ ह्रीं अर्हं मोहारिजिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥४७८॥

तीन लोक शिरमौर तुम, सब पूजत हरषाय।
परमेश्वर हो जगत के, बंदत हूँ तिन पाय॥

ॐ ह्रीं अर्हं त्रिजगत्परमेश्वराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥४७९॥

लोक शिखर पर अचल नित, राजत हैं तिहुँ काल।
सर्वोत्तम आसन लियो, लोक शिरोमणि भाल॥

ॐ ह्रीं अर्हं विश्वासिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥४८०॥

विश्वभूति प्राणीन के, ईश्वर हैं भगवान।
सबके शिर पर पग धरैं, सर्व आन तिन मान॥

ॐ ह्रीं अर्हं विश्वभूतेशाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥४८१॥

मोक्ष संपदा होत ही, नित अक्षय ऐश्वर्य।
कौन मूढ़ कौड़ी लहै, सर्वोत्तम धनवर्य॥

ॐ ह्रीं अर्हं विभवाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥४८२॥

त्रिभुवन ईश्वर हो तुम्हीं, और जीव हैं रंक।
तुम तज चाहै और को, ऐसो कौ बुध बंक॥

ॐ ह्रीं अर्हं त्रिभुवनेश्वराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥४८३॥

उत्तरोत्तर तिहुँ लोक में, दुर्लभ लब्धि कराय।
तुम पद दुर्लभ कठिन है, महा भाग सो पाय॥

ॐ ह्रीं अर्हं त्रिजगदुर्लभाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥४८४॥

बढ़वारी परणामसों, पूर्ण अभ्युदय पाय।
भई अनंत विशुद्धता, भये विशुद्ध अथाय॥

ॐ ह्रीं अर्हं अभ्युदयाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥४८५॥

तीन लोक मंगलकरण, दुखहारण सुखकार।
हमको मंगल द्यो महा, पूजों बारम्बार॥

ॐ ह्रीं अर्हं त्रिजगन्मंगलोदयाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥४८६॥

आप धर्म के सामने, और धर्म लुप जायें।
धर्मचक्र आयुध धरो, शत्रु नाश तव पायें॥

ॐ ह्रीं अर्हं धर्मचक्रायुधाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥४८७॥

सत्य शक्ति तुम ही सही, सत्य पराक्रम जोर।
है प्रसिद्ध इस जगत में, कर्म शत्रु शिरमोर॥

ॐ ह्रीं अर्हं सद्योजाताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥४८८॥

मंगलमय मंगलकरण, तीन लोक विख्यात।
सुमरण ध्यानसु करत ही, सकल पाप नशि जात॥

ॐ ह्रीं अर्हं त्रिलोकमंगलाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥४८९॥

द्रव्य-भाव दऊ वेद बिन, स्वातम रति सुख मान।
पर-आलिंगन रतिकरण, निरइच्छुक भगवान॥

ॐ ह्रीं अर्हं अवेदाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥४९०॥

घातिरहित स्व-पर दया, निजानन्द रसलीन।
सुखसों अवगाहन करैं, 'सन्त' चरण आधीन॥

ॐ ह्रीं अर्हं अप्रतिघाताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥४९१॥

निजानन्द स्व-देश में, खंड खंड नहीं होय।
पूरण अविनाशी सुखी, पूजत हूँ भ्रम खोय॥

ॐ ह्रीं अर्हं अच्छेद्याय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥४९२॥

सिद्ध समान सु शुभ नहीं, और नाम विख्यात।
कभूँ न जग में जन्म फिर, सोई दृढ़ कहलात॥

ॐ ह्रीं अर्हं दृढ़ीयसे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥४९३॥

जन्म-मरण के कष्ट से, सर्व लोक भयवंत।
ताको नाश अभय करण, तुम्हें नमें जिय 'सन्त'॥

ॐ ह्रीं अर्हं अभयंकराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥४९४॥

ज्ञानानन्द स्व-लक्ष्मी, भोगत हो निरखेद।
महा भोग यातैं भये, हैं स्वाधीन अवेद॥

ॐ ह्रीं अर्हं महाभोगाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥४९५॥

असाधारण असमान हो, सर्वोत्तम उत्कृष्ट।
परसों भिन्न अखिन्न हो, पायो पद अविनष्ट॥

ॐ ह्रीं अर्हं निरौपम्याय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥४९६॥

दश लक्षण शुभ धर्म के, राजसम्पदा भोग।
नायक हो निज धर्म के, पुजि नमैं तिहुँ योग॥

ॐ ह्रीं अर्हं धर्मसाम्राज्यनायकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥४९७॥

अधिपति स्वामि स्वभाव निज, परकृत भाव विडार।
तिहूँ वेद रति मान बिन, संपूरण सुखकार॥

ॐ ह्रीं अर्हं निर्वेदप्रवृत्ताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥४९८॥

यथायोग्य पद पाइयो, यथायोग्य संपूर्ण।
नमूँ त्रियोग संभारिके, करूँ पाप मल चूर्ण॥

ॐ ह्रीं अर्हं संपूर्णयोगिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥४९९॥

सब इन्द्रिय मन रोक कें, आरोहण तिस भाव।
श्रेणी उच्च चढ़ाव में, तत्पर अन्त सु पाव॥

ॐ ह्रीं अर्हं समारोहणतत्पराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥५००॥

एकाश्रय निज धर्म में, परसों भिन्न सदीव।
सहज स्वभाव विराजते, सिद्धराज सब जीव॥

ॐ ह्रीं अर्हं सहजसिद्धरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥५०१॥

राग द्वेष बिन सहज ही, राजत शुद्ध स्वभाव।
मन विकल्प नहीं भाव में, पूजत हों धरि चाव॥

ॐ ह्रीं अर्हं सामायिकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥५०२॥

निजानन्द निज लक्ष्मी, भोगत ग्लानि न होय।
अतुल वीर्य स्वभावतैं, परमादी नहीं होय॥

ॐ ह्रीं अर्हं निष्प्रमादाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥५०३॥

है अनादि संतान करि, कभी भयो नहीं आदि।
नित्य शिवालय पूर्णता, बसै जगत अघवादि॥

ॐ ह्रीं अर्हं अकृताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥५०४॥

पर-पदार्थ नहीं इष्ट हैं, निजपद में लवलीन।
विघ्नहरण मंगलकरण, तुम पद मस्तक दीन॥

ॐ ह्रीं अर्हं परमभावाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥५०५॥

नित्य शौच संतोष मय, पर-पदार्थसों रोक।
निश्चय सम्यक् भाव मय, हैं प्रधान द्यूँ धोक॥

ॐ ह्रीं अर्हं प्रधानाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥५०६॥

ज्ञान ज्योति निज धरत हो, निश्चल परम सुठाम।
लोकालोक प्रकाश कर, मैं बंदूँ सुख धाम॥

ॐ ह्रीं अर्हं स्वभासपरभासनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥५०७॥

एक स्थान सु थिर सदा, निश्चय चारित भूप।
शुद्ध उपयोग प्रभावतें, कर्म खिपावन रूप॥

ॐ ह्रीं अर्हं प्राणायामचरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥५०८॥

विषय स्वादसों हट रहैं, इन्द्री मन थिर होय।
निज आतम लवलीन हैं, शुद्ध कहावै सोय॥

ॐ ह्रीं अर्हं शुद्धप्रत्याहाराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥५०९॥

इन्द्री विषय न वश रहै, निज आतम लवलाय।
सो जिनेन्द्र स्वाधीन हैं, बंदूँ तिनके पाय॥

ॐ ह्रीं अर्हं जितेन्द्रियाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥५१०॥

ध्यान विषैं सो धारणा, निज आतम थिर धार।
ताके अधिपति हो महा, भये भवार्णव पार॥

ॐ ह्रीं अर्हं धारणाधीश्वराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥५११॥

रागादिक मल नाशिके, ध्यान सु धर्म लहाय।
अचल रूप राजै सदा, बंदूँ मन वच काय॥

ॐ ह्रीं अर्हं धर्मध्याननिष्ठाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥५१२॥

निजानन्द में मगन हैं, परपद राग निवार।
समदृष्टि राजत सदा, हमें करो भव पार॥

ॐ ह्रीं अर्हं समाधिराजे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥५१३॥

वीतराग निर्विकल्प हैं, ज्ञान उदय निरशंस।
समरसभाव परम सुखी, नमत मिटैं दुख अंश॥

ॐ ह्रीं अर्हं स्फुरितसमरसीभावाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥५१४॥

एकै रूप विराजते, नय विकल्प नहिं ठौर।
वचन अगोचर शुद्धता, पाप विनाशो मोर॥

ॐ ह्रीं अर्हं एकीभावनयरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥५१५॥

परम दिगम्बर मुनि महा, समदृष्टी मुनिनाथ।
ध्यावैं पावैं परम पद, नमूँ जोर जुग हाथ॥

ॐ ह्रीं अर्हं निर्ग्रंथनाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥५१६॥

योग साधि योगी भये, तिनको इन्द्र महान।
ध्यावत पावत परम पद, पूजत निज कल्याण॥

ॐ ह्रीं अर्हं योगीन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥५१७॥

शिवमारग सिद्धांत के, पार भये मुनि ईश।
तारण-तरण जिहाज हो, तुम्हें नमूँ नित शीश॥

ॐ ह्रीं अर्हं ऋषये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥५१८॥

निज स्वरूप को साधिकर, साधु भये जग माहिं।
निजपर हितकर गुण धरैं, तीन लोक नमि ताहिं॥

ॐ ह्रीं अर्हं साधवे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥५१९॥

रागादिक रिपु जीत के, भये यती शुभ नाम।
धर्म धुरंधर परम गुरु, जुगपद करूँ प्रणाम॥

ॐ ह्रीं अर्हं यतये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥५२०॥

पर संपतिसूं विमुख हो, निजपद रुचि करि नेम।
मुनि मन रंजन पद महा, तुम धारत हो ऐम॥

ॐ ह्रीं अर्हं मुनये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥५२१॥

महाश्रेष्ठ मुनिराज हो, निजपद पायौ सार।
महा परम निरग्रन्थ हो, पूजत हूँ मन धार॥

ॐ ह्रीं अर्हं महर्षिणे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥५२२॥

साधु भार दुरगमन है, ताहि उठावन हार।
शिव-मन्दिर पहुँचात हो, महाबली सुखकार॥

ॐ ह्रीं अर्हं साधुधौरेयाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥५२३॥

इन्द्री मन जित जे जती, तिनके हो तुम नाथ।
परम्परा मरजाद धर, देहु हमें निज साथ॥

ॐ ह्रीं अर्हं यतीनाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥५२४॥

चार संघ मुनिराज के, ईश्वर हो परधान।
परहितकर सामर्थ्य हो, निज सम करि भगवान॥

ॐ ह्रीं अर्हं मुनीश्वराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥५२५॥

गणधरादि सेवक महा, तिन आज्ञा शिरधार।
समकित ज्ञान सु लक्ष्मी, पावत हैं निरधार॥

ॐ ह्रीं अर्हं महामुनये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥५२६॥

महामुनि सर्वस्व हो, धर्म मूर्ति सरवांग।
तिनको बंदूँ भाव युत, पाऊँ मैं धर्मांग॥

ॐ ह्रीं अर्हं महामौनिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥५२७॥

इष्टानिष्ट विभाव बिन, समदृष्टि स्वध्यान।
मगन रहें निजपद विषैं, ध्यान रूप भगवान॥

ॐ ह्रीं अर्हं महाध्यानिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥५२८॥

स्व सुभाव नहीं त्याग है, नहीं ग्रहण पर माहिं।
पाप कलाप न आप में, परम शुद्ध नमूँ ताहिं॥

ॐ ह्रीं अर्हं महाव्रतिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥५२९॥

क्रोध प्रकृति विनाश के, धरैं क्षमा निज भाव।
समरस स्वाद सु लहत हैं, बंदूँ शुद्ध स्वभाव॥

ॐ ह्रीं अर्हं महाक्षमाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥५३०॥

मोह रूप सन्ताप बिन, शीतल महा स्वभाव।
पूरण सुख आकुल नहीं, बंदूँ मन धर चाव॥

ॐ ह्रीं अर्हं महाशीतलाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥५३१॥

मन इन्द्रिय के क्षोभ बिन, महाशांति सुख रूप।
निजपद रमण स्वभाव नित, मैं बंदूँ शिव भूप॥

ॐ ह्रीं अर्हं महाशांताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥५३२॥

मन इन्द्रिय को दमन कर, पायो ज्ञान अतीन्द्र।
स्वाभाविक स्वशक्ति कर, बंदूँ भये जीतेन्द्र॥

ॐ ह्रीं अर्हं महोदयाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥५३३॥

पर पदार्थ को क्लेश तजि, व्यापैं निजपद माहिं।
स्वच्छ स्वभाव विराजते, पूजत हूँ नित ताहिं॥

ॐ ह्रीं अर्हं निर्लेपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥५३४॥

संशयादि दृष्टि नहीं, सम्यग्ज्ञान मंझार।
सब पदार्थ प्रत्यक्ष लख, महा तुष्ट सुखकार॥

ॐ ह्रीं अर्हं निर्भ्रांताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥५३५॥

शांतिरूप निज शांति गुण, सो तुमही में पाय।
निज मन शांति सुभाव धर, पूजत हूँ युग पाँय॥

ॐ ह्रीं अर्हं धर्माध्यक्षाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥५३६॥

मुनि श्रावक द्वै धर्म के, तुम अधिपति शिवनाथ।
भविजन को आनंद करि, तुम्हैं नवाऊँ माथ॥

ॐ ह्रीं अर्हं धर्माध्यक्षाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥५३७॥

दया नीति बरताइयो, सुखी किये जगजीव।
कल्पित राग ग्रसित नहीं, जानत मार्ग सदीव॥

ॐ ह्रीं अर्हं दयाध्वजाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥५३८॥

केवल ब्रह्म स्वरूप हो, अन्तर बाह्य अदेह।
ज्ञानज्योतिघन नमत हूँ, मनवचतन धरि नेह॥

ॐ ह्रीं अर्हं ब्रह्मयोनये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥५३९॥

स्वयं बुद्ध अविरुद्ध हो, स्वयं ज्ञान परकाश।
निजपर भाव दिखात हो, दीपक सम प्रतिभास॥

ॐ ह्रीं अर्हं स्वयंबुद्धाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥५४०॥

रागादिक मल नाशियो, महा पवित्र सुखाय।
शुद्ध स्वभाव धरैं करैं, सुरनर थुति न अघाय॥

ॐ ह्रीं अर्हं पूतात्मने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥५४१॥

वीतराग श्रद्धानता, संपूरण वैराग।
द्वेष रहित शुभ गुण सहित, रहुँ सदा पगलाग॥

ॐ ह्रीं अर्हं स्नातकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥५४२॥

माया मद आदिक हरे, भये शुद्ध सुख खान।
निर्मल भाव थकी जजूँ, होत पाप की हान॥

ॐ ह्रीं अर्हं अमदभावाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥५४३॥

अतुल वीर्य जा ज्ञान में, सूर्य समान प्रकाश।
मोक्षनाथ निज धर्म जुत, स्व-ऐश्वर्य विलास॥

ॐ ह्रीं अर्हं परमैश्वर्याय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥५४४॥

मत्सर क्रोध जु ईर्ष्या, पर में द्वेष सुभाव।
सो तुम नाशो सहज ही, निंदित दुषित विभाव॥

ॐ ह्रीं अर्हं वीतमत्सराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥५४५॥

धरम भार सिर धारकर, समाधान परकाज।
तुम सम श्रेष्ठ न धर्म अरु, तारण तरण जिहाज॥

ॐ ह्रीं अर्हं धर्मवृषाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥५४६॥

क्रोध कर्म जड़सैं नसौ, भयो क्षोभ सब दूर।
महा शांति सुखरूप हो, पूजत अघ सब चूर॥

ॐ ह्रीं अर्हं अक्षोभाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥५४७॥

इष्टमिष्ट बादरझरी, विद्युत विधि कर खण्ड।
जिष्णु महाकल्याणकर, शिवमग भाग प्रचण्ड॥

ॐ ह्रीं अर्हं महाविधिखण्डाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥५४८॥

अमृतमय तुम जन्म है, लोक तुष्टताकार।
जन्म कल्याणक इन्द्र कर, क्षीरनीर करधार॥

ॐ ह्रीं अर्हं अमृतोद्भवाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥५४९॥

इन्द्री विषय सुविषहरण, काम पिशाच विडार।
मूर्तीक शुभ मंत्र हो, देव जजैं हित धार॥

ॐ ह्रीं अर्हं मंत्रमूर्तये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥५५०॥

सौम्य दशा प्रकटी घनी, जाति विरोधी जीव।
वैर छांड समभाव धर, सेवत चरण सदीव॥

ॐ ह्रीं अर्हं निर्वैरसौम्यभावाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥५५१॥

पराधीन इन्द्री बिना, राग विरोध निवार।
हो स्वाधीन न कर्ण पर, स्वयं सिद्ध सुखकार॥

ॐ ह्रीं अर्हं स्वतन्त्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥५५२॥

ब्रह्म रूप, नहीं बाहृय तन, संभव ज्ञान स्वरूप।
स्वयं प्रकाश विलास धर, राजत अमल अनूप॥

ॐ ह्रीं अर्हं ब्रह्मसम्भवाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥५५३॥

आनन्दधार सु मगन है, सब विकल्प दुख टार।
पर आश्रित नहीं भाव हैं, पूजूँ आनंद धार॥

ॐ ह्रीं अर्हं सुप्रसन्नाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥५५४॥

परिपूरण गुण सीम है, सर्व शक्ति भण्डार।
तुमसे सुगुण न शेष हैं, जो न होय सुखकार॥

ॐ ह्रीं अर्हं गुणांबुधये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥५५५॥

ग्रहण-त्याग को भाव तज, शुभ वा अशुभ अभेद।
व्याधिकार है वस्तु में, तुम्हें नमूँ निरखेद॥

ॐ ह्रीं अर्हं पुण्यपापनिरोधकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥५५६॥

सूक्षम रूप अलक्ष हैं, गणधर आदि अगम्य।
आप गुप्त परमातमा, इन्द्रिय द्वार अगम्य॥

ॐ ह्रीं अर्हं महागम्यसूक्ष्मरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥५५७॥

अन्तरगुप्त स्व-आत्मरस, ताको पान करात।
पर प्रवेश नहीं रंच है, केवल मग्न सुजात॥

ॐ ह्रीं अर्हं सुगुप्तात्मने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥५५८॥

निजकारक निज कर्णकर, निजपद निज आधार।
सिद्ध कियो निज रस लियो, पूजत हूँ हितकार॥

ॐ ह्रीं अर्हं सिद्धात्मने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥५५९॥

नित्य उदै बिन अस्त हो, पूरण दुति घन आप।
ग्रहै न राहू जास राशि, सो हो हर सन्ताप॥

ॐ ह्रीं अर्हं निरुपल्लवाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥५६०॥

लियो अपूरव लाभ को, अचल भये सुखधाम।
पूज रचैं जे भावसों, पूर्ण होइ सब काम॥

ॐ ह्रीं अर्हं महोदकार्य नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥५६१॥

है प्रशंस तिहुँ लोक में, तुम पुरुषार्थ उपाय।
पायो धर्म सुधाम को, पूजों तिनके पाय॥

ॐ ह्रीं अर्हं महोपायाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥५६२॥

गणधरादि जे जगतपति, तथा सुरेन्द्र सुरीश।
तुमको पूजत भक्ति करि, चरण धरैं निज शीश॥

ॐ ह्रीं अर्हं जगत्पितामहाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥५६३॥

तुम ही सों भवि सुख लहैं, तुम बिन दुख ही पाय।
नेमरूप यही है तुम्हें, महानाम हम गाय॥

ॐ ह्रीं अर्हं महाकारुणिकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥५६४॥

महासुगुण की रास हो, राजत हो गुण रूप।
लौकिकगुण औगुण सही, सब ही द्वेष सरूप॥

ॐ ह्रीं अर्हं शुद्धगुणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥५६५॥

जन्म-मरण आदिक महा, क्लेश ताहि निरवार।
परमसुखी तुमको नमूँ, पाऊँ भवदधि पार॥

ॐ ह्रीं अर्हं महाक्लेशनिवारणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥५६६॥

रागादिक नहीं भाव है, द्रव्य नेह नहीं धार।
दोउ मलिनता छांड़िके, स्वच्छ भये निरधार॥

ॐ ह्रीं अर्हं महाशुचये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥५६७॥

आधि व्याधि नहीं रोग है, नित प्रसन्न निज भाव।
आकुलता बिन शांति-सुख, धारत सहज सुभाव॥

ॐ ह्रीं अर्हं अरुजे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥५६८॥

यथायोग्य पद थिर सदा, यथायोग्य निज लीन।
अविनाशी अविकारी हैं, नमैं 'सन्त' चित दीन॥

ॐ ह्रीं अर्हं सदायोगाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥५६९॥

स्वामृत रस को पान करि, भोगत हैं निज स्वाद।
पर-निमित्त चाहें नहीं, करैं न तिनको याद॥

ॐ ह्रीं अर्हं सदाभोगाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥५७०॥

निर-उपाधि निज धर्म में, सदा रहैं सुखकार।
रत्नत्रय की मूरती, अनागार आगार॥

ॐ ह्रीं अर्हं सदाधृतये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥५७१॥

रागद्वेष नहीं मूल है, है मध्यस्थ स्वभाव।
ज्ञाता दृष्टा जगत के, परसों नहीं लगाव॥

ॐ ह्रीं अर्हं परमौदासीनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥५७२॥

आदि अन्त बिन वहत है, परम धाम निरधार।
अन्तर परत न एक छिन, निज सुख परमाधार॥

ॐ ह्रीं अर्हं शाश्वताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥५७३॥

मूल देह आकृति रहै, हो नहिं अन्य प्रकार।
सत्याशन इम नाम है, पूजूँ भक्ति लगार॥

ॐ ह्रीं अर्हं सत्याशने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥५७४॥

परम शांति सुखमय सदा, क्षोभ रहित तिस स्वामि।
तीनलोक प्रति शांतिकर, तुम पद करूँ प्रणामि॥

ॐ ह्रीं अर्हं शांतिनायकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥५७५॥

काल अनंतानंत करि, रुल्यो जीव जग माहिं।
आत्मज्ञान नहीं पाइयो, तुम पायो है ताहि॥

ॐ ह्रीं अर्हं अपूर्वविद्याय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥५७६॥

यथाख्यात चारित्र को, जानो मानो भेद।
आत्मज्ञान केवल थकी, पायो पद निरभेद॥

ॐ ह्रीं अर्हं योगज्ञायकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥५७७॥

धर्ममूर्ति सर्वस्व हो, राजत शुद्ध स्वभाव।
धर्ममूर्ति तुमको नमूँ, पाऊँ मोक्ष उपाव॥

ॐ ह्रीं अर्हं धर्ममूर्तये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥५७८॥

स्व-आतम परदेश में, अन्य मिलाप न होय।
आकृति है निजधर्म की, निज विभाव को खोय॥

ॐ ह्रीं अर्हं धर्मदेहाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥५७९॥

स्वामी हो निज-आत्म के, अन्य सहाय न पाय।
स्वयं-सिद्ध परमातमा, हम पर होउ सहाय॥

ॐ ह्रीं अर्हं ब्रह्मेशाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥५८०॥

निज पुरुषारथ करि लियो, मोक्ष परम सुखकार।
करना था सो करि चुके, तिष्ठैं सुख आधार॥

ॐ ह्रीं अर्हं कृतकृताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥५८१॥

असाधारण तुम गुण धरत, इन्द्रादिक नहीं पाय।
लोकोत्तम बहु मान्य हो, बंदूँ हूँ युग पाँय॥

ॐ ह्रीं अर्हं गुणात्मकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥५८२॥

तुम गुण परम प्रकाशकर, तीन लोक विख्यात।
सूर्य समान प्रताप धर, निरावरण उघरात॥

ॐ ह्रीं अर्हं निरावरणगुणप्रकाशाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥५८३॥

समय मात्र नहीं आदि हैं, वहैं अनादि अनंत।
तुम प्रवाह इस जगत में, तुम्हें नमैं नित 'सन्त'॥

ॐ ह्रीं अर्हं निर्निमेषाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥५८४॥

योग-द्वार बिन करम रज, चढ़े न निज परदेश।
ज्यों बिन छिद्र न जल ग्रहै, नवका शुद्ध हमेश॥

ॐ ह्रीं अर्हं निराश्रवाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥५८५॥

परम ब्रह्म पद पाइयो, पूरण ज्ञान प्रकाश।
तीन लोक के जीव सब, पूजें चरण निवास॥

ॐ ह्रीं अर्हं महाब्रह्मपतये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥५८६॥

द्रव्य पर्यार्थिक दोऊ नय, साधत वस्तु स्वरूप।
गुण अनंत अवरोधकर, कहत सरूप अनूप॥

ॐ ह्रीं अर्हं सुनयतत्त्वज्ञाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥५८७॥

सूर्य समान प्रकाश कर, कर्म दुष्ट हनि सूर।
शरण गही तुम चरण की, करो ज्ञान दुति पूरि॥

ॐ ह्रीं अर्हं सूरये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥५८८॥

तुम सम और न जगत में, सत्यारथ तत्त्वज्ञ।
सम्यग्ज्ञान प्रभावतैं, हो अदोष सर्वज्ञ॥

ॐ ह्रीं अर्हं तत्त्वज्ञाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥५८९॥

तीन लोक हितकार हो, शरणागति प्रतिपाल।
भव्यनि मन आनंद करि, बंदूँ दीनदयाल॥

ॐ ह्रीं अर्हं महामित्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥५९०॥

समता सुख में मगन हैं, राग द्वेष संक्लेश।
ताको नाशि सुखी भये, युग-युग जिओ जिनेश॥

ॐ ह्रीं अर्हं साम्यभावधारकजिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥५९१॥

निरावरण निज ज्ञान में, संशय विभ्रम नाहिं।
सम्यग्ज्ञान प्रकाशतैं, वस्तु प्रमाण दिखाय॥

ॐ ह्रीं अर्हं प्रक्षीणबन्धाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥५९२॥

एक रूप परकाश कर, दुविधि भाव विनशाय।
पर-निमित्त लवलेश नहीं, बंदूँ तिनके पाँय॥

ॐ ह्रीं अर्हं निर्द्वन्द्वाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥५९३॥

मुनि विशेष स्नातक कहैं, परमातम परमेश।
तुम ध्यावत निर्वाण पद, पावें भविक हमेश॥

ॐ ह्रीं अर्हं स्नातकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥५९४॥

पंच प्रकार शरीर बिन, दीप्त रूप निज रूप।
सुर मुनि मन रमणीय हैं, पूजत हूँ शिवभूप॥

ॐ ह्रीं अर्हं अनंगाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥५९५॥

द्वय प्रकार बन्धन रहित, नित हो मोक्ष सरूप।
भविजन बंध विनाशकर, देहो मोक्ष अनूप॥

ॐ ह्रीं अर्हं निर्वाणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥५९६॥

सगुण रत्न की राश के, आप महा भण्डार।
अगम अथाह विराजते, बंदूँ भाव विचार॥

ॐ ह्रीं अर्हं सागराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥५९७॥

मुनिजन ध्यावैं भावयुत, महा मोक्षप्रद साध।
सिद्ध भये मैं नमत हूँ, चहुँ संघ आराध॥

ॐ ह्रीं अर्हं महासाधवे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥५९८॥

ज्ञान ज्योति प्रतिभास में, रागादिक मल नाहिं।
विशद अनूपम लसत हो, दीप्तज्योति शिवराह॥

ॐ ह्रीं अर्हं विमलाभाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥५९९॥

द्रव्य-भाव मल नाशकर, शुद्ध निरंजन देव।
निज-आतम में रमत हो, आश्रय बिन स्वयमेव॥

ॐ ह्रीं अर्हं शुद्धात्मने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥६००॥

शुद्ध अनन्त चतुष्ट गुण, धरत तथा शिवनाथ।
श्रीधर नाम कहात हो, हरिहर नावत माथ॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीधराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥६०१॥

मरणादिक भय से सदा, रक्षित हैं भगवान।
स्वयं प्रकाश विलास में, राजत सुख की खान॥

ॐ ह्रीं अर्हं मरणभयनिवारणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥६०२॥

राग-द्वेष नहीं भाव में, शुद्ध निरंजन आप।
ज्यों के त्यों तुम थिर रहो, तनक न व्यापै पाप॥

ॐ ह्रीं अर्हं अमलभावाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥६०३॥

भवसागर से पार हो, पहुँचे शिवपद तीर।
भाव सहित तिन नमत हूँ, लहूँ न पुनि भव पीर॥

ॐ ह्रीं अर्हं उद्धरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥६०४॥

अग्निदेव या अग्नि दिश, ताके देव विशेष।
ध्यावत हैं तुम चरणयुग, इन्द्रादिक सुर शेष॥

ॐ ह्रीं अर्हं अग्निदेवाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥६०५॥

विषय-कषाय न रंच हैं, निरावरण निरमोह।
इन्द्री मन को दमन कर, बन्दूँ सुन्दर सोह॥

ॐ ह्रीं अर्हं संयमाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥६०६॥

मोक्षरूप कल्याण कर, सुख-सागर के पार।
महादेव स्वशक्ति धर, विद्या तिय भरतार॥

ॐ ह्रीं अर्हं शिवाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥६०७॥

पुष्प भेंट धर जजत सुर, निज कर अंजुलि जोड़।
कमलापति कर-कमल में, धरैं लक्ष्मी होड़॥

ॐ ह्रीं अर्हं पुष्पांजलये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥६०८॥

पूरण ज्ञानानंदमय, अजर अमर अमलान।
अविनाशी ध्रुव अखिलपद, अधिकारी सब मान॥

ॐ ह्रीं अर्हं शिवगुणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥६०९॥

रोग शोक भय आदि बिन, राजत निज आनन्द।
खेद रहित रति-अरति बिन, विकसत पूरणचंद्र॥

ॐ ह्रीं अर्हं परमोत्साहजिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥६१०॥

जो गुण शक्ति अनन्त है, ते सब ज्ञान मंझार।
एकनिष्ठ आकृति विविध, सोहत हैं अविकार॥

ॐ ह्रीं अर्हं ज्ञानाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥६११॥

परम पूज्य परधान हैं, परम शक्ति आधार।
परम पुरुष परमातमा, परमेश्वर सुखकार॥

ॐ ह्रीं अर्हं परमेश्वराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥६१२॥

दोष अपोष अरोष हो, सम सन्तोष अलोष।
पंच परम पद धारियत, भविजन को परिपोष॥

ॐ ह्रीं अर्हं विमलेशाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥६१३॥

पंचकल्याणक युक्त हैं, समोसरण ले आदि।
इन्द्रादिक नित करत हैं, तुम गुणगण अनुवाद॥

ॐ ह्रीं अर्हं यशोधराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥६१४॥

कृष्ण नाम तीर्थेश हैं, भावी काल कहाय।
सुमति गोपियन संग रमत, निजलीला दर्शाय॥

ॐ ह्रीं अर्हं कृष्णाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥६१५॥

सम्यग्ज्ञान जु सुमति धर, मिथ्या मोह निवार।
परहितकर उपदेश है, निश्चय वा व्यवहार॥

ॐ ह्रीं अर्हं ज्ञानमतये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥६१६॥

वीतराग सर्वज्ञ हैं, उपदेशक हितकार।
सत्यारथ परमाण कर, अन्य सुमति दातार॥

ॐ ह्रीं अर्हं शुद्धमतये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥६१७॥

मायाचार न शल्य है, शुद्ध सरल परिणाम।
ज्ञानानंद स्वलक्ष्मी, भोगत हैं अभिराम॥

ॐ ह्रीं अर्हं भद्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥६१८॥

शील स्वभाव सुजन्म लै, अन्त समय निरवाण।
भविजन आनन्दकार है, सर्व कलुषता हान॥

ॐ ह्रीं अर्हं शांतिजिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥६१९॥

धरम रूप अवतार हो, लोक पाप को भार।
मृतक स्थल पहुँचाइयो, सुलभ कियो सुखकार॥

ॐ ह्रीं अर्हं वृषभाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥६२०॥

अन्तर-बाहिर शत्रु को, निमिष परै नहीं जोर।
विजय लक्ष्मी नाथ हो, पूजूँ द्वय कर जोर॥

ॐ ह्रीं अर्हं अजिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥६२१॥

तीन लोक आनन्द हो, श्रेष्ठ जन्म तुम होत।
स्वर्ग-मोक्ष दातार हो, पावत नहीं कुमौत॥

ॐ ह्रीं अर्हं संभवाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥६२२॥

परम सुखी तुम आप हो, पर आनन्द कराय।
तुमको पूजत भाव सौं, मोक्ष लक्ष्मी पाय॥

ॐ ह्रीं अर्हं अभिनन्दनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥६२३॥

सब कुवादि एकांत को, नाश कियो छिन माहिं।
भविजन मन संशयहरण, और लोक में नाहिं॥

ॐ ह्रीं अर्हं सुमतये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥६२४॥

भविजन मधुकर कमल हो, धरत सुगन्ध अपार।
तीन लोक में विस्तरी, सुयश नाम को धार॥

ॐ ह्रीं अर्हं पद्मप्रभाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥६२५॥

पारस लोहा हेम करि, तुम भव बन्ध निवार।
मोक्ष हेतु तुम श्रेष्ठ गुण, धारत हो हितकार॥

ॐ ह्रीं अर्हं सुपार्श्वाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥६२६॥

तीन लोक आताप हर, मुनि-मन-मोदन चन्द।
लोक प्रिय अवतार हो, पाऊँ सुख तुम बन्द॥

ॐ ह्रीं अर्हं चन्द्रप्रभाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥६२७॥

मन मोहन सोहन महा, धारैं रूप अनूप।
दरशत मन आनन्द हो, पायो निज रस कूप॥

ॐ ह्रीं अर्हं पुष्पदंताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥६२८॥

भव भव दाह निवार कर, शीतल भए जिनेश।
मानो अमृत सींचियो, पूजत सदा सुरेश॥

ॐ ह्रीं अर्हं शीतलनाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥६२९॥

तीर्थंकर श्रेयांस हम, देहो श्री शुभ भाग।
श्रीसु अनन्त चतुष्ट हो, हरो सकल दुरभाग॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्रेयांशनाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥६३०॥

त्रस नाड़ी या लोक में, तुम ही पूज्य प्रधान।
तुमको पूजत भावसों, पाऊँ सुख निरवाण॥

ॐ ह्रीं अर्हं वासुपूज्याय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥६३१॥

द्रव्य भाव मल रहित हैं, महा मुनिन के नाथ।
इन्द्रादिक पूजत सदा, नमूँ पदांबुज माथ॥

ॐ ह्रीं अर्हं विमलनाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥६३२॥

जाको पार न पाइयो, गणधर और सुरेश।
थकित रहैं असमर्थ करि, प्रणमें 'सन्त' हमेश॥

ॐ ह्रीं अर्हं अनंतनाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥६३३॥

अनागार आगार के, उद्धारक जिनराज।
धर्मनाथ प्रणमूँ सदा, पाऊँ शिवसुख साज॥

ॐ ह्रीं अर्हं धर्मनाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥६३४॥

शांतिरूप पर शांतिकर, कर्म दाह विनिवार।
शांति हेतु बन्दूँ सदा, पाऊँ भवदधि पार॥

ॐ ह्रीं अर्हं शांतिनाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥६३५॥

क्षुद्र वीर्य सब जीव के, रक्षक हैं तीर्थेश।
शरणागत प्रतिपालकर, ध्यावैं सदा सुरेश॥

ॐ ह्रीं अर्हं कुन्थुनाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥६३६॥

पूजनीक सब जगत के, मंगलकारक देव।
पूजत हैं हम भावसों, विनशै अघ स्वयमेव॥

ॐ ह्रीं अर्हं अरनाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥६३७॥

मोह काम भट जीतियो, जिन जीतो सब लोक।
लोकोत्तम जिनराज के, नमूँ चरण दे धोक॥

ॐ ह्रीं अर्हं मल्लिनाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥६३८॥

पंच पाप को त्यागकरि, भव्य जीव आनन्द।
भये जासु उपदेश तैं, पूजत हूँ पद वृन्द॥

ॐ ह्रीं अर्हं मुनिसुव्रताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥६३९॥

सुरनर मुनि नित नमन करि, जान धरम अवतार।
तिनको पूजूँ भाव युत, लहुँ भवार्णव पार॥

ॐ ह्रीं अर्हं नमिनाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥६४०॥

नेम धर्म में नित रमें, धर्मधुरा भगवान।
धर्मचक्र जग में फिरे, पहुँचावे शिव थान॥

ॐ ह्रीं अर्हं नेमिनाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥६४१॥

शरणागति निज पास दो, पाप फाँस दुख नाश।
तिसको छेदों मूलसों, देह मुक्त गति वास॥

ॐ ह्रीं अर्हं पार्श्वनाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥६४२॥

वृद्ध भावतैं उच्चपद, लोक शिखर आरूढ़।
केवल लक्ष्मी वर्द्धता, भई सु अन्तर गूढ़॥

ॐ ह्रीं अर्हं वर्द्धमानाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥६४३॥

अतुल वीर्य तन धरत हैं, अतुल वीर्य मन बीच।
कामिन वश नहिं रंच भी, जैसे जल बिच मीन॥

ॐ ह्रीं अर्हं महावीराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥६४४॥

मोह सुभटकूँ पटकियो, तीन लोक परशंस।
श्रेष्ठ पुरुष तुम जगत में, कियो कर्म विध्वंश॥

ॐ ह्रीं अर्हं सुवीराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥६४५॥

मिथ्या-मोह निवार करि, महा सुमति भण्डार।
शुभ मारग दरशाइयो, शुभ अरु अशुभ विचार॥

ॐ ह्रीं अर्हं सन्मतये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥६४६॥

निज आश्रय निर्विघ्न नित, निज लक्ष्मी भण्डार।
चरणाम्बुज निज नमत हम, पुष्पांजलि शुभ धार॥

ॐ ह्रीं अर्हं महापद्माय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥६४७॥

हो देवाधीदेव तुम, नमत देव चउ भेव।
धरो अनन्त चतुष्टपद, परमानन्द अभेव॥

ॐ ह्रीं अर्हं सुरदेवाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥६४८॥

निरावर्ण आभास है, ज्यों बिन पटल दिनेश।
लोकालोक प्रकाश करि, सुन्दर प्रभा जिनेश॥

ॐ ह्रीं अर्हं सुप्रभाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥६४९॥

आतमीक जिन गुण लिये, दीप्ति सरूप अनूप।
स्वयं ज्योति परकाशमय, बन्दत हूँ शिवभूप॥

ॐ ह्रीं अर्हं स्वयंप्रभाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥६५०॥

निजशक्ती निज करण हैं, साधन बाह्य अनेक।
मोहसुभट क्षयकरन को, आयुध राशि विवेक॥

ॐ ह्रीं अर्हं सर्वायुधाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥६५१॥

जय-जय सुरधुनि करत हैं, तथा विजय निधिदेव।
तुम पद जे नर नमत हैं, पावै सुख स्वयमेव॥

ॐ ह्रीं अर्हं जयदेवाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥६५२॥

तुम सम प्रभा न और में, धरो ज्ञान परकाश।
नाथ प्रभा जग में भये, नमत मोहतम नाश॥

ॐ ह्रीं अर्हं प्रभादेवाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥६५३॥

रक्षक हो षट्काय के, दया सिन्धु भगवान।
शशिसमजिय आह्लाद करि, पूजनीक धरिध्यान॥

ॐ ह्रीं अर्हं उदंकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥६५४॥

समाधान सबके करैं, द्वादश सभा मंझार।
सर्व अर्थ परकाशकर, दिव्य ध्वनि सुखकार॥

ॐ ह्रीं अर्हं प्रश्नकीर्तये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥६५५॥

काहू विधि बाधा नहीं, कबहूँ नहीं व्यय होय।
उन्नति रूप विराजते, जयवन्तो जग सोय॥

ॐ ह्रीं अर्हं जयाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥६५६॥

केवलज्ञान स्वभाव में, लोकत्रय एक भाग।
पूरणता को पाइयो, छांडि सकल अनुराग॥

ॐ ह्रीं अर्हं पूर्णबुद्धाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥६५७॥

पर आलिंगन भाव तज, इच्छा क्लेश विडार।
निज संतोष सुखी सदा, पर संबंध निवार॥

ॐ ह्रीं अर्हं निजानंदसंतुष्टजिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥६५८॥

मोहादिक मल नाशकर, अतिशय करि अमलान।
विमल जिनेश्वर मैं नमूँ, तीन लोक परधान॥

ॐ ह्रीं अर्हं विमलप्रभाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥६५९॥

स्वपद में नित रमत हैं, कभी न आरति होय।
अतुलवीर्य विधि जीतियो, नमूँ जोर कर दोय॥

ॐ ह्रीं अर्हं महाबलाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥६६०॥

द्रव्य भाव मल कर्म हैं, ताको नाश करान।
शुद्ध निरंजन हो रहे, ज्यों बादल बिन भान॥

ॐ ह्रीं अर्हं निर्मलाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥६६१॥

तुम चित्राम अरूप है, सुर नर साधु अगम्य।
निराकार निर्लेप है, धारत भाव असम्य॥

ॐ ह्रीं अर्हं चित्रगुप्ताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥६६२॥

मग्न भये निज आत्म में, पर पद में नहिं वास।
लक्ष अलक्ष विराजते, पूरो मन की आश॥

ॐ ह्रीं अर्हं समाधिगुप्ताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥६६३॥

निज गुण आतम ज्ञान है, पर सहाय नहीं चाह।
स्वयं भाव परकाशियो, नमत मिटै भव दाह॥

ॐ ह्रीं अर्हं स्वयंभुवे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥६६४॥

मन मोहन सोहन महा, मुनि मन रमण अनन्द।
महातेज परताप हैं, पूरण ज्योति अमन्द॥

ॐ ह्रीं अर्हं कंदर्पाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥६६५॥

विजय लक्ष्मी नाथ हैं, जीते कर्म प्रधान।
तिनको पूजै सर्व जग, मैं पूजों धरि ध्यान॥

ॐ ह्रीं अर्हं विजयनाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥६६६॥

गणधरादि योगीश जे, विमलाचारी सार।
तिनके स्वामी हो प्रभु, राग-द्वेष मल जार॥

ॐ ह्रीं अर्हं विमलेशाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥६६७॥

दिव्य अनक्षर ध्वनि खिरैं, सर्व अर्थ गुणधार।
भविजन मन संशय हरन, शुद्ध बोध आधार॥

ॐ ह्रीं अर्हं दिव्यवादाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥६६८॥

नहीं पार जा वीर्य को, स्वाभाविक निरधार।
सो सहजैं गुण धरत हो, नमूँ लहूँ भवपार॥

ॐ ह्रीं अर्हं अनन्तवीर्याय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥६६९॥

पुरुषोत्तम परधान हो, परम निजानंद धाम।
चक्रपती हरिबल नमें, मैं पूजूँ निष्काम॥

ॐ ह्रीं अर्हं महापुरुषदेवाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥६७०॥

शुभ विधि सब आचरण हैं, सर्व जीव हितकार।
श्रेष्ठ बुद्ध अति शुद्ध हैं, नमूँ करो भवपार॥

ॐ ह्रीं अर्हं सुविधये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥६७१॥

हैं प्रमाण करि सिद्ध जे, ते हैं बुद्धि प्रमाण।
सो विशुद्धमय रूप हैं, संशय तम को भान॥

ॐ ह्रीं अर्हं प्रज्ञापरिमाणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥६७२॥

समय प्रमाण निमित तनी, कभी अन्त नहीं होय।
अविनाशी थिर पद धरैं, मैं प्रणमूँ हूँ सोय॥

ॐ ह्रीं अर्हं अव्ययाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥६७३॥

प्रतिपालक जगदीश हैं, सर्वमान परमान।
अधिक शिरोमणि लोकगुरु, पूजत नित कल्याण॥

ॐ ह्रीं अर्हं पुराणपुरुषाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥६७४॥

धर्म सहायक हो प्रभू, धर्म मार्ग की लीक।
शुभ मर्यादा बंध प्रति, कारण चलावन ठीक॥

ॐ ह्रीं अर्हं धर्मासारथये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥६७५॥

शिवमारग दिखलाय कर, भविजन कियो उद्धार।
धर्म सुयश विस्तार कर, बतलाओ शुभ सार॥

ॐ ह्रीं अर्हं शिवकीर्तिजिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥६७६॥

मोह अन्ध हन सूर्य हो, जगदीश्वर शिवनाथ।
मोक्षमार्ग परकाश कर, नमूँ जोर युग हाथ॥

ॐ ह्रीं अर्हं मोहांधकारविनाशकजिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥६७७॥

मन इन्द्री व्यापार बिन, भाव रूप विध्वंश।
ज्ञान अतीन्द्रिय धरत हो, नमत नशै अघवंश॥

ॐ ह्रीं अर्हं अतीन्द्रियज्ञानरूपजिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥६७८॥

पर उपदेश परोक्ष बिन, साक्षात् परतक्ष।
जानत लोकालोक सब, धारैं ज्ञान अलक्ष॥

ॐ ह्रीं अर्हं केवलज्ञानजिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥६७९॥

व्यापक हो तिहुँ लोक में, ज्ञान ज्योति सब ठौर।
तुमको पूजत भावसों, पाऊँ भवदधि और॥

ॐ ह्रीं अर्हं विश्वभूतये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥६८०॥

इन्द्रादिक कर पूज्य हो, मुनिजन ध्यान धराय।
तीन लोक नायक प्रभू, हम पर होउ सहाय॥

ॐ ह्रीं अर्हं विश्वनायकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥६८१॥

तुम देवन के देव हो, महादेव है नाम।
बिन ममत्व शुद्धात्मा, तुम पद करूँ प्रणाम॥

ॐ ह्रीं अर्हं दिगम्बराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥६८२॥

सर्व व्यापि कुमती कहैं, करो भिन्न विश्राम।
जगसों तजी समीपता, राजत हो शिवधाम॥

ॐ ह्रीं अर्हं निरन्तरजिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥६८३॥

हितकारी अति मिष्ट हैं, अर्थ सहित गम्भीर।
प्रियवाणी कर पोखते, द्वादश सभासु तीर॥

ॐ ह्रीं अर्हं मिष्टदिव्यध्वनिजिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥६८४॥

भवसागर के पार हो, सुखसागर गलतान।
भव्य जीव पूजत चरन, पावैं पद निरवान॥

ॐ ह्रीं अर्हं भवांतकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥६८५॥

नहीं चलाचल भाव हैं, पाप कलाप न लेश।
दृढ़ परिणत निज आत्मरति, पूजूँ श्री मुक्तेश॥

ॐ ह्रीं अर्हं दृढ़व्रताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥६८६॥

असंख्यात नय भेद हैं, यथायोग्य वच द्वार।
तिन सबको जानो सुविध, महा निपुण मति नार॥

ॐ ह्रीं अर्हं नयात्तुंगाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥६८७॥

क्रोधादिक सु उपाधि हैं, आत्म विभाव कराय।
तिनको त्याग विशुद्ध पद, पायो पूजूँ पाँय॥

ॐ ह्रीं अर्हं निष्कलंकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥६८८॥

ज्यों शशि-किरण उद्योत है, पूरण प्रभा प्रकाश।
कलाधार सौहैं सु इम, पूजत अघ-तम नाश॥

ॐ ह्रीं अर्हं पूर्णकलाधराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥६८९॥

जन्म-मरण को आदि ले, जग में क्लेश महान।
तिसके हंता हो प्रभु, भोगत सुख निर्वाण॥

ॐ ह्रीं अर्हं सर्वक्लेशहराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥६९०॥

ध्रुव स्वरूप थिर हैं सदा, कभी अन्त नहीं होय।
अव्याबाध विराजते, पर सहाय को खोय॥

ॐ ह्रीं अर्हं ध्रौव्यरूपजिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥६९१॥

व्यय उत्पाद सुभाव हैं, ताको गौण कराय।
अचल अनंत स्वभाव में, तीन लोक सुखदाय॥

ॐ ह्रीं अर्हं अक्षयानंतस्वभावात्मकजिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥६९२॥

स्व ज्ञानादि चतुष्ट पद, हृदय माहिं विकसाय।
सोहत हैं शुभ चिन्ह करि, भवि आनंद कराय॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीवत्सलाँछनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥६९३॥

धर्म रीति परगट कियो, युग की आदि मंझार।
भविजन पोषे सुख सहित, आदि धर्म अवतार॥

ॐ ह्रीं अर्हं आदिब्रह्मणे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥६९४॥

चतुरानन परसिद्ध हैं, दर्श होय चहुँ ओर।
चउ अनुयोग बखानते, सब दुख नासौ मोर॥

ॐ ह्रीं अर्हं चतुर्मुखाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥६९५॥

जगत जीव कल्याण कर, धर्म मर्याद बखान।
ब्रह्म ब्रह्म भगवान हो, महामुनी सब मान॥

ॐ ह्रीं अर्हं ब्रह्मणे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥६९६॥

प्रजापति प्रतिपाल कर, ब्रह्मा विधि करतार।
मन्मथ इन्द्री वश करन, बन्दूँ सुख आधार॥

ॐ ह्रीं अर्हं विधात्रे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥६९७॥

तीन लोक की लक्ष्मी, तुम चरणाम्बुज वास।
श्रीपति श्रीधर नाम शुभ, दिव्यासन सुखरास॥

ॐ ह्रीं अर्हं कमलासनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥६९८॥

बहुरि न जग में भ्रमण है, पंचम गति में वास।
नित्य अमरता पाइयो, जरा-मृत्यु को नाश॥

ॐ ह्रीं अर्हं अजन्मिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥६९९॥

पाँच काय पुद्‌गलमई, तामें एक न होय।
केवल आत्म प्रदेश ही, तिष्ठत हैं दुख खोय॥

ॐ ह्रीं अर्हं आत्मभुवे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥७००॥

लोक शिखर सुखसों रहैं, ये ही प्रभुता जान।
धारत हैं तिहुँ लोक में, अधिक प्रभा परधान॥

ॐ ह्रीं अर्हं लोकशिखरनिवासिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥७०१॥

अधिक प्रताप प्रकाश है, मोह तिमिर को नाश।
शिवमग दिखलावत सही, सूरज सम प्रतिभास॥

ॐ ह्रीं अर्हं सूरज्येष्ठाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥७०२॥

प्रजापाल हित धार उर, शुभ मारग बतलाय।
सत्यारथ ब्रह्मा कहैं, तुमरे बन्दूँ पाय॥

ॐ ह्रीं अर्हं प्रजापतये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥७०३॥

गर्भ समय षड्मास ही, प्रथम इन्द्र हर्षाय।
रत्नवृष्टि नित करत हैं, उत्तम गर्भ कहाय॥

ॐ ह्रीं अर्हं हिरण्यगर्भाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥७०४॥

तुम हि चार अनुयोग के, अंग कहैं मुनिराज।
तुमसों पूरण श्रुत सही, नान्तर मंगल काज॥

ॐ ह्रीं अर्हं वेदांगाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥७०५॥

तुम उपदेश थकी कहैं, द्वादशांग गणराज।
पूरण ज्ञाता हो तुम्हीं, प्रणमूँ मैं शिवकाज॥

ॐ ह्रीं अर्हं पूर्णवेदज्ञानाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥७०६॥

पार भये भवसिंधु के, तथा सुवर्ण समान।
उत्तम निर्मल थुति धरैं, नमत कर्ममल हान॥

ॐ ह्रीं अर्हं भवसिंधुपारंगाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥७०७॥

सुखाभास पर-निमितत्तें, पर-उपाधितैं होत।
स्वतः सुभाव धरो सही, सत्यानन्द उद्योत॥

ॐ ह्रीं अर्हं सत्यानन्दाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥७०८॥

मोहादिक परबल महा, सो इसको तुम जीत।
औरन की गिनती कहाँ, तिष्ठो सदा अभीत॥

ॐ ह्रीं अर्हं अजयाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥७०९॥

दिव्य रत्नमय ज्योति हो, अमित अकंप अडोल।
मनवाँछित फलदाय हो, राजत अखय अमोल॥

ॐ ह्रीं अर्हं मनवाँछितफलदायकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥७१०॥

देह धार जीवन मुकत, परमातम भगवान।
सूर्य समान सुदीप्त धर, महा ऋषीश्वर जान॥

ॐ ह्रीं अर्हं जीवनमुक्तजिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥७११॥

स्व-भय आदिक से परे, पर-भय आदि निवार।
पर उपाधि बिन नित सुखी, बन्दूँ भाव सम्हार॥

ॐ ह्रीं अर्हं शतानंदाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥७१२॥

ईश्वर हो तिहुँ लोक के, परम पुरुष परधान।
ज्ञानानंद स्वलक्ष्मी, भोगत नित अमलान॥

ॐ ह्रीं अर्हं विष्णवे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥७१३॥

रत्नत्रय पुरुषार्थ करि, हो प्रसिद्ध जयवंत।
कर्मशत्रु को क्षय कियो, शीश नमें नित 'सन्त'॥

ॐ ह्रीं अर्हं त्रिविक्रमाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥७१४॥

सूरज हो शिवराह के, कर्म दलन बल सूर।
संशय केतुनि ग्रहण सम, महा सहज सुखपूर॥

ॐ ह्रीं अर्हं मोक्षमार्गप्रकाशकादित्यरूपजिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति० ॥७१५॥

सुभग अनन्त चतुष्टपद, सोई लक्ष्मी भोग।
स्वामी हो शिवनारिके, नमूँ जोरि तिहुँ योग॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीपतये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥७१६॥

इन्द्रादि पूजत जिन्हैं, पंचकल्याणक थाप।
अद्भुत पराक्रम को धरैं, नमत नसैं भवपाप॥

ॐ ह्रीं अर्हं पुरुषोत्तमाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥७१७॥

निज प्रदेश में बसत हैं, परमातम को वास।
आप मोक्ष के नाथ हो, आप हि मोक्ष निवास॥

ॐ ह्रीं अर्हं वैकुण्ठाधिपतये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥७१८॥

सर्व लोक कल्याणकर, विष्णु नाम भगवान।
श्री अरहंत स्व लक्ष्मी, ताके भरता जान॥

ॐ ह्रीं अर्हं सर्वलोकश्रेयस्करजिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥७१९॥

मुनिमन कुमुदनि मोदकर, भव संताप विनाश।
पूरण चन्द्र त्रिलोक में, पूरण प्रभा प्रकाश॥

ॐ ह्रीं अर्हं हृषीकेशाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥७२०॥

दिनकर सम परकाशकर, हो देवन के देव।
ब्रह्मा विष्णु कहात हो, शशि सम दुति स्वयमेव॥

ॐ ह्रीं अर्हं हरये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥७२१॥

स्वयं विभव के हो धनी, स्वयं ज्योति परकाश।
स्वयं ज्ञान दृग वीर्य सुख, स्वयं सुभाव विलास॥

ॐ ह्रीं अर्हं स्वयंभुवे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥७२२॥

धर्म-भारधर धारिणी, हो जिनेन्द्र भगवान।
तुमको पूजों भावसों, पाऊँ पद निर्वाण॥

ॐ ह्रीं अर्हं विश्वम्भराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥७२३॥

असुर काम अर हास्य इन, आदि कियो विध्वंश।
महाश्रेष्ठ तुमको नमूँ, रहै न अघ को अंश॥

ॐ ह्रीं अर्हं असुरध्वंसिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥७२४॥

सुधाधार द्यो अमरपद, धर्म फूल की बेल।
शुभ मति गोपिन संग में, हमें राश निज गेल॥

ॐ ह्रीं अर्हं माधवाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥७२५॥

विषय-कषाय स्ववश करी, बलि वश कियो जु काम।
महा बली परसिद्ध हो, तुम पद करूँ प्रणाम॥

ॐ ह्रीं अर्हं बलिबन्धनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥७२६॥

तीन लोक भगवान हो, निजपर के हितकार।
सुरनर पशु पूजत सदा, भक्ति भाव उर धार॥

ॐ ह्रीं अर्हं अधीक्षजाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥७२७॥

हितमित मिष्ट प्रिय वचन, अमृत सम सुखदाय।
धर्म मोक्ष परगट करन, बंदूँ तिनके पाँय॥

ॐ ह्रीं अर्हं हितमितप्रियवचनजिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥७२८॥

निज लीला में मगन हैं, साँचा कृष्ण सु नाम।
तीन खंड तिहुँ लोक के, नाथ करूँ परणाम॥

ॐ ह्रीं अर्हं केशवाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥७२९॥

सूखे तृण सम जगत की, विभव जान करवास।
धरैं सरलता जोग में, करैं पाप को नाश॥

ॐ ह्रीं अर्हं विष्टरश्रवसे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥७३०॥

श्री कहिये आतम विभव, ताकरि हो शुभ नीक।
सोहत सुन्दर वदन करि, सज्जनचित रमणीक॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीवत्सवाँछनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥७३१॥

सर्वोत्तम अति श्रेष्ठ हैं, जिन सन्मति थुति योग।
धर्म मोक्षमारग कहैं, पूजत सज्जन लोग॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीमतये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥७३२॥

अविनाशी अविकार हैं, नहीं चिगें निज भाव।
स्वयं सु आश्रय रहत हैं, मैं पूजूँ धर चाव॥

ॐ ह्रीं अर्हं अच्युताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥७३३॥

नाशी लौकिक कामना, निर-इच्छुक योगीश।
नार श्रृंगार न मन बसै, बंदत हूँ लोकीश॥

ॐ ह्रीं अर्हं नरकान्तकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥७३४॥

व्यापक लोकालोक में, विष्णु रूप भगवान।
धर्मरूप तरु लहिलहै, पूजत हूँ धरि ध्यान॥

ॐ ह्रीं अर्हं विश्वसेनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥७३५॥

धर्मचक्र सन्मुख चलै, मिथ्यामति रिपु घात।
तीन लोक नायक प्रभू, पूजत हूँ दिनरात॥

ॐ ह्रीं अर्हं चक्रपाणये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥७३६॥

सुभग सुरूपी श्रेष्ठ अति, जन्म धर्म अवतार।
तीन लोक की लक्ष्मी, है एकत्र उदार॥

ॐ ह्रीं अर्हं पद्मनाभाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥७३७॥

मुनिजन आदर जोग हो, लोक सराहन योग।
सुर नर पशु आनन्दकर, सुभग निजातम भोग॥

ॐ ह्रीं अर्हं जनार्दनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥७३८॥

सब देवन के देव हो, महादेव विख्यात।
ज्ञानामृत सुखसों खिरै, पीवत भवि सुख पात॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीकण्ठाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥७३९॥

पाप-पुञ्ज का नाश करि, धर्म रीत प्रगटाय।
तीन लोक के अधिपती, हम पर दया कराय॥

ॐ ह्रीं अर्हं त्रिलोकाधिपशंकराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥७४०॥

स्वयं व्यापि निज ज्ञान करि, स्वयं प्रकाश अनूप।
स्वयं भाव परमातमा, बन्दूँ स्वयं सरूप॥

ॐ ह्रीं अर्हं स्वयंप्रभवे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥७४१॥

सब देवन के देव हो, महादेव है नाम।
स्व-पर सुगन्धित रूप हो, तुम पद करूँ प्रणाम॥

ॐ ह्रीं अर्हं लोकपालाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥७४२॥

धर्मध्वजा जग फरहरै, सब जग माने आन।
सब जग शीश नमें चरण, सब जग को सुखदान॥

ॐ ह्रीं अर्हं वृषभकेतवे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥७४३॥

जन्म-जरा-मृत जीतिकैं, निश्चल अव्यय रूप।
सुखसों राजत नित्य हो, बन्दूँ हूँ शिवभूप॥

ॐ ह्रीं अर्हं मृत्युञ्जयाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥७४४॥

सब इन्द्री-मन जीति के, करि दीनो तुम व्यर्थ।
स्वयं ज्ञान इन्द्री जग्यौ, नमूँ सदा शिव अर्थ॥

ॐ ह्रीं अर्हं विरूपाक्षाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥७४५॥

सुन्दररूप मनोज्ञ है, मुनिजन मन वशकार।
असाधारण शुभ अणु लगै, केवलज्ञान मंझार॥

ॐ ह्रीं अर्हं कामदेवाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥७४६॥

सम्यग्दर्शन ज्ञान अरु, चारित एक सरूप।
धर्म मार्ग दरशात हैं, लोकत रूप अनूप॥

ॐ ह्रीं अर्हं त्रिलोचनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥७४७॥

निजानन्द स्व-लक्ष्मी, ताके हो भरतार।
शिवकामिनी नित भोगते, परमरूप सुखकार॥

ॐ ह्रीं अर्हं उमापतये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥७४८॥

जे अज्ञानी जीव हैं, तिन प्रति बोध करान।
रक्षक हो षट्काय के, तुम सम कौन महान॥

ॐ ह्रीं अर्हं पशुपतये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥७४९॥

रमण भाव निज शक्ति सों, धरैं तथा दुति काम।
कामदेव तुम नाम है, महाशक्ति बल धाम॥

ॐ ह्रीं अर्हं शम्बरारये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥७५०॥

कामदाह को दम कियो, ज्यों अगनी जलधार।
निजआतम आचरण नित, महाशील श्रियसार॥

ॐ ह्रीं अर्हं त्रिपुरान्तकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥७५१॥

निज सन्मति शुभ नारसों, मिले रले अरधांग।
ईश्वर हो परमातमा, तुम्हैं नमूँ सर्वांग॥

ॐ ह्रीं अर्हं अर्द्धनारीश्वराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥७५२॥

नहीं चिगे उपयोग से, महा कठिन परिणाम।
महावीर्य धारक नमूँ, तुमको आठों जाम॥

ॐ ह्रीं अर्हं रुद्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥७५३॥

गुण-पर्याय अनन्त युत, वस्तु स्वयं परदेश।
स्वयं काल स्व क्षेत्र हो, स्वयं सुभाव विशेष॥

ॐ ह्रीं अर्हं भावाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥७५४॥

सूक्षम गुप्त स्वगुण धरैं, महा शुद्धता धार।
चार ज्ञानधर नहीं रखै, मैं पूंजूँ सुखकार॥

ॐ ह्रीं अर्हं गर्भकल्याणकजिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥७५५॥

शिव तिय संग सदा रमें, काल अनन्त न और।
अविनाशी अविकार हो, महादेव शिरमौर॥

ॐ ह्रीं अर्हं सदाशिवाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥७५६॥

जगत कार्य तुमसों करैं, सब तुमरे आधीन।
सबके तुम सरदार हो, आप धनी जगदीश॥

ॐ ह्रीं अर्हं जगत्कर्त्रे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥७५७॥

महा घोर अंधियार है, मिथ्या मोह कहाय।
जग में शिवमग लुप्त था, ताको तुम दरशाय॥

ॐ ह्रीं अर्हं अन्धकारांतकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥७५८॥

संतति पक्ष जुदी नहीं, नहीं आदि नहिं अन्त।
सदा काल बिन काल तुम, राजत हो जयवंत॥

ॐ ह्रीं अर्हं अनादिनिधनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥७५९॥

तीन लोक आराध्य हो, महा यज्ञ को ठाम।
तुमको पूजत पाइये, महा मोक्ष सुखधाम॥

ॐ ह्रीं अर्हं हराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥७६०॥

महा सुभट गुणरास हो, सेवत हैं तिहुँ लोक।
शरणागत प्रतिपालकर, चरणाम्बुज दूँ धोक॥

ॐ ह्रीं अर्हं महासेनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥७६१॥

गणधरादि सेवें चरण, महा गणपती नाम।
पार करो भव-सिंधुतैं, मंगलकर सुखधाम॥

ॐ ह्रीं अर्हं महागणपतिजिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥७६२॥

चार संघ के नाथ हो, तुम आज्ञा शिर धार।
धर्म मार्ग प्रवर्त्त कर, बन्दूँ पाप निवार॥

ॐ ह्रीं अर्हं गणनाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥७६३॥

मोह-सर्प के दमन को, गरुड़ समान कहाय।
सब के आदरकार हो, तुम गणपति सुखदाय॥

ॐ ह्रीं अर्हं महाविनायकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥७६४॥

जे मोही अल्पज्ञ हैं, तिनसों हो प्रतिकूल।
धर्माधर्म विरोध कर, धरूँ शीश पग धूल॥

ॐ ह्रीं अर्हं विरोधविनाशकजिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥७६५॥

जितने दुख संसार में, तिनको वार न पार।
इक तुम ही जानी सही, ताहि तजो दुखभार॥

ॐ ह्रीं अर्हं विपद्विनाशकजिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥७६६॥

सब विद्या के बीज हो, तुम वाणी परकाश।
सकल अविद्या मूल तें, इक छिन में हो नाश॥

ॐ ह्रीं अर्हं द्वादशात्मने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥७६७॥

पर-निमित्त से जीव को, रागादिक परिणाम।
तिनको त्याग सुभाव में, राजत हैं सुखधाम॥

ॐ ह्रीं अर्हं विभावरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥७६८॥

अन्तर-बाहिर प्रबल रिपु, जीत सके नहीं कोय।
निर्भय अचल सुथिर रहैं, कोटि शिवालय सोय॥

ॐ ह्रीं अर्हं दुर्जयाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥७६९॥

घन सम गर्जत वचन हैं, भागे कुनय कुवादि।
प्रबल प्रचंड सुवीर्य है, धरैं सुगुण इत्यादि॥

ॐ ह्रीं अर्हं बृहद्भावाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥७७०॥

पाप सघन वन दाह दव, महादेव शिव नाम।
अतुल प्रभा धारो महा, तुम पद करूँ प्रणाम॥

ॐ ह्रीं अर्हं चित्रभानवे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥७७१॥

तुम अजन्म बिन मृत्यु हो, सदा रहो अविकार।
ज्यों के त्यों मणि दीप सम, पूजत हूँ मनधार॥

ॐ ह्रीं अर्हं अजरामरजिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥७७२॥

संस्कारादि स्वगुण सहित, तिन करि हो आराध्य।
तुमको बंदों भाव सों, मिटे सकल दुख व्याध्य॥

ॐ ह्रीं अर्हं द्विजाराध्याध्याय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥७७३॥

निज आतम निज ज्ञान है, तामें रुचि परतीत।
पर पद सौं हैं अरुचिता, पाई अक्षय जीत॥

ॐ ह्रीं अर्हं सुधाशोचिषे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥७७४॥

जन्म-मरण को आदि लै, सकल रोग को नाश।
दिव्य औषधि तुम धरौ, अमर करन सुखरास॥

ॐ ह्रीं अर्हं औषधीशाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥७७५॥

पूरण गुण परकाश कर, ज्यों शशि करण उद्योत।
मिथ्यातप निरवारतैं, दर्शित आनंद होत॥

ॐ ह्रीं अर्हं कमलानिधये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥७७६॥

सूर्य प्रकाश धरै सही, धर्म मार्ग दिखलाय।
चार संघ नायक प्रभू, बंदूँ तिनके पाँय॥

ॐ ह्रीं अर्हं नक्षत्रनाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥७७७॥

भव-तप-हर हो चन्द्रमा, शीतलकार कपूर।
तुमको जो नर सेवते, पाप कर्म हो दूर॥

ॐ ह्रीं अर्हं शुभ्रांशवे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥७७८॥

स्वर्गादिक की लक्षमी, तासों भी जु ग्लान।
स्वै-पद में आनंद है, तीन लोक भगवान॥

ॐ ह्रीं अर्हं सौम्यभावरताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥७७९॥

पर-पदार्थ को इष्ट लखि, होत नहीं अभिमान।
हो अबंध इस कर्मतें, स्व-आनंद निधान॥

ॐ ह्रीं अर्हं कुमुदबांधवाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥७८०॥

सब विभाव को त्याग करि, हैं स्वधर्म में लीन।
तातें प्रभुता पाइयो, हैं नहिं बन्धाधीन॥

ॐ ह्रीं अर्हं धर्मरतये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥७८१॥

आकुलता नहीं लेश है, नहीं रहै चित भंग।
सदा सुखी तिहुँ लोक में, चरन नमूँ सब अंग॥

ॐ ह्रीं अर्हं आकुलतारहितजिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥७८२॥

शुभ-परिणति प्रकटाय के, दियो स्वर्ग को दान।
धर्म-ध्यान तुमसे चले, सुमरत हो शुभ ध्यान॥

ॐ ह्रीं अर्हं पुण्यजिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥७८३॥

भविजन करत पवित्र अति, पाप मैल प्रक्षाल।
ईश्वर हो परमातमा, नमूँ चरन निज भाल॥

ॐ ह्रीं अर्हं पुण्यजिनेश्वराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥७८४॥

श्रावक या मुनिराज हो, धर्म आप से होय।
धर्मराज शुभ नीति करि, उन्मार्गन को खोय॥

ॐ ह्रीं अर्हं धर्मराजाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥७८५॥

स्वयं स्व-आतम रस लहो, ताही कहीये भोग।
अन्य कुपरिणति त्यागियो, नमूँ पदाम्बुज योग॥

ॐ ह्रीं अर्हं भोगराजाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥७८६॥

दर्शन ज्ञान सुभाव धरि, ताही के हो स्वामि।
सब मलीनता त्यागियो, भये शुद्ध परिणामि॥

ॐ ह्रीं अर्हं दर्शनज्ञानचारित्रात्मजिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥७८७॥

सत्य उचित शुभ न्याय में, है आनन्द विशेख।
सब कुनीति को नाशकर, सर्व जीव सुख देख॥

ॐ ह्रीं अर्हं भूतानन्दाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥७८८॥

पर-पदार्थ के संग से, दुखित होत सब जीव।
ताके भयसों भय रहित, भोगैं मोक्ष सदीव॥

ॐ ह्रीं अर्हं सिद्धिकान्तजिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥७८९॥

जाको कभी न अन्त हो, सो पायो आनन्द।
अचलरूप निज आत्ममय, भाव अभावी द्वंद्व॥

ॐ ह्रीं अर्हं अक्षयानंदाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥७९०॥

शिवमारग परकट कियो, दोष रहित वरताय।
दिव्यध्वनि करि गर्ज सम, सर्व अर्थ दिखलाय॥

ॐ ह्रीं अर्हं बृहतांपतये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥७९१॥

(चौपाई)

हितकारक अपूर्व उपदेश, तुम सम और नहीं देवेश।
सिद्धसमूह जजूँ मनलाय, भव-भव में सुखसंपतिदाय॥टेक॥

ॐ ह्रीं अर्हं अपूर्वदेवोपदेष्ट्रे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥७९२॥

कर्मविषैं संस्कार विधान, तीनलोक में विस्तर जान॥सिद्ध...॥

ॐ ह्रीं अर्हं सिद्धसमूहेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥७९३॥

धर्म उपदेश देत सुखकार, महाबुद्ध तुम हो अवतार॥सिद्ध...॥

ॐ ह्रीं अर्हं शुद्धबुद्धाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥७९४॥

तीन लोक में हो शशि सूर, निज किरणावलि करि तम चूर।
सिद्धसमूह जजूँ मनलाय, भव-भव में सुखसंपतिदाय॥

ॐ ह्रीं अर्हं तमोभेदने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥७९५॥

धर्ममार्ग उद्योत करान, सब कुवाद की कर हो हान॥सिद्ध...॥

ॐ ह्रीं अर्हं धर्ममार्गदर्शकजिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥७९६॥

सर्व शास्त्र मिथ्या वा सांच, तुम निज दृष्टि लियो है जाँच॥सिद्ध...॥

ॐ ह्रीं अर्हं सर्वशास्त्रनिर्णायकजिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥७९७॥

पंचमगति बिन श्रेष्ठ न और, सो तुम पाय त्रिजग शिरमौर॥सिद्ध...॥

ॐ ह्रीं अर्हं पंचमगतिजिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥७९८॥

श्रेष्ठ सुमति तुमही हो एक, शिवमारग की जानो टेक॥सिद्ध...॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्रेष्ठसुमतिदात्रिजिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥७९९॥

वृष मर्जाद भली विधि थाप, भविजन मेंटे सब संताप॥सिद्ध...॥

ॐ ह्रीं अर्हं सुगतये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥८००॥

श्रेष्ठ करै कल्याण सु ज्ञान, सम्पूरण संकल्प निशान॥सिद्ध...॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्रेष्ठकल्याणकारकजिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥८०१॥

निज ऐश्वर्य धरो संपूर्ण, पर विभूति बिन हो अघ चूर्ण॥सिद्ध...॥

ॐ ह्रीं अर्हं परमेश्वरीयसम्पन्नाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥८०२॥

श्रेष्ठ शुद्ध निजब्रह्म रमाय, मंगलमय पर मंगलदाय॥सिद्ध...॥

ॐ ह्रीं अर्हं परब्रह्मणे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥८०३॥

श्री जिनराज कर्मरिपु जीति, पूजनीक हैं सबके मीत॥सिद्ध...॥

ॐ ह्रीं अर्हं कर्मारिजिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥८०४॥

षट् पदार्थ नव तत्त्व कहाय, धर्म-अधर्म भलीविधि गाय॥सिद्ध...॥

ॐ ह्रीं अर्हं सर्वशास्त्रज्ञजिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥८०५॥

है शुभ लक्षण मय परिणाम, पर उपाधि को नहिं कछु काम॥सिद्ध...॥

ॐ ह्रीं अर्हं सुलक्षणजिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥८०६॥

सत्य ज्ञानमय है तुम बोध, हेय अहेय बतायो सोध।
सिद्धसमूह जजूँ मनलाय, भव-भव में सुखसंपतिदाय॥

ॐ ह्रीं अर्हं सर्वबोधसत्वाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥८०७॥

इष्टानिष्ट न राग न द्वेष, ज्ञाता दृष्टा हो अविशेष॥सिद्ध...॥

ॐ ह्रीं अर्हं निर्विकल्पाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥८०८॥

दूजो तुम सम नहिं भगवान, धर्माधर्म रीति बलवान॥सिद्ध...॥

ॐ ह्रीं अर्हं अद्वितीयबोधजिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥८०९॥

महादुखी संसारी जान, तिनके पालक हो भगवान॥सिद्ध...॥

ॐ ह्रीं अर्हं लोकपालाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥८१०॥

जगविभूति निरइच्छुक होय, मानरहित आतमरत सोय॥सिद्ध...॥

ॐ ह्रीं अर्हं आत्मरसरतजिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥८११॥

ज्यों शशि तापहरै अनिवार, अतिशय सहित शांति करतार॥सिद्ध...॥

ॐ ह्रीं अर्हं शांतिदात्रे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥८१२॥

हो निरभेद अछेद अशेष, सब इकसार स्वयं परदेश॥सिद्ध...॥

ॐ ह्रीं अर्हं अभेद्याछेद्य-जिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥८१३॥

मायाकृत सम पाँचों काय, निज सों भिन्न लखो मत भाय॥सिद्ध...॥

ॐ ह्रीं अर्हं पंचस्कंधमयात्मदृशे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥८१४॥

बीती बात देख संसार, भव-तन-भोग विरक्त उदार॥सिद्ध...॥

ॐ ह्रीं अर्हं भूतार्थभावनासिद्धाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥८१५॥

धर्माधर्म जान सब ठीक, मोक्षपुरी दिखलायो लीक॥सिद्ध...॥

ॐ ह्रीं अर्हं चतुराननजिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥८१६॥

वीतराग सर्वज्ञ सु देव, सत्यवाक वक्ता स्वयमेव॥सिद्ध...॥

ॐ ह्रीं अर्हं सत्यवक्त्रे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥८१७॥

मन-वच-काय योग परिहार, कर्मवर्गणा नाहिं लगार॥सिद्ध...॥

ॐ ह्रीं अर्हं निरास्रवाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥८१८॥

चार अनुयोग कियो उपदेश, भव्य जीव सुख लहत हमेश।
सिद्धसमूह जजूँ मन लाय, भव-भव में सुखसंपतिदाय॥

ॐ ह्रीं अर्हं चतुर्भूमिकशासनाय नमः अर्घं... ॥८१९॥

काहू पद सों मेल न होय, अन्वय रूप कहावै सोय॥सिद्ध...॥

ॐ ह्रीं अर्हं अन्वयाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥८२०॥

हो समाधि में नित लवलीन, बिन आश्रय नित ही स्वाधीन॥सिद्ध...॥

ॐ ह्रीं अर्हं समाधि-निमग्नजिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥८२१॥

लोक भाल हो तिलक अनूप, हो लोकोत्तम शेष स्वरूप॥सिद्ध...॥

ॐ ह्रीं अर्हं लोकभालतिलकजिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥८२२॥

अक्षाधीन हीन हैं शक्त, तिसको नाश करी निज व्यक्त॥सिद्ध...॥

ॐ ह्रीं अर्हं तुच्छभावभिदे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥८२३॥

जीवादिक षट् द्रव्य सुजान, तिनकौ भलीभाँति है ज्ञान॥सिद्ध...॥

ॐ ह्रीं अर्हं षड्द्रव्यदृशे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥८२४॥

विकलरूप नय सकल प्रमाण, वस्तु भेद जानो स्वज्ञान॥सिद्ध...॥

ॐ ह्रीं अर्हं सकलवस्तुविज्ञात्रे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥८२५॥

सब पदार्थ दर्शन तुम बैन, संशयहरण करण सुख चैन॥सिद्ध...॥

ॐ ह्रीं अर्हं षोडशपदार्थवादिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥८२६॥

वर्णन करि पंचासतिकाय, भव्य जीव संशय विनशाय॥सिद्ध...॥

ॐ ह्रीं अर्हं पंचास्तिकायबोधकजिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥८२७॥

प्रतिबिंबित हो आरसि माँहि, ज्ञानाध्यक्ष जान हो ताहि॥सिद्ध...॥

ॐ ह्रीं अर्हं ज्ञानाध्यक्षजिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥८२८॥

जामें ज्ञान जीव को एक, सो परकासो शुद्ध विवेक॥सिद्ध...॥

ॐ ह्रीं अर्हं समवायसार्थकजिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥८२९॥

भक्तनि के हो साध्य सु कर्म, अन्तिम पौरुष साधन धर्म॥सिद्ध...॥

ॐ ह्रीं अर्हं भक्तैकसाधनधर्माय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥८३०॥

बाकी रहो न गुण शुभ एक, ताको स्वाद न हो प्रत्येक।
सिद्धसमूह जजूँ मनलाय, भव-भव में सुखसंपतिदाय॥

ॐ ह्रीं अर्हं निरवशेषगुणामृताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥८३१॥

नय सुपक्ष करि सांख्य कुवाद, तुम निरवाद पक्षकर वाद॥सिद्ध...॥

ॐ ह्रीं अर्हं सांख्यादिपक्षविध्वंसकजिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥८३२॥

सम्यग्दर्शन है तुम वैन, वस्तु परीक्षा भाखों ऐन॥सिद्ध...॥

ॐ ह्रीं अर्हं समीक्षकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥८३३॥

धर्मशास्त्र के हो कर्तार, आदि पुरुष धारो अवतार॥सिद्ध...॥

ॐ ह्रीं अर्हं आदिपुरुषजिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥८३४॥

नय साधत नैयायक नाम, सो तुम पक्ष धरो अभिराम॥सिद्ध...॥

ॐ ह्रीं अर्हं पंचविंशतितत्त्ववेदकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥८३५॥

स्वपर चतुष्क वस्तु को भेद, व्यक्ताव्यक्त करो निरखेद॥सिद्ध...॥

ॐ ह्रीं अर्हं व्यक्ताव्यक्तज्ञानविदे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥८३६॥

दर्शन ज्ञान भेद उपयोग, चेतनामय है शुभ योग॥सिद्ध...॥

ॐ ह्रीं अर्हं ज्ञानचैतन्यभेददृशे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥८३७॥

स्वसंवेदन शुद्ध धराय, अन्य जीव हैं मलिन कुभाय॥सिद्ध...॥

ॐ ह्रीं अर्हं स्वसंवेदनज्ञानवादिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥८३८॥

द्वादश सभा करै सतकार, आदर योग बैन सुखकार॥सिद्ध...॥

ॐ ह्रीं अर्हं समवसरण-द्वादशसभापतये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥८३९॥

आगम अक्ष अनक्ष प्रमान, तीन भेदकर तुम पहचान॥सिद्ध...॥

ॐ ह्रीं अर्हं त्रिप्रमाणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥८४०॥

विशद शुद्ध मति हो साकार, तुमको जानत हैं सु विचार॥सिद्ध...॥

ॐ ह्रीं अर्हं अध्यक्षप्रमाणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥८४१॥

नयसापेक्षक हैं शुभ वैन, हैं अशंस सत्यारथ ऐन॥सिद्ध...॥

ॐ ह्रीं अर्हं स्याद्वादवादिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥८४२॥

लोकालोक क्षेत्र के मांहि, आप ज्ञान है सब दरशांहि।
सिद्धसमूह जजूँ मनलाय, भव-भव में सुखसंपतिदाय॥

ॐ ह्रीं अर्हं क्षेत्रज्ञाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥८४३॥

अन्तर-बाह्य लेश नहीं और, केवल आतम मई अघोर॥सिद्ध...॥

ॐ ह्रीं अर्हं शुद्धात्मजिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥८४४॥

अन्तिम पौरुष साध्यो सार, पुरुष नाम पायो सुखकार॥सिद्ध...॥

ॐ ह्रीं अर्हं पुरुषात्मजिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥८४५॥

चहुँगति में नरदेह मझार, मोक्ष होत तुम नर आकार॥सिद्ध...॥

ॐ ह्रीं अर्हं नराधिपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥८४६॥

दर्शन ज्ञान चेतन की लार, निरावर्ण तुम हो अविकार॥सिद्ध...॥

ॐ ह्रीं अर्हं निरावरणचेतनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥८४७॥

भावन वेद वेद नरदेह, मोक्ष रूप है नहिं सन्देह॥सिद्ध...॥

ॐ ह्रीं अर्हं मोक्षरूपजिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥८४८॥

सत्य यथारथ हो सब ठीक, स्वयं सिद्ध राजो शुभ नीक॥सिद्ध...॥

ॐ ह्रीं अर्हं अकृत्रिमजिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥८४९॥

(दोहा)

जाकरि तुमको जानिये, सो है अगम अलक्ष।
निर्गुण यातैं कहत हैं, भव-भयतैं हम रक्ष॥

ॐ ह्रीं अर्हं निर्गुणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥८५०॥

चेतनमय हैं अष्टगुण, सो तुम में इक नाम।
शुद्ध अमूरत देव हो, स्व-प्रदेश चिदराम॥

ॐ ह्रीं अर्हं अमूर्ताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥८५१॥

उमापती त्रिभुवन धनी, राजत भू भरतार।
निजानन्द को आदि ले, महा तुष्ट निरधार॥

ॐ ह्रीं अर्हं उमापतये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥८५२॥

व्यापक लोकालोक में, ज्ञान-ज्योति के द्वार।
लोकशिखर तिष्ठत अचल, करो भक्त उद्धार॥

ॐ ह्रीं अर्हं सर्वगताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।८५३।।

योग प्रबन्ध निवारियो, राग-द्वेष निरवार।
देहरहित निष्कंप हो, भये अक्रिया सार॥

ॐ ह्रीं अर्हं अक्रियाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।८५४।।

सर्वोत्तम अति उच्च गति, जहाँ रहो स्वयमेव।
देव वास है मोक्ष थल, हो देवन के देव॥

ॐ ह्रीं अर्हं देवेष्टजिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।८५५।।

भवसागर के तीर हो, अचलरूप अस्थान।
फिर नहीं जग में जन्म है, राजत हो सुखथान॥

ॐ ह्रीं अर्हं तटस्थाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।८५६।।

ज्यों के त्यों नित थिर रहो, अचलरूप अविनाश।
निजपदमय राजत सदा, स्वयं ज्योति परकाश॥

ॐ ह्रीं अर्हं कूटस्थाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।८५७।।

तत्त्व-अतत्त्व प्रकाशियो, ज्ञाता हो सब भास।
ज्ञानमूर्ति हो ज्ञानघन, ज्ञान ज्योति अविनाश॥

ॐ ह्रीं अर्हं ज्ञात्रे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।८५८।।

पर-निमित्त के योगतैं, व्यापै नहीं विकार।
निज स्वरूप में थिर सदा, हो अबाध निरधार॥

ॐ ह्रीं अर्हं निराबाधाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।८५९।।

चारवाक वा सांख्यमत, झूठी पक्ष धरात।
अल्प मोक्ष नहीं होत है, राजत हो विख्यात॥

ॐ ह्रीं अर्हं निराभावाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।८६०।।

तारण तरण जिहाज हो, अतुल शक्ति के नाथ।
भव वारिधि से पारकर, राखो अपने साथ॥

ॐ ह्रीं अर्हं भववारिधिपारकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।८६१।।

बन्ध-मोक्ष की कहन है, सो भी है व्यवहार।
तुम विवहार अतीत हो, शुद्ध वस्तु निरधार॥

ॐ ह्रीं अर्हं बंधमोक्षरहिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥८६२॥

चारों पुरुषारथ विषैं, मोक्ष पदारथ सार।
तुम साधो परधान हो, सब में सुख आधार॥

ॐ ह्रीं अर्हं मोक्षसाधनप्रधानजिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥८६३॥

कर्म-मैल प्रक्षाल कैं, निज आतम लवलाय।
हो प्रसन्न शिवथल विषैं, अन्तरमल विनशाय॥

ॐ ह्रीं अर्हं कर्मव्याधिविनाशकजिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥८६४॥

निज सुभाव निज वस्तुता, निज सुभाव में लीन।
बन्दूँ शुद्ध स्वभावमय, अन्य कुभाव मलीन॥

ॐ ह्रीं अर्हं निजस्वभावस्थितजिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥८६५॥

निज स्वरूप परकाश है, निरावर्ण ज्यों सूर।
तुमको पूजत भावसों, मोह कर्म को चूर॥

ॐ ह्रीं अर्हं निरावरणसूर्यजिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥८६६॥

निज भावन तें मोक्ष हो, ते ही भाव रहात।
स्वगुण स्वपरजाय में, थिरता भाव धरात॥

ॐ ह्रीं अर्हं स्वरूपरूढ़जिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥८६७॥

सब कुभाव को जीतियो, शुद्ध भये निरमूल।
शुद्धातम कहलात हो, नमत नशे अघ शूल॥

ॐ ह्रीं अर्हं प्रकृतिप्रियाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥८६८॥

निज सन्मति के सन्मति, निज बुध के बुधवान।
शुभ ज्ञाता शुभ ज्ञान हो, पूजत मिथ्या हान॥

ॐ ह्रीं अर्हं विशुद्धसन्मतिजिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥८६९॥

कर्म प्रकृति को अंश बिन, उत्तर हो या मूल।
शुद्धरूप अति तेज घन, ज्यों रवि बिंब अधूल॥

ॐ ह्रीं अर्हं शुद्धरूपजिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥८७०॥

आदि पुरुष आदीश जिन, आदि धर्म अवतार।
आदि मोक्ष दातार हो, आदि कर्म हरतार॥

ॐ ह्रीं अर्हं आद्यवेदसे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥८७१॥

नहिं विकार आवै कभी, रहो सदा सुखरूप।
रोग शोक व्यापै नहीं, निवसैं सदा अनूप॥

ॐ ह्रीं अर्हं निर्विकृतये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥८७२॥

निज पौरुष करि सूर्य सम, हरी तिमिर मिथ्यात।
तुम पुरुषारथ सफल है, तीन लोक विख्यात॥

ॐ ह्रीं अर्हं मिथ्यातिमिरविनाशकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥८७३॥

वस्तु परीक्षा तुम बिना, और झूठ कर खेद।
अंध कूप में आप सर, डारत हैं निरभेद॥

ॐ ह्रीं अर्हं मीमांसकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥८७४॥

होनहार या हो लई, या पइये इस काल।
अस्तिरूप सब वस्तु हैं, तुम जानो यह हाल॥

ॐ ह्रीं अर्हं अस्तिसर्वज्ञाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥८७५॥

जिनवाणी जिनसरस्वती, तुम गुणसों परिपूर।
पूज्य योग तुमको कहैं, करैं मोह मद चूर॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्रुतपूज्याय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥८७६॥

स्वयं स्वरूप आनन्द हो, निजपद रमन सुभाव।
सदा विकसित ही रहैं, बन्दूँ सहज सुभाव॥

ॐ ह्रीं अर्हं सदोत्सवाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥८७७॥

मन इन्द्री जानत नहीं, जाको शुद्ध स्वरूप।
वचनातीत स्वगुणसहित, अमल अकाय अरूप॥

ॐ ह्रीं अर्हं परोक्षज्ञानागम्याय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥८७८॥

जो श्रुतज्ञान कला धरै, तिनको हो तुम इष्ट।
तुमको नित प्रति ध्यावते, नाशे सकल अनिष्ट॥

ॐ ह्रीं अर्हं इष्टपाठकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥८७९॥

निज समरथ कर साधियो, निज पुरुषारथ सार।
सिद्ध भये सब काम तुम, सिद्ध नाम सुखकार॥

ॐ ह्रीं अर्हं सिद्धकर्मक्षयाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥८८०॥

पृथ्वी जल अगनी पवन, जानत इनके भेद।
गुण अनन्त पर्याय सब, सो विभाग परिछेद॥

ॐ ह्रीं अर्हं मिथ्यामतनिवारकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥८८१॥

निज संवेदन ज्ञान में, देखत होय प्रत्यक्ष।
रक्षक हो तिहुँ लोक के, हम शरणागत पक्ष॥

ॐ ह्रीं अर्हं प्रत्यक्षैकप्रमाणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥८८२॥

विद्यमान शिवलोक में, स्वगुण पर्य समेत।
कहैं अभाव कुमती मती, निज-पर धोका देत॥

ॐ ह्रीं अर्हं अस्तिमुक्ताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥८८३॥

तुम आगम के मूल हो, अपर गुरू है नाम।
तुम वानी अनुसार ही, भये शास्त्र अभिराम॥

ॐ ह्रीं अर्हं गुरुश्रुतये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥८८४॥

तीन लोक के नाथ हो, ज्यों सुरगण में इन्द्र।
निजपद रमन स्वभाव धर, नमें तुम्हें देवेन्द्र॥

ॐ ह्रीं अर्हं त्रिलोकनाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥८८५॥

सब स्वभाव अविरुद्ध हैं, निजपर घातक नाहिं।
सहचारी परिणाम हैं, निवसत हैं तुम माहिं॥

ॐ ह्रीं अर्हं स्वस्वभावाविरुद्धजिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥८८६॥

ब्रह्म ज्ञान को वेद कर, भये शुद्ध अविकार।
पूरण ज्ञानी हो नमूँ, लहो वेद को सार॥

ॐ ह्रीं अर्हं ब्रह्मविदे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥८८७॥

शब्द ब्रह्म के ज्ञानतैं, आतम तत्त्व विचार।
शुक्लध्यान मैं लय भए, हो अतर्क अविचार॥

ॐ ह्रीं अर्हं शब्दाद्वैतब्रह्मणे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥८८८॥

सूक्ष्म तत्त्व परकाशकर, सूक्षम कर्म अच्छेद।
मोक्षमार्ग परगट कियो, कहो सु अन्तर भेद।।

ॐ ह्रीं अर्हं सूक्ष्मतत्त्वप्रकाशजिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।८८९।।

तीन शतक त्रेसठ जु है, सब मानै पाखण्ड।
धर्म यथारथ तुम कहो, जिन सबको करि खंड।।

ॐ ह्रीं अर्हं पाखण्डखण्डकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।८९०।।

कर्णरूप करतार हो, कोइक नयके द्वार।
सुरमुनि करि पूजत भए, माननीक सुखकार।।

ॐ ह्रीं अर्हं नयाधीनजे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।८९१।।

केवलज्ञान उपाइकें, तदनन्तर हो मोक्ष।
साक्षात् बड़भाग सैं, पूजूँ इहाँ परोक्ष।।

ॐ ह्रीं अर्हं अन्तकृते नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।८९२।।

शरणागत को पार कर, देत मोक्ष अभिराम।
तारण-तरण सु नाम है, तुम पद करूँ प्रणाम।।

ॐ ह्रीं अर्हं पारकृते नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।८९३।।

भव-समुद्र गम्भीर है, कठिन जास को पार।
निज पुरुषारथ करि तिरे, गहो किनारो सार।।

ॐ ह्रीं अर्हं तीरप्राप्ताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।८९४।।

एक बार जो शरण गहि, ताके हो हितकार।
यातें सब जग जीव के, हो आनन्द दातार।।

ॐ ह्रीं अर्हं परहितस्थिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।८९५।।

रत्नत्रय निज नेत्र सों, मोक्षपुरी पहुँचात।
महादेव हो जगत पितृ, तीन लोक विख्यात।।

ॐ ह्रीं अर्हं रत्नत्रयनेत्रजिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।८९६।।

तीन लोक के नाथ हो, महा ज्ञान भण्डार।
सरल भाव, बिन कपट हो, शुद्ध-बुद्ध अविकार।।

ॐ ह्रीं अर्हं शुद्धबुद्धजिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।८९७।।

निश्चै वा व्यवहार के, हो तुम जाननहार।
वस्तुरूप निज साधियो, पूजत हूँ निरधार॥
ॐ ह्रीं अर्हं ज्ञानकर्मसमुच्चयिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥८९८॥

सुर-नर-पशु न अघावते, सभी ध्यावते ध्यान।
तुमको नित ही ध्यावते, पावैं सुख निर्वाण॥
ॐ ह्रीं अर्हं नित्यतृप्तजिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥८९९॥

कर्म-मैल प्रक्षाल करि, तीनों योग सम्हार।
पाप-शैल चकचूर कर, भये अयोग सुखार॥
ॐ ह्रीं अर्हं पापमलनिवारकजिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥९००॥

सूरज हो निज ज्ञानघन, ग्रहण उपद्रव नाहिं।
बेखटके शिवपंथ सब, दीखत है जिस माहिं॥
ॐ ह्रीं अर्हं निरावरणज्ञानघनजिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥९०१॥

जोग योग संकल्प सब, हरो देह को साथ।
रहो अकंपित थिर सदा, मैं नाऊँ निज माथ॥
ॐ ह्रीं अर्हं उच्छिन्नयोगाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥९०२॥

जोग सुथिरता को हरै, करै आगमन कर्म।
तुम तासौं निर्लेप हो, नशौ मोह मद शर्म॥
ॐ ह्रीं अर्हं योगकृतनिर्लेपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥९०३॥

निज आतम में स्वस्थ हैं, स्वपद योग रमाय।
निर्भय तुम निर-इच्छु हो, नमूँ जोर कर पाँय॥
ॐ ह्रीं अर्हं स्वस्थलयोगरतजिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥९०४॥

महादेव गिरिराज पर, जन्म समै जिम सूर।
योग किरण विकसात हो, शोक तिमिर कर दूर॥
ॐ ह्रीं अर्हं गिरिसयोगजिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥९०५॥

सूक्षम निज परदेश तन, सूक्षम क्रिया परिणाम।
चितवत मन नहिं वच चलैं, राजत हो शिवधाम॥
ॐ ह्रीं अर्हं सूक्ष्मीकृतवपुःक्रियाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥९०६॥

सूक्ष्म तत्त्व परकाश हैं, शुभ प्रिय वचनन द्वार।
भविजन को आनंदकरि, तीन जगत गुरुसार॥

ॐ ह्रीं अर्हं सूक्ष्मवाक्मितयोगाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥९०७॥

कर्म रहित शुद्धात्मा, निश्चल क्रिया रहात।
स्वप्रदेश मय थिर सदा, कृतकृत्य सुख पात॥

ॐ ह्रीं अर्हं निष्कर्मशुद्धात्मजिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥९०८॥

विद्यमान प्रत्यक्ष है, चेतनराय प्रकाश।
कर्म-कालिमासों रहित, पूजत हो अघ नाश॥

ॐ ह्रीं अर्हं भूताभिव्यक्तचेतनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥९०९॥

गृहस्थाचरण सुभेद करि, धर्मरूप रसराश।
एक तुम्हीं हो धर्म करि, पायो शिवपुर वास॥

ॐ ह्रीं अर्हं धर्मरासजिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥९१०॥

सूर्य प्रकाशन मोह तम, हरता हो शुभ पंथ।
पाप क्रिया बिन राजते, महायती निरग्रंथ॥

ॐ ह्रीं अर्हं परमहंसाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥९११॥

बन्ध रहित सर्वस्व करि, निर्मल हो निर्लेप।
शुद्ध सुवर्ण दिपै सदा, नहीं मोह मल लेप॥

ॐ ह्रीं अर्हं परमसंवराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥९१२॥

मेघ पटल बिन सूर्य जिम, दीप्त अनन्त प्रताप।
निरावरण तुम शुद्ध हो, पूजत मिटि है पाप॥

ॐ ह्रीं अर्हं निरावरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥९१३॥

कर्म अंश सब झर गिरे, रहो न एक लगार।
परम शुद्धता धारकै, तिष्ठो हो अविकार॥

ॐ ह्रीं अर्हं परमनिर्जराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥९१४॥

तेज प्रचण्ड प्रभाव है, उदय रूप परताप।
अन्य कुदेव कुआगिया, जुग-जुग धरत कलाप॥

ॐ ह्रीं अर्हं प्रज्वलितप्रभावाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥९१५॥

भये निरर्थक कर्म सब, शक्ति भई है हीन।
तिनको जीते छिनक में, भये सुखी स्वाधीन॥

ॐ ह्रीं अर्हं समस्तकर्मक्षयजिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥९१६॥

कर्म प्रकृतिक रोग सम, जानो हो क्षयकार।
निजस्वरूप आनन्द में, कहो विगार निहार॥

ॐ ह्रीं अर्हं कर्मविस्फोटकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥९१७॥

हीन शक्ति परमाद को, आप कियो हैं अन्त।
निज पुरुषार्थ सुवीर्य यों, सुखी भए सु अनंत॥

ॐ ह्रीं अर्हं अनन्तवीर्यजिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥९१८॥

एकरूप रस स्वाद में, निर आकुलित रहाय।
विविधरूप रस पर निमित, ताको त्याग कराय॥

ॐ ह्रीं अर्हं एकाकाररसास्वादाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥९१९॥

इन्द्री मन के सब विषय, त्याग दिये इक लार।
निजानन्द में मगन हैं, छांडो जग व्यापार॥

ॐ ह्रीं अर्हं विश्वाकाररसाकुलिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥९२०॥

पर सम्बन्धी प्राण बिन, निज प्राणनि आधार।
सदा रहै जीतव्यता, जरा मृत्यु को टार॥

ॐ ह्रीं अर्हं सदाजीविताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥९२१॥

निजरस के सागर धनी, महा प्रिय स्वादिष्ट।
अमर रूप राजैं सदा, सुर मुनि के हो इष्ट॥

ॐ ह्रीं अर्हं अमृताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥९२२॥

पूरण निज आनन्द में, सदा जागते आप।
नहिं प्रमाद में लिप्त हैं, पूजत विनसे पाप॥

ॐ ह्रीं अर्हं जाग्रते नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥९२३॥

क्षीण ज्ञान ज्ञानावरण, करै जीव को नित्य।
सो आवर्ण विनाशियो, रहो अस्वप्न सुवित्य॥

ॐ ह्रीं अर्हं असुप्ताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥९२४॥

स्व-प्रमाण में थिर सदा, स्वयं चतुष्टय सत्य।
निराबाध निर्भय सुखी, त्यागत भाव असत्य॥

ॐ ह्रीं अर्हं स्वप्रमाणस्थिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥९२५॥

श्रमकरि नहिं आकुलित हो, सदा रहो निरखेद।
स्वस्थरूप राजो सदा, वेदो ज्ञान अभेद॥

ॐ ह्रीं अर्हं निराकुलितजिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥९२६॥

मन वच तन व्यापार था, तावत रहो शरीर।
ताको नाश अकंप हो, बन्दूँ मन धीर॥

ॐ ह्रीं अर्हं अयोगिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥९२७॥

जितने शुभ लक्षण कहे, तुममें हैं एकत्र।
तुमको बंदूँ भाव सो, हरो पाप सर्वत्र॥

ॐ ह्रीं अर्हं चतुरशीतिलक्षणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥९२८॥

तुम लक्षण सूक्षम महा, इन्द्रिय विषय अतीत।
वचन अगोचर गुण धरो, निर्गुण कहत सुनीत॥

ॐ ह्रीं अर्हं अगुणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥९२९॥

अगुरुलघू पर्याय के, भेद अनन्तानन्त।
गुण अनंत परिणामकरि, नित्यनमें तुम 'सन्त'॥

ॐ ह्रीं अर्हं अनंतानन्तपर्यायाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥९३०॥

राग-द्वेष के नाशतें, नहीं पूर्व संस्कार।
निज सुभाव में थिर रहैं, अन्य वासना टार॥

ॐ ह्रीं अर्हं पूर्वसंस्कारनाशकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥९३१॥

गुण चतुष्ट में वृद्धता, भई अनन्तानन्त।
तुम सम और न जगत में, सदा रहो जयवंत॥

ॐ ह्रीं अर्हं अनन्तचतुष्टयवृद्धाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥९३२॥

आर्ष कथित, उत्तम वचन, धर्म मार्ग अरहन्त।
सो सब नाम कहो तुम्हीं, शिवमारग के सन्त॥

ॐ ह्रीं अर्हं प्रियवचनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥९३३॥

महाबुद्धि के धाम हो, सूक्षम शुद्ध अवाच्य।
चार ज्ञान नहिं गम्य हो, वस्तुरूप सो सांच्य॥

ॐ ह्रीं अर्हं निरवचनीयाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥९३४॥

सूक्ष्म तैं सूक्षम विषैं, तुमको है परवेश।
आपै सूक्षम रूप हो, राजत निज परदेश॥

ॐ ह्रीं अर्हं अनीशाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥९३५॥

कर्म प्रबन्ध सुघन पटल, ताकी छांय निवार।
रविघन ज्योति प्रकट भई, पूरणता विधि धार॥

ॐ ह्रीं अर्हं अनणपर्यायाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥९३६॥

निज प्रदेश में थिर सदा, योग निमित्त निवार।
अचल शिवालय के विषैं, तिष्ठैं सिद्ध अपार॥

ॐ ह्रीं अर्हं स्थेयसे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥९३७॥

सन्त मन प्रिय हो अति, सज्जन वल्लभ जान।
मुनि जन मन प्यारे सही, नमत होत कल्याण॥

ॐ ह्रीं अर्हं प्रेष्ठाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥९३८॥

काल अनन्तानन्त लौं, करैं शिवालय वास।
अव्यय अविनाशी सुथिर, स्वयं ज्योति परकाश॥

ॐ ह्रीं अर्हं स्थिरजिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥९३९॥

स्व-आतम में वास है, रुलत नहीं संसार।
ज्यों के त्यों निश्चल सदा, बंदत भवदधि पार॥

ॐ ह्रीं अर्हं निजात्मतत्त्वनिष्ठाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥९४०॥

सुभग सरावन योग्य हैं, उत्तम भाव धराय।
तीन लोक में सार है, मुनिजन बंदित पाय॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्रेष्ठभवधारकजिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥९४१॥

सब के अग्रेसर भये, सब के हो सिरताज।
तुमसे बड़ा न और है, सबके कर हो काज॥

ॐ ह्रीं अर्हं ज्येष्ठाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥९४२॥

स्व-प्रदेश निष्कम्प हैं, द्रव्य-भाव विधि नाश।
इष्टानिष्ट निमित धरैं, निज आनन्द विलास॥

ॐ ह्रीं अर्हं निष्कंपप्रदेशजिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥९४३॥

उचित क्षमादिक अर्थ सब, सत्य सुन्याय सुलब्ध।
तिन सबके स्वामी नमूँ, पूरण सुखी सुअब्ध॥

ॐ ह्रीं अर्हं उत्तमक्षमादिगुणाब्धिजिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥९४४॥

महा कठिन दुःशक्य है, यह संसार निकास।
तुम पायो पुरुषार्थ करि, लहो स्वलब्धि अवास॥

ॐ ह्रीं अर्हं पूज्यपादजिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥९४५॥

परमारथ निज गुण कहे, मोक्ष प्राप्ति में होय।
स्वारथ इन्द्रिय जन्य है, सो तुम इनको खोय॥

ॐ ह्रीं अर्हं परमार्थगुणनिधानाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥९४६॥

पर-निमित्त या भेद करि, या उपचरित कहाय।
सो तुम में सब लय भये, मानों सुप्त कराय॥

ॐ ह्रीं अर्हं व्यवहारसुप्ताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥९४७॥

स्व-पद में नित रमन हैं, अप्रमाद अधिकाय।
निज गुण सदा प्रकाश है, अतुली बली नमूँ पाय॥

ॐ ह्रीं अर्हं अतिजागरूकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥९४८॥

सकल उपद्रव मिटि गये, जे थे पर की साथ।
निर्भय सदा सुखी भये, बंदूँ नमि निज माथ॥

ॐ ह्रीं अर्हं अतिसुस्थिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥९४९॥

कहै हुवे हो नेमसें परमाराध्य अनादि।
तुम महातमा जगत के, और कुदेव कुवादि॥

ॐ ह्रीं अर्हं उदितोदितमाहात्म्याय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥९५०॥

तत्त्वज्ञान अनुकूल सब, शब्द प्रयोग विचार।
तिसके तुम अध्याय हो, अर्थ प्रकाशन हार॥

ॐ ह्रीं अर्हं तत्त्वज्ञानानुकूलजिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥९५१॥

ना काहू सों जन्म हो, ना काहू सों नाश।
स्वयंसिद्ध बिन पर-निमित्त, स्व-स्वरूप परकाश॥

ॐ ह्रीं अर्हं अकृत्रिमाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥९५२॥

अप्रमाण अत्यन्त है, तुम सन्मति परकाश।
तेजरूप उत्सव मई, पाप तिमिर को नाश॥

ॐ ह्रीं अर्हं अमेयमहिम्ने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥९५३॥

रागादिक मल को हरैं, तनक नहीं आवास।
महा विशुद्ध अत्यंत हैं, हरो पाप-अहि-डाँस॥

ॐ ह्रीं अर्हं अत्यन्तशुद्धाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥९५४॥

स्वयंसिद्ध भरतार हो, शिवकामनि के संग।
रमण भाव निज योग में, मानों अति आनंद॥

ॐ ह्रीं अर्हं सिद्धिस्वयंवराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥९५५॥

विविध प्रकार न धरत हैं, है अजन्म अव्यक्त।
सूक्षम सिद्ध समान हैं, स्वयं स्वभाव सव्यक्त॥

ॐ ह्रीं अर्हं सिद्धानुजाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥९५६॥

मोक्षरूप शुभ वास के, आप मार्ग निरखेद।
भविजन सुलभ गमन करैं, जगत वास को छेद॥

ॐ ह्रीं अर्हं शिवपुरीपंथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥९५७॥

गुण समूह अत्यन्त हैं, कोई न पावै पार।
थकित रहे श्रुतकेवली, निज बल कथन अगार॥

ॐ ह्रीं अर्हं अनन्तगुणसमूहजिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥९५८॥

इक अवगाह प्रदेश में, हो अवगाह अनन्त।
पर उपाधि निग्रह कियो, मुख्य प्रधान अनंत॥

ॐ ह्रीं अर्हं पर-उपाधिनिग्रहकारकजिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥९५९॥

स्वयंसिद्ध निज वस्तु हो, आगम इन्द्रिय ज्ञान।
कर्त्तादिक लक्षण नहीं, स्वयं स्वभाव प्रमान॥

ॐ ह्रीं अर्हं स्वयंसिद्धजिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥९६०॥

हो प्रछन्न इन्द्रिय अगम, प्रकट न जाने कोय।
सकल अगुण को लय कियो, निज आतम में खोय॥

ॐ ह्रीं अर्हं इन्द्रियागम्यजिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥९६१॥

निज गुण करि निज पोषियो, सकल क्षुद्रता त्याग।
पूरण निजपद पाय करि, तिष्ठत हो बड़भाग॥

ॐ ह्रीं अर्हं पुष्टाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥९६२॥

ब्रह्मचर्य पूरण धरैं, निजपद रमता धार।
सहस अठारह भेद करि, शील सुभाव सु सार॥

ॐ ह्रीं अर्हं अष्टादशसहस्रशीलेश्वराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥९६३॥

महा पुन्य शिवपद कमल, ताके दल विकसान।
मुनि मन भ्रमर रमण सुथल, गंधानंद महान॥

ॐ ह्रीं अर्हं पुण्यसंकुलाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥९६४॥

मति श्रुत अवधि त्रिज्ञान, युत स्वयंबुद्ध भगवान।
कृतयुग में मुनि व्रत धरो, शिव साधक परधान॥

ॐ ह्रीं अर्हं व्रताग्रयुग्याय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥९६५॥

परम शुक्ल शुभ ध्यान में, तुम सेवन हितकार।
'सन्त' उपासक आपके कर्म-बंध छुटकार॥

ॐ ह्रीं अर्हं परमशुक्लध्यानिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥९६६॥

क्षारवार इस जलधि को, शीघ्र कियो तुम अन्त।
गोखुरकार उलंघियो, धरो स्व भुज बलवंत॥

ॐ ह्रीं अर्हं संसारसमुद्रतारकजिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥९६७॥

एक समय में गमन कर, कियो शिवालय वास।
काल अनंत अचल रहो, मेटो जग भ्रम त्रास॥

ॐ ह्रीं अर्हं क्षेपिष्ठाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥९६८॥

पंचाक्षर लघु जाप में, जितना लागे काल।
अंतिम पाया शुक्ल का, ध्याय बसै जग भाल॥

ॐ ह्रीं अर्हं पञ्चलध्वक्षरस्थितये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥९६९॥

प्रकृति त्रयोदश शेष हैं, जब तक मोक्ष न होय।
सर्व प्रकृति थिति मेटकैं, पहुँचे शिवपुर सोय॥

ॐ ह्रीं अर्हं त्रयोदशप्रकृतिस्थितिविनाशकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति० ॥९७०॥

तेरह विधि चारित्र के, तुम हो पूरण शूर।
निज पुरुषारथ करि लियो, शिवपुर आनंद पूर॥

ॐ ह्रीं अर्हं त्रयोदशचारित्रपूर्णताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥९७१॥

निज सुख में अन्तर नहीं, परसों हानि न होय।
स्वस्थरूप परदेश जिन, तिन पूजत हूँ सोय॥

ॐ ह्रीं अर्हं अच्छेद्यजिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥९७२॥

निज पूजनतें देत हो, शिव संपति अधिकाय।
यातें पूजत योग्य हो, पूजूँ मन-वच-काय॥

ॐ ह्रीं अर्हं शिवदात्रीजिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥९७३॥

मोह महा परचण्ड बल, सकै न तुमको जीत।
नमूँ तुम्हें जयवंत हो, धार सु उर में प्रीत॥

ॐ ह्रीं अर्हं अजयजिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥९७४॥

यग विधान में जजत ही, आप मिले निधि रूप।
तुम समान नहीं और धन, हरत दरिद दुखकूप॥

ॐ ह्रीं अर्हं याज्याय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥९७५॥

लोकोत्तर सम्पद विभव, है सरवस्व अघाय।
तुमसे अधिक न और है, सुख विभूति शिवराय॥

ॐ ह्रीं अर्हं अनर्घ्यपरिग्रहाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥९७६॥

तुमरो आह्वानन यजन, प्रासुक विधि से योग।
त्रिजग अमोलिक निधि सही, देत पर्म सुखभोग॥

ॐ ह्रीं अर्हं अनर्घ्यहेतवे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥९७७॥

एक देश मुनिराज हैं, सर्व देश जिनराज।
भव-तन-भोग विरक्तता, निर्ममत्त्व सुख साज॥

ॐ ह्रीं अर्हं परमनिष्पृहाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥९७८॥

परदुख में दुख हो जहाँ, मोह प्रकृति के द्वार।
दया कहैं तिसको सुमति, सो तुम मोह निवार॥
ॐ ह्रीं अर्हं अत्यन्तनिर्मोहाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥९७९॥

स्वयंबुद्ध भगवान हो, सुर मुनि पूजन योग।
बिन शिक्षा शिवमार्ग को, साधो हो धरि योग॥
ॐ ह्रीं अर्हं अशिष्याय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥९८०॥

तुम एकत्व अन्यत्व हो, परसों नहीं सम्बन्ध।
स्वयंसिद्ध अविरुद्ध हो, नाशो जगत प्रबन्ध॥
ॐ ह्रीं अर्हं परसंबंधविनाशकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥९८१॥

काहू को नहिं यजन करि, गुरु का नहिं उपदेश।
स्वयंबुद्ध स्व-शक्ति हो, राजो शुद्ध हमेश॥
ॐ ह्रीं अर्हं अदीक्षाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥९८२॥

तुम त्रिभुवन के पूज्य हो, यजो न काहू और।
निजहित में रत हो सदा, पर-निमित्त को छोर॥
ॐ ह्रीं अर्हं त्रिभुवनपूज्याय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥९८३॥

अरहन्तादि उपासना, मोह उदयसों होय।
स्वयं ज्ञान में लय भए, मोह कर्म को खोय॥
ॐ ह्रीं अर्हं अदीक्षकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥९८४॥

गौण रूप परिणाम है, मुख ध्रुवता गुण धार।
अक्षय अविनश्वर स्वपद, स्वस्थ सुथिर अविकार॥
ॐ ह्रीं अर्हं अक्षयाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥९८५॥

सूक्षम शुद्ध स्वभाव है, लहै न गणधर पार।
इन्द्र तथा अहमिन्द्र सब, अभिलाषित उरधार॥
ॐ ह्रीं अर्हं अगम्याय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥९८६॥

अचल शिवालय के विषैं, टंकोत्कीर्ण समान।
सदा विराजो सुखसहित, जगत भ्रमण को हान॥
ॐ ह्रीं अर्हं अगमकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥९८७॥

रमण योग छद्मस्थ के, नहिं अलिंग सरूप।
पर प्रवेश बिन शुद्धता, धारत सहज अनूप॥

ॐ ह्रीं अर्हं अरम्याय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥९८८॥

पर-पदार्थ इच्छुक नहीं, इष्टानिष्ट निवार।
सुथिर रहो निज आत्म में, बन्दत हूँ हितधार॥

ॐ ह्रीं अर्हं निजात्मसुस्थिराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥९८९॥

जाको पार न पाइयो, अवधि रहित अत्यन्त।
सो तुम ज्ञान महान है, आशा राखे 'सन्त'॥

ॐ ह्रीं अर्हं ज्ञाननिर्भराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥९९०॥

मुनिजन जिन सेवन करैं, पावें निजपद सार।
महा शुद्ध उपयोग मय, वरतत हैं सुखकार॥

ॐ ह्रीं अर्हं महायोगीश्वराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥९९१॥

भाव शुद्ध सो देह में, द्रव्य शुद्ध बिन देह।
कर्म वर्गणा बिन लिये, पूजत हूँ धरि नेह॥

ॐ ह्रीं अर्हं द्रव्यशुद्धाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥९९२॥

पंच प्रकार शरीर को, मूल कियो विध्वंश।
स्व प्रदेशमय राजते, पर मिलाप नहीं अंश॥

ॐ ह्रीं अर्हं अदेहाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥९९३॥

जाको फेर न जन्म है, फिर नाहीं संसार।
सो पंचमगति शिवमई, पायो तुम निरधार॥

ॐ ह्रीं अर्हं अपुनर्भवाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥९९४॥

सकल इन्द्रियाँ व्यर्थ करि, केवलज्ञान सहाय।
सब द्रव्यनि को ज्ञान है, गुण अनन्त पर्याय॥

ॐ ह्रीं अर्हं ज्ञानैकविदे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥९९५॥

जीव मात्र निज धन सहित, गुण समूह मणि खान।
अन्य विभाव विभव नहीं, महा शुद्धता अविकार॥

ॐ ह्रीं अर्हं जीवधनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥९९६॥

सिद्ध भये परसिद्ध तुम, निज पुरुषारथ साध।
महा शुद्ध निज आत्ममय, सदा रहे निरबाध॥

ॐ ह्रीं अर्हं सिद्धाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥९९७॥

लोकशिखर पर थिर भए, ज्यों मन्दिर मणि कुम्भ।
निजशरीर अवगाह में, अचल सुथान अलुम्भ॥

ॐ ह्रीं अर्हं लोकाग्रस्थिताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥९९८॥

सहज निरामय भेद बिन, निराबाध निस्संग।
एक रूप सामान्य हो, निज विशेष मई अंग॥

ॐ ह्रीं अर्हं निर्द्वन्द्वाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥९९९॥

जे अविभाग प्रछेद हैं, इक गुण के अनन्त।
तुममें पूरण गुण सही, धरो अनन्तानन्त॥

ॐ ह्रीं अर्हं अनंतानंतगुणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥१०००॥

पर मिलाप नहीं लेश है, स्वप्रदेशमय रूप।
क्षयोपशम ज्ञानी तुम्हें, जानत नहीं स्वरूप॥

ॐ ह्रीं अर्हं आत्मरूपाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥१००१॥

क्षमा आत्मको भाव है, क्रोध कर्मसों घात।
सो तुम कर्म खिपाइयो, क्षमा सुभाव धरात॥

ॐ ह्रीं अर्हं महाक्षमाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥१००२॥

शील सुभाव सु आत्मको, क्षोभ रहित सुखदाय।
निर आकुलता धार है, बंदूँ तिनके पाँय॥

ॐ ह्रीं अर्हं महाशीलाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥१००३॥

शशि स्वभाव ज्यों शांतिधर, और न शांति धराय।
आप शांति पर-शांतिकर, भवदुख दाह मिटाय॥

ॐ ह्रीं अर्हं महाशांताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥१००४॥

तुम सम को बलवान है, जीत्यो मोह प्रचंड।
धरो अनन्त स्व-वीर्य को, निजपद सुथिर अखंड॥

ॐ ह्रीं अर्हं अनंतवीर्यात्मकाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥१००५॥

लोकालोक विलोकियो, संशय बिन इकबार।
खेद रहित निश्चल सुखी, स्वच्छ आरसी सार॥

ॐ ह्रीं अर्हं लोकज्ञाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥१००६॥

निरावर्ण स्वै गुण सहित, निजानन्द रस भोग।
अव्यय अविनाशी सदा, अजर अमर शुभ योग॥

ॐ ह्रीं अर्हं निरावरणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥१००७॥

परम मुनीश्वर ध्यान धर, पावैं निजपद सार।
ज्यों रविबिंब प्रकाशकर, घट-पट सहज निहार॥

ॐ ह्रीं अर्हं ध्येयगुणाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥१००८॥

कवलाहारी कहत है, महा मूढ़ मति मंद।
अशन असाता पीर बिन, आप भये सुखकंद॥

ॐ ह्रीं अर्हं अशनदग्धाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥१००९॥

लोक शीश छवि देत हो, धरो प्रकाश अनूप।
बुधजन आदर जोग हो, सहज अकम्प सरूप॥

ॐ ह्रीं अर्हं त्रिलोकमणये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥१०१०॥

महा गुणन की रास हो, लोकालोक प्रजन्त।
सुर मुनि पार न पावते, तुम्हें नमैं नित 'सन्त'॥

ॐ ह्रीं अर्हं अनंतगुणप्राप्ताय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥१०११॥

परम सुगुण परिपूर्ण हो, मलिन भाव नहीं लेश।
जगजीवन आराध्य हो, हम तुम यही विशेष॥

ॐ ह्रीं अर्हं परमात्मने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥१०१२॥

केवल ऋद्धि महान है, अतिशय युत तप सार।
सो तुम पायो सहज ही, मुनिगण बंदनहार॥

ॐ ह्रीं अर्हं महाऋषये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥१०१३॥

भूत भविष्यत् काल को, कभी न होवे अन्त।
नितप्रति शिवपद पाय-कर, होत अनंतानंत॥

ॐ ह्रीं अर्हं अनन्तसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥१०१४॥

निर्भय निर-आकुलित हो, स्वयं स्वस्थ निरखेद।
काहू विधि घबराहट नहीं, निज आनंद अभेद॥

ॐ ह्रीं अर्हं अक्षोभाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥१०१५॥

जो गुण-गुणी सुभेद करि, सो जड़ मती अजान।
निज गुण-गुणी सु एकता, स्वयंबुद्ध भगवान॥

ॐ ह्रीं अर्हं स्वयंबुद्धाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥१०१६॥

निरावरण निज ज्ञान में, सर्व स्पष्ट दिखाय।
संशयविन नहिं भरम है, सुथिर रहो सुखपाय॥

ॐ ह्रीं अर्हं निरावरणज्ञानाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥१०१७॥

राग-द्वेष के अनंत में, मत्सर भाव कहात।
सो तुम नासो मूल ही, रहै कहाँ सों पात॥

ॐ ह्रीं अर्हं वीतमत्सराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥१०१८॥

अणुवत् लोकालोक है, जाके ज्ञान मंझार।
सो तुम ज्ञान अथाह है, बंदूँ मैं चित धार॥

ॐ ह्रीं अर्हं अनन्तानन्तज्ञानाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥१०१९॥

हस्तरेख सम देख हो, लोकालोक सरूप।
सो अनंत दर्शन धरो, नमत मिटै भ्रम-कूप॥

ॐ ह्रीं अर्हं अनतानन्तदर्शनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥१०२०॥

तीन लोक का पूज्यपन, प्रकट कहैं दिखलाय।
तीनलोक शिरवास है, लोकोत्तम सुखदाय॥

ॐ ह्रीं अर्हं लोकशिखरवासिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥१०२१॥

निजपद में लवलीन हैं, निज रस स्वाद अघाय।
परसों इह रस गुप्त है, कोटि यत्न नहीं पाय॥

ॐ ह्रीं अर्हं सगुप्तात्मने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥१०२२॥

कर्म प्रकृति को मूल नहीं, द्रव्य रूप यह भाव।
महा स्वच्छ निर्मल दिपै, ज्यों रवि मेघ अभाव॥

ॐ ह्रीं अर्हं पूतात्मने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥१०२३॥

हीन अभाव न शक्ति है, कर्मबन्ध को नाश।
उदय भये तुम गणसकल, महा विभव की राश॥

ॐ ह्रीं अर्हं महोदयाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥१०२४॥

पाप रूप दुख नाशियो, मोक्ष रूप सुख रास।
दासन प्रति मंगलकरण, स्वयं 'सन्त' है दास॥

ॐ ह्रीं अर्हं महामंगलात्मकजिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥१०२५॥

(दोहा)

कहैं कहाँलो तुम सुगुण, अंशमात्र नहीं अन्त।
मंगलीक तुम नाम ही, जानि भजै नित 'सन्त'॥

ॐ ह्रीं पूर्णस्वगुणजिनाय नमः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा...।

अथ जयमाला

(दोहा)

होनहार तुम गुण कथन, जीभ द्वार नहिं होय।
काष्ठ पाँवसैं अनिल थल, नाप सकै नहिं कोय॥१॥

सूक्षम शुद्ध-स्वरूप का, कहना है व्यवहार।
सो व्यवहारातीत हैं, यातें हम लाचार॥२॥

पै जो हम कछु कहत हैं, शान्ति हेत भगवन्त।
बार बार थुति करन में, नहिं पुनरुक्त भनन्त॥३॥

(पद्धड़ी)

जय स्वयं शक्ति आधार योग, जय स्वयं स्वस्थ आनंद भोग।
जय स्वयं विकास आभास भास, जय स्वयंसिद्ध निजपद निवास॥४॥

जय स्वयंबुद्ध संकल्प टार, जय स्वयं शुद्ध रागादि जार।
जय स्वयं स्वगुण आचार धार, जय स्वयं सुखी अक्षय अपार॥५॥

जय स्वयं चतुष्टय राजमान, जय स्वयं अनन्त सुगुण निधान।
जय स्वयं स्वस्थ सुस्थिर अयोग, जय स्वयं स्वरूप मनोग योग॥६॥

जय स्वयं स्वच्छ निज ज्ञान पूर, जय स्वयं वीर्य रिपु वज्र चूर।
जय महामुनिन आराध्य जान, जय निपुणमती तत्त्वज्ञ मान॥७॥

जय सन्तनि मन आनन्दकार, जय सज्जन चित वल्लभ अपार।
जय सुरगण गावत हर्ष पाय, जय कवि यश कथन न करि अघाय॥८॥

तुम महातीर्थ भवि तरण हेत, तुम महाधर्म उद्धार देत।
तुम महामंत्र विष विघ्न जार, अघ रोग रसायन कहो सार॥९॥

तुम महाशास्त्र का मूल ज्ञेय, तुम महा तत्त्व हो उपादेय।
तिहुँ लोक महामंगल सु रूप, लोकत्रय सर्वोत्तम अनूप॥१०॥

तिहुँ लोक शरण अघ-हर महान, भवि देत परमपद सुख निधान।
संसार महासागर अथाह, नित जन्म-मरण धारा प्रवाह॥११॥

सो काल अनन्त दियो बिताय, तामें झकोर दुख रूप खाय।
मो दुखी देख उर दया आन, इम पार करो कर ग्रहण पान॥१२॥

तुम ही हो इस पुरूषार्थ जोग, अरु है अशक्त करि विषय रोग।
सुर नर पशु दास कहें अनन्त, इनमें से भी इक जान 'सन्त'॥१३॥

(घृत्ता-कवित्त)

जय विघन जलधि जल हनन पवन बल सकल पाप मल जारन हो।
जय मोह उपल हन वज्र असल दुख अनिल ताप जल कारन हो॥
ज्यूं पंगु चढै गिर, गूंग भरे सुर, अभुज सिन्धु तर कष्ट भरै।
त्यों तुम थुति काम महा लज ठाम, सु अंत 'सन्त' परणाम करै॥

ॐ ह्रीं अर्हं चतुर्विंशत्यधिकसहस्रगुणयुक्त सिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

इति पूर्णार्घ्यम्

(दोहा)

तीन लोक चूड़ामणि, सदा रहो जयवन्त।
विघ्नहरण मंगलकरन, तुम्हें नमें नित 'सन्त'॥१॥

इत्याशीर्वादः।

શ્રી દિગંબર જૈન સ્વાધ્યાયમંદિર ટ્રસ્ટ, સોનગઢ - ૩૬૪૨૫૦

(अडिल्ल)

पूरण मंगलरूप महा यह पाठ है;
सरस सुरुचि सुखकार भक्ति को ठाठ है।
शब्द-अर्थ में चूक होय तो हो कहीं;
थुतिवाचक सब शब्द-अर्थ यामें सही॥१॥

जिनगुणकरण आरंभ हास्य को धाम है;
वायस का नहिं सिंधु उतीरण काम है।
पै भक्तनि की रीति सनातन है यही;
क्षमा करो भगवंत शांति पूरणमही॥२॥

॥ इत्याशीर्वादः ॥

परिपुष्पांजलिं क्षिपेत्।

(यहाँ पर १०८ बार 'ॐ ह्रीं अर्हं अ सि आ उ सा नमः' मंत्र का जाप करें।)

इति श्री सिद्धचक्रपाठ भाषा—कवि श्री सन्तलालजी कृत समाप्त।

Shri Digambar Jain Swadhyay Mandir Trust, Songadh - 364250

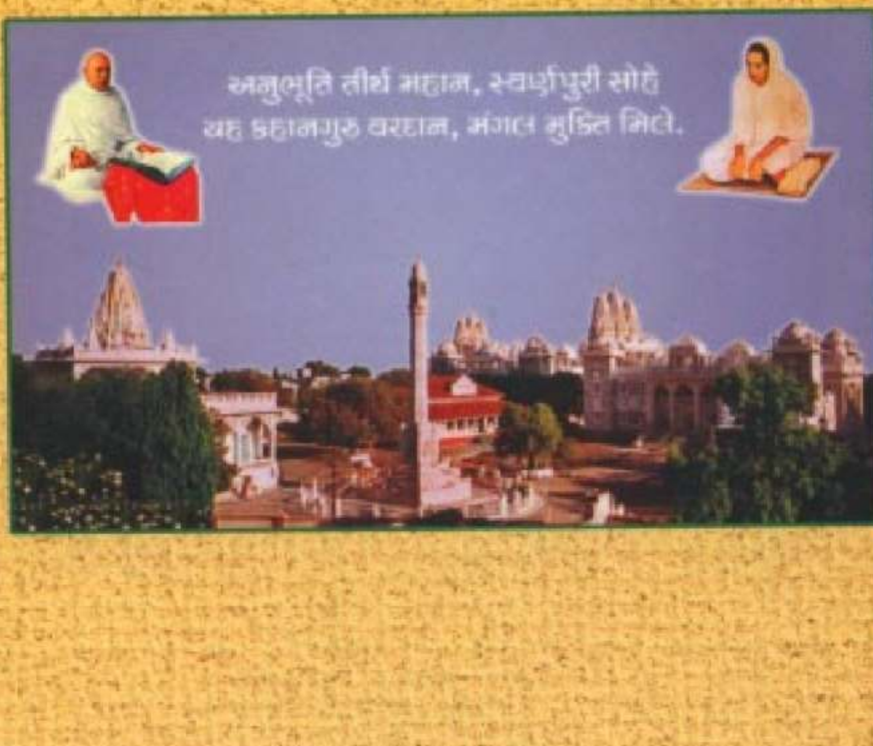
अनुभूति तीर्थ महान, स्वर्णपुरी सोहे
यह कहानगुरु वरदान, मंगल मुक्ति मिले.